बुनियादी अध्यापकों के लिये

डा० सलामतुल्ला,
एम० एस-सी० बी० टी० (अलीगढ़)
ई-डी० डी० (कोलम्बिया)
प्रोफ़ेसर, टीचर्स कालेज,
जामिया मिलिया इस्लामिया,
नयी दिल्ली।

चित्रकार :
नरेन्द्र सेठी, दिल्ली।

प्रकाशक:
पंजाबी पब्लिशर्ज़, जालन्धर।

मुद्रक:
हिन्द समाचार प्रेस, जालन्धर।

मूल्य: तीन रुपया आठ आने।

विषय-सूची

लेखक की अन्य रचनाएँ :—

1. हम कैसे पढ़ाएं (उर्दू)
2. Examinations in India.
3. Basic Way to Arithmetic.
4. बेसिक अध्यापकों के लिए (पंजाबी)

भूमिका

बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा की योजना 1937 ई० में महात्मा गांधी जी ने देश के सामने रखी थी। 1947 ई० में जब भारत स्वतन्त्र हुआ, इस योजना को क्रियात्मक रूप धारण किये हुये दस वर्ष हो चुके थे। इस समय में वैसे तो देश में बहुत-सी सरकारी और निजी संस्थाओं ने बुनियादी पाठशालाएँ खोली थीं परन्तु सरकार की ओर से इस योजना को यह दर्जा प्राप्त न हो सका कि पूरे देश की प्रारम्भिक अनिवार्य शिक्षा का रूप इसी योजना के अनुसार ढाला जाता। देश की स्वतन्त्रता के बाद सरकार ने बुनियादी शिक्षा की हैसियत को मान लिया है कि देश में हर जगह प्रारम्भिक शिक्षा का प्रबन्ध बुनियादी पाठशालाओं में होगा। हमारे देश के नए संविधान के अनुसार सरकार की जिम्मेवारी है कि संविधान के लागू होने के दस वर्ष के अन्दर अथवा 1960 ई० तक भारत के सारे बच्चों को 14 वर्ष की आयु तक मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध किया जावे। इसका अर्थ यह है कि सारे देश में शीघ्र ही बुनियादी पाठशालाओं का एक जाल सा फैल जायगा।

देश के भिन्न-भिन्न प्रान्तों में इधर कई वर्षों से लगातार बुनियादी पाठशालाएं खोली जा रही हैं और पुराने प्राइमरी स्कूलों को बुनियादी पाठशालाओं में तबदील किया जा रहा है परन्तु अभी तक बहुत कम स्थानों

पर वास्तव में बुनियादी शिक्षा होती है। पाठशाला का केवल नाम बदल गया है। शिक्षा उसी तरह पुराने ढर्रे पर हो रही है। इस का कारण यह है कि पुरानी डगर पर चलना आसान काम है। वह समतल होती है, इस में कोई रुकावट नहीं होती। परन्तु जो लोग पिटे हुए रास्ते पर नहीं चलना चाहते बल्कि अपने लिए स्वयं नया रास्ता बनाने का साहस रखते हैं, उन्हें भान्ति-भान्ति की रुकावटों और कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। बुनियादी शिक्षा का काम कुछ इसी प्रकार का है। अभी तक काम करने-वालों के सामने न तो वह स्थान स्पष्ट है, जहां पहुँचना है, न रास्ते का पूरा चित्र। फिर एक बड़ी कठिनाई यह भी है कि यात्रा के साधन भी मौजूद नहीं हैं। बहुत-सी बुनियादी पाठशालाएं खुल तो गई हैं और खुलती जा रही हैं परन्तु बच्चों को इन पाठशालाओं में जो कुछ सिखाया जाता है और जिस तरह सिखाया जाता, वह बुनियादी शिक्षा से बहुत कम सम्बन्ध रखता है। इन पाठशालाओं में अधिक से अधिक जो परिवर्तन हुआ है, वह यह है कि कुछ बुरा-भला दस्तकारी का प्रबन्ध कर दिया गया है परन्तु दस्तकारी का न तो शिक्षा का साधन बनाने का प्रयत्न किया गया और न उसे ठीक ढंग से सिखाया जाता है। नतीजा यह है कि जो वस्तुएं तैयार होती हैं, वे घटिया और नाकाफ़ी होती हैं जिस से दस्तकारी की शिक्षा का उद्देश्य पूरा नहीं होता है। दस्तकारी के अतिरिक्त शेष विषयों की शिक्षा किताबी ढंग से दी जाती है। इसका बच्चे के अनुभव और जीवन से कोई लगाव नहीं होता। बुनियादी पाठशालाओं में बच्चों के पढ़ने के लिए जो पुस्तकें स्वीकृत की गई हैं (जैसे-"बेसिक रीडर", "बेसिक हिसाब", "बेसिक साईंस" आदि) उनमें से अधिकतर में जो बातें दी गई हैं और जिस ढंग से दी गई हैं, वे पुरानी किताबों से भिन्न नहीं हैं। केवल किताब का टाइटल बदल गया है, ठीक उसी भान्ति जैसे पाठशाला का साईन-बोर्ड बदल गया है।

इस का बड़ा कारण यह है कि ऐसी पाठ्य-सामग्री और किताबों की बहुत कमी है जो बुनियादी शिक्षा का काम करनेवालों को ठीक रास्ता

दिखा सकें। अभी-अभी इस मैदान में कुछ सरकारी और निजी संस्थाओं ने कदम उठाया है। आज आवश्यक है कि इस काम को बड़ी तेजी के साथ किया जाए ताकि उन अध्यापकों के लिए, जो बुनियादी पाठशालाओं में काम कर रहे हैं, और उनके लिये भी जो बुनियादी ट्रेनिंग पाठशालाओं और कालिजों में ट्रेनिंग ले रहे हैं, शीघ्र से शीघ्र पर्याप्त लिट्रेचर (साहित्य) तैयार हो जाए, जिस से वे बुनियादी शिक्षा को ठीक दृष्टि से देख और समझ सकें और उन्हें अपने दैनिक काम में सहायता मिल सके।

प्रस्तुत पुस्तक इसी बात को सामने रख कर लिखी गई है। इसकी नींव न केवल वह अनुभव है जो लेखक ने बुनियादी शिक्षा के क्षेत्र में पिछले 17 वर्ष के काल में प्राप्त किया है अपितु वह दृष्टि भी है जो उस में बहुत से शिक्षा-शास्त्रियों की पुस्तकों के अध्ययन से पैदा हुई है। लेखक उन सब का धन्यवादी है।

आशा है कि यह पुस्तक न केवल बुनियादी शिक्षा का काम करने वालों के लिए लाभकारी सिद्ध होगी अपितु साधारणतया सभी अध्यापक इस से लाभ उठा सकेंगे। यदि बच्चे को अच्छा मनुष्य बनाने में इस पुस्तक ने कुछ भी मदद की तो लेखक समझेगा कि उसे उसके परिश्रम का फल मिल गया।

जामआ नगर
अगस्त 1950

सलामतुल्ला

बुनियादी तालीम और अध्यापक

आपने बुनियादी तालीम का काम अपने हाथ में ले लिया है तो आप इस काम की जिम्मेवारियों को भी समझ लीजिए। बुनियादी तालीम की हैसियत कौमी तालीम की है। यह तालीम पूरी क़ौम के लिए है। भारत के प्रत्येक बच्चे का अधिकार है कि वह इस तालीम से लाभ उठाये। इसका प्रबन्ध करना राज्य का कर्त्तव्य है। हमारी सरकार ने यह बात मान ली है कि छः से चौदह वर्ष तक की आयु के सारे बच्चों की तालीम मुफ्त और अनिवार्य होगी और इसका ढाँचा उन सिद्धान्तों के अनुसार बनाया जाएगा जिन पर बुनियादी तालीम की योजना में ज़ोर दिया गया है। देश के वर्तमान साधनों को देखते हुए ऐसा लगता है कि बहुत दिनों तक अधिकतर बच्चों की तालीम १४ वर्ष की आयु में समाप्त हो जाएगी और बहुत कम बच्चे ऐसे होंगे जो बुनियादी पाठशाला से निकल कर इसके बाद की तालीम से लाभ उठा सकें। इस लिए यह आवश्यक है कि बुनियादी तालीम के आठ साल के समय में बच्चों में इतना ज्ञान, कला-कौशल, समझ-बूझ, अभिरुचि, आदतें, शौक आदि पैदा हो जाएँ कि वे एक नागरिक के नाते अपने कर्तव्य

ठीक तरह से पूरे कर सकें और अधिकारों का ठीक प्रयोग कर सकें, और उन में ऐसी लगन पैदा हो जाए कि वे अपने परिश्रम और यत्न से न केवल अपने जीवन को भरपूर बनाएं बल्कि अपने देश की सम्पत्ति को भी बढ़ाएं।

यह तो सच है कि बुनियादी तालीम का काम सरकार का काम है परन्तु सरकार का इरादा कैसा ही नेक और नियत कितनी ही साफ़ क्यों न हो, उस समय तक ठीक तालीम नहीं हो सकती जब तक कि आप अध्यापक की हैसियत से अपने कर्त्तव्य को न पहचानें और अपने काम को अच्छी तरह न समझें। राज्य या सरकार अधिक से अधिक यह कर सकती है कि तालीम के लिए ज़रूरी सामान दे दे और पढ़ाने की दूसरी सुविधाएं पैदा कर दे, परन्तु इस से उस समय तक कोई लाभदायक फल नहीं निकल सकता जब तक कि अध्यापक को स्वयं अपने काम से लगाव न हो। यह कहना ग़लत न होगा कि जिस धुरी पर सारी शिक्षा घूमती है, वह अध्यापक है। बच्चों की उगती हुई पौद पर अन्य किसी वस्तु का इतना गहरा प्रभाव नहीं होता जितना कि अध्यापक के व्यवहार का। अध्यापक की लग्न और उसकी ईमानदारी और उसका प्रेम ऐसी चीजें हैं जो पाठशाला में सामान की कमी होने पर भी अच्छी और प्रभावशाली शिक्षा का साधन बन सकती हैं, और इस के विरुद्ध यदि अध्यापक में ये विशेषताएं न हों तो अच्छे से अच्छे तालीमी सामान, शानदार से शानदार पाठशाला की इमारत और उत्तम से उत्तम पाठ्यक्रम से अधिक लाभ न होगा।

बुनियादी अध्यापक के काम की विशेषता—इस प्रकार देखें तो आप एक बहुत बड़ा बोझ अपने कन्धों पर उठाने के लिए तैयार हुए हैं। आपसे पहले आनेवाले अध्यापक या साधारण पाठ-

शाला के अध्यापक का काम अपेक्षतः सुगम था। वह समझता था कि उसका काम केवल यह है कि बच्चों को पढ़ना-लिखना और मामूली हिसाब-किताब सिखा दे। इसके लिए केवल यह आवश्यक था कि वह उन बातों को भली प्रकार जानता हो, जो वह पढ़ाए या सिखाएगा। परन्तु आपका काम इससे न चलेगा। आपको इसके अतिरिक्त वे सब बातें जाननी और करनी पड़ेंगी जो बच्चों को अच्छा आदमी बनाने और राष्ट्रीय जीवन को सँवारने और उन्नत बनाने के लिए आवश्यक हैं। यह काम कठिन है। इसे आप उसी समय पूरा कर सकेंगे जब कि आप को सामाजिक जीवन और सामाजिक कामों से गहरी दिलचस्पी हो, जबकि आप पाठशाला और समाज के सम्बन्ध को भली प्रकार समझते हों और जबकि आपको मनुष्य की योग्यता और तालीम की ताकत पर पूर्ण विश्वास हो।

अध्यापक और समाज—तालीम से समाज-सुधार का काम लेना है तो आवश्यक है कि आप सामाजिक आवश्यकताओं को भली प्रकार समझें। इसके लिए आपको गहरी दृष्टि से समाज के ढांचे को परखना होगा कि उसमें जो खराबियां हैं, उनका वास्तविक कारण क्या है। कौन-सी ताकतें ऐसी हैं जो इन खराबियों के क़ायम रखने में अपना भला समझती हैं और कौन-से समूह ऐसे हैं जो इन खराबियों का शिकार हैं और जो इनके दूर करने में मदद दे सकते हैं। आपको उस जगह के लोगों की चाल-ढाल, रीति-रिवाज और उनकी जीवन की समस्याओं को भी जानना चाहिये जहाँ आपकी पाठशाला है ताकि आप उनके बच्चों के पठन-पाठन में उन बातों का ध्यान रख सकें। नीचे दी हुई बातें इस काम में लाभकारी सिद्ध होंगी।

(1) बस्ती की आबादी के बारे में आंकड़े इकट्ठे करन
यह जानना चाहिये कि बस्ती में कितने लोग पढ़े-लिखे हैं, तार्ल
बारे में उन लोगों के क्या विचार हैं, कौन कौन-से पेशे के लो
उनके आपस में कैसे संबंध हैं, उनकी आर्थिक अवस्था कैसी है,
जानेवाली आयु के बच्चों की संख्या क्या है, उनमें से कितने
शाला में पढ़ते हैं, जो पाठशाला में प्रविष्ट नहीं हुए, वे क्या
हैं, आदि। यह जान लेने के पश्चात् आप अनुमान
सकेंगे कि पाठशाला में कितने बच्चे प्रवेश कर सकते हैं
जो बच्चे पाठशाला से गैर-हाजिर रहते हैं, उनकी गैरहा
का मुख्य कारण क्या है। सम्भव है कि यह ज्ञान
करके आप गैर-हाजिरी की समस्या को सुलझा सकें। जैसे,
साल के किसी विशेष भाग में माता-पिता को अपने काम में
की सहायता की आवश्यकता हो और इस कारण पाठशाला
दिनों हाजिरी घट जाती हो, तो पाठशाला की मौसमी छुट्टियां
दिनों में होनी चाहियें। यह दशा ऐसी पाठशालाओं में होती है
निर्धन किसानों के बच्चे अधिक संख्या में पढ़ते हों। यहां फसल
और काटने के समय छुट्टियां होनी चाहियें, नहीं तो गैरहा
के कारण बच्चों की तालीमी उन्नति पर बुरा प्रभाव पड़े
विशेष करके दस्तकारी में बहुत रुकावट होगी। कई स्थानों पर
हाजिरी का यह इलाज सोचा गया है कि बच्चे के स्कूल में
होने के समय माता-पिता से यह प्रण ले लिया जाय कि वे
[illegible] को नियम से पाठशाला भेजेंगे और किसी विशेष का
[illegible] उसे पाठशाला आने से नहीं रोकेंगे। यदि माता-पिता या
[illegible]ने के लिये तैयार न हों तो उनके बच्चों का प्रवेश न किया
[illegible] देश की वर्तमान अवस्था को सामने रखते हुए यह बात

नहीं लगती। यहां निर्धन और निरक्षर लोगों की संख्या अति अधिक है। जो लोग अपने छोटे-छोटे बच्चों से अपनी रोटी कमाने में सहायता लेते हैं, वे विद्या के गुणों को क्या जानें। ऐसी अवस्था में उन लोगों की संख्या बहुत कम होगी जो यह प्रण करने के लिये तैयार हों। यदि किसी कारण वे प्रण कर भी लें तो यह आवश्यक नहीं कि वे उसको पूरा करें भी। कुछ लोगों का विचार है कि ग़ैर-हाज़िरी की समस्या को एक ही प्रकार सुलझाया जा सकता है कि राज्य सरकारकी ओर से जबरी हाज़िरी का कानून लागू किया जाय। परन्तु माता-पिता की आर्थिक कठिनाइयों को दूर करने के बिना इस प्रकार का कानून लागू करना उनके लिये और कठिनाई पैदा करेगा। वर्तमान अवस्था में यह किया जा सकता है कि बेसिक पाठशालाओं में फसली छुट्टियां की जाएं, जैसे कि कई प्रांतों में हो रहा है। जहां यह नहीं हो रहा है वहां अध्यापकों का काम है कि एक होकर शिक्षा-विभाग को यह बात समझाएं।

(२) गाँव के लोगों से संपर्क स्थापित करना—इसके लिये एक ऐसी संस्था बनानी चाहिये जिसमें बच्चों के माता-पिता और अध्यापक दोनों हों। इस संस्था का काम यह होना चाहिये कि वह पाठशाला से घर का घनिष्ठ संबंध पैदा करे, माता-पिता को पाठशाला की आवश्यकतायें और समस्यायें समझाये, उन्हें अच्छी और बुरी शिक्षा का अन्तर बताये और अध्यापक को माता-पिता की कठिनाइयों का ज्ञान कराये ताकि माता-पिता और अध्यापक बच्चों की शिक्षा को प्रभावशाली बनाने के लिये एक दूसरे से सहयोग कर सकें। इस संस्था का एक काम यह भी होगा कि वह लोगों में स्वास्थ्य, सफ़ाई और समाज-सुधार की भावना पैदा करेगी, जैसे गाँव की गलियों और घरों की सफ़ाई के काम में

लोगों को भाग लेने के लिये तैयार करेगी। पाठशाला के विशेष समारोहों में माता-पिता और गांव के दूसरे लोगों को बुलाना चाहिये, जैसे पाठशाला के वार्षिक खेल-कूद के अवसर पर, बच्चों के काम की प्रदर्शनी के समय, राष्ट्रीय उत्सव, जैसे स्वतन्त्रता-दिवस गान्धी-जयंती, राष्ट्रीय सप्ताह आदि अवसरों पर गांववालों को पाठशाला में बुला कर, उनकी पाठशाला के कामों में दिलचस्पी बढ़ाई जा सकती है।

(3) तालीमी कामों में माता-पिता का सहयोग प्राप्त करना—तालीमी कामों में बच्चों के माता-पिता का सहयोग अति आवश्यक है। उदाहरण के तौर पर, स्वास्थ्य और सफाई, स्वास्थ्यप्रद आदतें, सलीका, व्यवहार आदि ऐसी चीजें हैं जिनके बारे में कभी कभी बच्चों के माता-पिता से बातचीत करनी चाहिये और उन्हें बच्चों के सुधार का ढंग बताना चाहिये। मान लीजिए, किसी बच्चे का स्वास्थ्य बहुत विगड़ रहा है और आप समझते हैं कि उसके स्वास्थ्य को ठीक करने के लिये किसी विशेप प्रकार की खुराक की आवश्यकता है तो आपको बच्चे के माता-पिता या संरक्षक को इसका परामर्श देना चाहिये। यह बात याद रखने की है कि आपका परामर्श ऐसा होना चाहिये जिस पर अमल किया जा सके।

(4) बच्चों को सामाजिक अध्ययन के लिये बाहर ले जाना—बच्चों को अपने गांव और समीप के गांवों में इसलिये ले जाना चाहिये कि बच्चे स्वयं वहां की संस्थाओं का अध्ययन कर सकें कि वे किस तरह काम करती हैं और उनका सामाजिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार गांव के भिन्न भिन्न काम-धन्धे करने वालों, जैसे लुहार, बढ़ई, जुलाहा आदि से बच्चों को मिलाना चाहिये ताकि बच्चे उनके काम करने के ढंगों का अध्ययन कर सकें। आप

ऐसे अवसरों का लाभ उठाकर बच्चों को भिन्न भिन्न धन्धों की सामाजिक महत्ता का ज्ञान करा सकते हैं और उनके मन में उन काम-धन्धा करनेवालों के प्रति आदर और सत्कार की भावना उभार सकते हैं।

(5) अध्यापक और बालक—मान लीजिए कि आप सामाजिक जीवन का अच्छा ज्ञान रखते हैं, मिलनसार हैं और लोगों के बच्चों के साथ अच्छे संबंध पैदा कर सकते हैं परन्तु आपके मन में बच्चों के लिये प्रेम नहीं है, तो आप अध्यापक के कर्तव्यों का पालन न कर सकेंगे। इस बारे में आपको अपने आप से ये प्रश्न पूछने चाहिये कि क्या मैं बच्चों के मनोरंजन और कार्य-कलापों का अध्ययन मन लगाकर करता हूँ ? क्या बच्चे मुझ से इतने हिल-मिल गये हैं कि वे मुझे बिना झिझक अपने मनोरंजन में सम्मिलित कर लेते हैं ? क्या मैं बच्चों का उतना ही आदर करता हूँ जितना कि अपने बराबर वालों का ? क्या मैं बच्चों की कठिनाइयों और समस्याओं को ध्यान से सुनता हूँ और उन्हें सच्चे हृदय से दूर करने का यत्न करता हूँ ? क्या मुझ में इतना धैर्य है कि मैं बच्चों की उन्नति धीमी होने पर भी आशा नहीं छोड़ता ? क्या मैं सब बच्चों से एक-सा व्यवहार करता हूँ और धर्म, जात-पात, रंग-रूप और संपत्ति आदि को देख कर किसी का पक्षपात तो नहीं करता ? क्या मैं सब बच्चों की संस्कृति, सभ्यता और मातृ-भाषा का आदर करता हूँ ? अर्थात् इनको सामने रख कर शिक्षा देता हूँ ? ये वे प्रश्न हैं जिन का उत्तर यदि आप 'हां' दे सकते हैं तो आप निःसंदेह बच्चों के अध्यापक बनने के योग्य हैं, अन्यथा नहीं।

बच्चों के मनोरंजन और कार्य-कलापों का निरीक्षण करने से आप उनकी समझ, रुचि और स्वभाव के बारे में ठीक ठीक फैसला कर सकते हैं। इस से एक बड़ा लाभ यह होगा कि फिर आप बच्चों

लोगों को भाग लेने के लिये तैयार करेगी।
समारोहों में माता-पिता और गांव के दूसरे
चाहिये, जैसे पाठशाला के वार्षिक खेल-कूद के
काम की प्रदर्शनी के समय, राष्ट्रीय उत्सव,
गान्धी-जयंती, राष्ट्रीय सप्ताह आदि अवसर
पाठशाला में बुला कर, उनकी पाठशाला के क-
जा सकती है।

(3) तालीमी कामों में माता-पिता का
तालीमी कामों में बच्चों के माता-पिता का म
है। उदाहरण के तौर पर, स्वास्थ्य और सफा-
सलीका, व्यवहार आदि ऐसी चीजें हैं जिन-
बच्चों के माता-पिता से बातचीत करनी चाहि
सुधार का ढंग बताना चाहिये। मान लीजिए,
बहुत बिगड़ रहा है और आप समझते हैं
ठीक करने के लिये किसी विशेष प्रकार की
तो आपको बच्चे के माता-पिता या संरक्षक
चाहिये। यह बात याद रखने की है कि आ
चाहिये जिस पर अमल किया जा सके।

(4) बच्चों को सामाजिक अध्ययन
बच्चों को अपने गांव और समीप के गांवों
चाहिये कि बच्चे स्वयं वहां की संस्थाओं
वे किस तरह काम करती हैं और उनका सा
प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार गांव के भिन्न
वालों, जैसे लुहार, बढ़ई, जुलाहा आदि से
ताकि बच्चे उनके काम करने के

होना चाहिये कि आप बच्चे से अच्छे से अच्छा बनने की मांग करें, उसे ठिकाने तक पहुंचाने में उसका पथ-प्रदर्शन करें और जहाँ आवश्यकता हो, उसकी मदद करें।

अध्यापक का व्यक्तित्व—जैसा कि ऊपर बताया गया है तालीमी काम में अध्यापक के व्यक्तित्व का बड़ा महत्व है। इसलिये यह जानना अति आवश्यक है कि वे कौन-सी बातें हैं, जो एक अच्छे अध्यापक में होनी चाहियें। इस सिलसिले में कुछ विशेष बातें नीचे दी गई हैं। इन्हें आकाश के तारे जानकर टाल न दीजिये कि वे मनुष्य की पहुँच से बाहर हैं अपितु यह समझिये कि प्रत्येक व्यक्ति इन्हें कोशिश करके बड़ी हद तक प्राप्त कर सकता है। हां, शर्त यह है कि इस व्यक्ति में अपने आपको बेहतर बनाने का इरादा हो। किसी आदर्श को प्राप्त करने के लिये जो पग उठाया जाता है, वह निश्चय ही आगे ले जानेवाला पग होता है।

1. **सचाई**—अध्यापक बच्चों में काम के लिए प्रेरणा और रुचि पैदा करता है। वह उन्हें अपने काम का आदर करना सिखाता है, अथवा उनमें काम को भली प्रकार करने के लिए शक्ति और साहस पैदा करता है। बच्चे उसकी देखा-देखी लगन, गम्भीरता और ईमानदारी से अपना काम करते हैं। सचाई की कमी से जो हानि अध्यापक के काम को पहुँचती है, वह शायद अन्य किसी धन्धे को नहीं पहुँचती क्योंकि यहां बेईमानी और लापरवाही का ठप्पा उस पीढ़ी पर लग जाता है जिसे आगे जाकर सारे कामों की जिम्मेदारी लेनी होगी। अध्यापक की सचाई का सबूत यह है कि वह अपने काम की सामाजिक महत्ता को जानते हुए भावी सन्तान के लिए, जहाँ तक सम्भव हो सके, शिक्षा का अच्छे से अच्छा प्रबन्ध करे। इसके लिए आवश्यक है कि वह अपने

पाठशाला का अध्यापक अपना अधिक समय छोटी आयु और कच्चे दिमाग़ के बच्चों के साथ गुज़ारता है। डर है कि कहीं वह अपने उस ज्ञान से संतुष्ट न हो जाय जो उसने अध्यापक बनने से पहले प्राप्त किया था। इस लिए आवश्यकता इस बात की है कि वह अपनी पढ़ाई बराबर जारी रखे और न केवल अपने काम के बारे में किताबें आदि ही पढ़ता रहे अपितु मानव संस्कृति के बारे में दिलचस्प चीज़ों का अध्ययन करता रहे। इस प्रकार उसके पढ़ाने में ताज़गी और प्रभाव पैदा होगा।

4. **शिष्टाचार**—अच्छी तालीम के लिये आवश्यक है कि अध्यापक शिष्ट, हँस-मुख और प्रसन्नचित्त हो। कई अध्यापकों में बच्चों पर व्यंग्य करने की आदत होती है। यह बात शिष्टाचार के विपरीत होती है। इससे दिल पर चोट लगती है और बच्चे का सुधार नहीं होता। किसी बच्चे पर व्यंग्य करते समय यह सोचना चाहिये कि क्या इस प्रकार का व्यंग्य मित्र या साथी के साथ किया जा सकता है या अगर उसके साथ कोइ वैसा व्यवहार करे तो उसे कैसा लगेगा। कई बार देखने में आया है कि अध्यापक कम बुद्धि वाले बच्चों पर चोट करता रहता है या उनकी शारीरिक कमी की बात करता है, जैसे काने, बहरे या लंगड़े बच्चे को छेड़ता है या किसी निर्धन बच्चे के घर या माता-पिता पर टठोल करता है। ये ऐसी बातें हैं जिन से प्रत्येक अध्यापक को बचना चाहिये। बच्चों की कमज़ोरियों को सहानुभूति से देखना और उनके स्वाभिमान को क़ायम रखना अच्छी शिक्षा का पहला नियम है।

अच्छा मज़ाक करना और उसको सराहना सभ्यता और संस्कृति की निशानी है। यदि अध्यापक में ये गुण हों तो उसे प्रति दि[illegible] काम में सहायता मिलती है। बच्चों को कभी किसी

मज़ाक से हँसा देना काम की थकावट को दूर करता है और उनमें नई उमंग और जोश पैदा करता है। जो अध्यापक हँसमुख और प्रसन्न-चित्त होता है वह बच्चों में काम करने की लगन पैदा करता है।

5. आत्म अनुशासन—अध्यापक का काम पथ-प्रदर्शन करना है। इसके लिये आवश्यक है कि उसके स्वभाव में ठहराव हो और उसको अपने ऊपर काबू हो। वैसे तो स्वभाव का चिड़चिड़ापन और क्रोध प्रत्येक मनुष्य के लिये बुरा है परन्तु अध्यापक के लिये यह तबाही की जड़ है। इस से सारा तालीमी वातावरण घुटा हुआ रहता है। अनुशासन प्राप्त करना बड़ा कठिन काम है। इस के लिये मनुष्य को लगातार कोशिश करनी पड़ती है। अपनी इच्छा और मन को रोकना पड़ता है। किसी ने कहा है कि क्रोध में उत्तर देने से पहले दस तक गिनती गिन लो। यदि क्रोध का प्रदर्शन करने से पहले कुछ समय सोचने के लिये मिल जाय तो फिर शायद इस प्रदर्शन की आवश्यकता ही न रहे क्योंकि क्रोध का प्रदर्शन करने के लिये प्रायः कोई उचित कारण नहीं होता।

अध्यापक को जिन बच्चों पर प्रायः क्रोध आता रहता है और जिनको वह दुखदायक समझता है, उनका गहरा निरीक्षण करना चाहिये। यदि अध्यापक उनकी घरेलू दशा का पता लगा सके तो उन की समस्याओं और उलझनों को समझना आसान होगा। फिर वह धैर्य और शान्ति से उन उलझनों का हल सोच सकता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि अध्यापक अपने अधैर्य और असंतोष के कारण कई बच्चों को सुधार के योग्य नहीं समझता और उनकी ओर से निराश हो जाता है क्योंकि वह उनके सुधार के लिये कोई यथोचित यत्न नहीं कर सकता। सुधार के काम में बड़े धैर्य की आवश्यकता है और इसमें बड़ा समय लगता है। यदि अध्यापक धैर्य और संतोष

से काम ले तो वह बच्चों की अनेक बुराइयों को दूर कर सकता है।

6. शारीरिक स्वास्थ्य और सफ़ाई—शारीरिक स्वास्थ्य और सफ़ाई प्रत्येक अच्छे काम का पहला नियम है। अध्यापक को अपने आरोग्य तथा शरीर और वस्त्रों की सफ़ाई की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। यह भी आवश्यक है कि वह अपनी चाल-ढाल, चेहरे-मुहरे और बोलचाल की ओर उचित ध्यान दे। बोलचाल का उचित ढंग जाने बिना अध्यापक सफल नहीं हो सकता। उसे साफ़ प्रभावशाली स्वर से बोलने की आदत डालनी चाहिए। इसके लिये आवश्यक है कि आवाज़ में भाव के अनुसार उचित उतार-चढ़ाव हो और स्वर न इतना तीखा और ऊँचा हो कि कानों को बुरा लगे और न इतना धीमा हो कि सुना ही न जा सके। बोलने की गति ऐसी होनी चाहिए कि बच्चे सुगमता से, जो कुछ बताया जाय, सीख सकें।

7. पाठशाला के नियमों की पाबंदी—अध्यापक पाठशाला के नियमों की जितनी पाबंदी आप करता है, बच्चों को उसके लिये उतना ही तैयार करता है। यदि अध्यापक पाठशाला में आप देर से आता है या तालीमी समय का ठीक प्रयोग नहीं करता, उसे गप्प में या यूँ ही गुज़ार देता है या पाठशाला की पुस्तकें, दस्तकारी के सामान अथवा अन्य वस्तुओं का लापरवाही से उपयोग करता है तो कोई आश्चर्य नहीं जो बच्चों में भी ये बुरी आदतें पैदा हो जाएँ। यदि अध्यापक पाठशाला के किसी नियम का उल्लंघन करता है तो उसे आशा नहीं रखनी चाहिये कि बच्चे खुशी से पाठशाला या श्रेणी के किसी नियम का आदर करेंगे। ऐसे अध्यापक का बच्चे आदर नहीं करते और न ही अध्यापक पाठशाला के लिये लाभकारी सिद्ध हो सकता है।

सफलता की कसौटी—अध्यापक की सफलता जांचने का माप-दंड है? यह ऐसा प्रश्न है जो आपके मन में कई बार आता हो प्रायः लोग किसी मनुष्य की सफलता को उसकी संपत्ति, हैसियत, और प्रसिद्धि से मापते हैं। यदि आप भी अपनी सफलता का यही मान लें तो आप बड़े निराश होंगे। आपका काम ऐसा है जि न तो अधिक धन पैदा किया जा सकता है और न ही कोई उ पदवी मिल सकती है और न ही किसी प्रसिद्धि की संभावना है चारों ओर धूम मच जाय, पत्रों में आपके चित्र छपें, आपके ज दिवस पर लोग बधाई देने आयें और भेंट दें। आपका काम में सेवा का काम है। आपकी सफलता परखने की केवल एक कसौ है कि आपने संसार को अच्छा बनाने में क्या भाग लिया है अथ जिन बच्चों की शिक्षा आपके जिम्मे है, उनको अच्छा मनुष्य बना के लिये आपने क्या सहायता की है।

निःसन्देह यह कसौटी है बड़ी ऊँची और इस पर पूरा उतर खेल नहीं है। आप जिन कठिनाइयों में काम करते हैं, उन्हें देखते हु इस सफलता का प्राप्त करना सम्भव नहीं लगता, परन्तु आ अपनी सहृदयता, कर्त्तव्य-पालन और मेहनत से इस बुरी अवस्था होते हुए भी सफलता के स्थान तक पहुँच सकते हैं।

सफलता की पहली शर्त काम को भली प्रकार समझ लेना है आपके जुम्मे जो काम है उसका उद्देश्य बड़ा विशाल है—बच्चे क पूर्ण मनुष्य बनाना अर्थात् उस के व्यक्तित्व के सारे पक्षों का पू विकास करना, जिसमें उसके शरीर, मन, आचरण, भाव और कला कौशल की शिक्षा सम्मिलित हैं। मानव जीवन के सारे अंगों हं सम्मेल है। वह ऐसी इकाई है जिस को भिन्न भिन्न भागों में बांट

नहीं जा सकता। शरीर, मन, आत्मा और कामनायें सब में निकट संबंध है। इनमें से एक की उन्नति अन्य चीजों की उन्नति में सहायक होती है। ऐसे ही किसी एक को भूल जाने से अन्य सब की उन्नति में बाधा पड़ जाती है।

अध्यापक के रूप में आपका पहला काम यह है कि आप पाठशाला में ऐसा वातावरण पैदा करें जो बच्चे को शारीरिक उन्नति के लिये उचित हो। कुछ ऐसी कल्प-क्रियाओं का प्रबंध करें जिनसे बच्चे का शरीर सुडौल और दृढ़ बन, स्वास्थ्य में उन्नति हो और उसमें सफ़ाई से जीवन बिताने की योग्यता पैदा हो। इसलिये उस को ऐसी चीजों से बचाना पड़ेगा जिनका उसकी शारीरिक उन्नति पर बुरा प्रभाव पड़ने का भय हो। उसे खेलन-कूदने, चीजें बनाने, स्वतन्त्रता से चलने-फिरने का अवसर देना होगा और अपने बराबर वालों की मदद से समस्याओं का हल ढूँढने और अपने शौक़ पूरे करने के लिये उचित अवस्था पैदा करनी होगी।

आपका दूसरा काम यह है कि आप बच्चों की मानसिक उन्नति के लिये रास्ता ढूँढ निकालें। बेसिक शिक्षा में जो कल्प-क्रियायें रखी गई हैं उनमें भाग लेने से बच्चा बहुत लाभदायक ज्ञान और कला प्राप्त करेगा। उसमें इस तरह ऐसी चाह पैदा कर देनी चाहिये कि वह भविष्य में अपनी कोशिशों द्वारा ज्ञान प्राप्त कर सके और उसे प्रतिदिन जीवन में प्रयोग कर सके। यह तब ही हो सकता है जब कि बच्चे के जीवन और किताबी तालीम में गहरा मेल हो और ज्ञान देने के लिये बच्चे की आवश्यकताओं और रुचियों का ध्यान रखा जाय।

आपका एक महान् कर्तव्य यह भी है कि आप बच्चे के आचरण को सुधारें और उसमें सामाजिक चैतन्यता पैदा करें। इस प्रकार

उसको बेहतर सामाजिक जीवन बिताने के योग्य बना दें। बेसिक शिक्षा की मांग है कि पाठशाला में बच्चों के लिये एक अच्छा सामाजिक वातावरण पैदा किया जाये जिसमें बच्चे मिलकर रहना और काम करना सीखें। बुरी और सामाजिक जीवन को बिगाड़ने वाली आदतों की जगह सहयोग, सहानुभूति, सेवा और पारस्परिक सहायता की आदतें सीखें। एक ओर बच्चा समाज के एक अंग के रूप में अपनी महत्ता समझे और दूसरी ओर इस बात को अनुभव करे कि वह बहुत-सी बातों में दूसरों की मदद पर निर्भर है और कई बातों में दूसरों की मदद करना उसका कर्त्तव्य है। इस एक-दूसरे पर निर्भर होने का अनुभव घर और गांव या शहर के जीवन के निरीक्षण से आरम्भ होगा। जब आगे चल कर बच्चा यह निरीक्षण करेगा कि उसके बहुत-से सुखों और सहूलतों का निर्भर संसार के भिन्न भिन्न भागों में बसनेवाले लोगों की मेहनत और काम पर है तो उसको पूरे मानव जीवन के पारस्परिक निर्भर होने का अनुभव होगा। इस से बच्चे को एक ऐसा नागरिक बनने में मदद मिलेगी जो अपनी योग्यताओं को अपने गांव, देश और सारे संसार के लाभार्थ प्रयोग के लिये तत्पर रहे।

बच्चे की भावनाओं और रुचियों की शिक्षा करना भी आपका काम है। इसके लिये वैसे तो बुनियादी पाठशाला के जीवन में अनेक अवसर मिलते रहते हैं परन्तु यह इतनी महान् वस्तु है कि इसके लिये विशेष तौर पर ऐसी कल्प-क्रियाओं का प्रबंध करना पड़ेगा जिनसे बच्चे में सुन्दरता का अनुभव पैदा हो, वह सुन्दर और भद्दी चीज़ों की पहचान कर सके और उसमें अच्छी चीज़ों को सराहने की योग्यता पैदा हो जाय। इस के लिये नाच, ड्रामा, संगीत और कला की शिक्षा का प्रबंध करना होगा।

अगले पन्नों में बच्चे की शिक्षा के इन सब पक्षों पर अलग अलग प्रकाश डाला जाएगा। न तो यह सम्भव है और न ही अच्छा कि आप को एक बना बनाया रास्ता बता दिया जाए जिस पर आप आँखें बन्द कर के चलते जायें और अपने ठिकाने पर पहुंच जाएं। आपको इस पुस्तक में कुछ संकेत मिलेंगे जिनसे आप को अपने ठिकाने पर पहुंचने में मदद मिलेगी। परन्तु आपको अपना पथ आप बनाना पड़ेगा और यही बात आप की सफलता की शर्त है।

———

बच्चे की शारीरिक शिक्षा

'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन' ऐसा कथन है जिस की सचाई के
बारे में किसी सबूत की आवश्यकता नहीं। आप जानते हैं कि जिन
बच्चों का स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता, जो बीमार रहते हैं और
कमज़ोर होते हैं, वे कोई भी मानसिक काम भली प्रकार नहीं कर
सकते। इस लिए उन की मानसिक उन्नति रुक जाती है। यह बात
को सब जानते हैं, फिर भी तालीम में शारीरिक शिक्षा की ओर कम
ध्यान दिया जाता है और पाठशाला का विशेष काम पढ़ाना
लिखाना ही समझा जाता है। हमारे देश में विशेष कर इस ओर
ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि यहां अधिकतर लोगों का
स्वास्थ्य संतोषजनक नहीं है जिसका प्रभाव हमारी कौमी कार
गुज़ारी पर बुरा पड़ रहा है।

यह विषय इतना विशाल है कि इस का वर्ण
छोटे में नहीं हो सकता। इस का ध्यान
जाना चाहिए जैसा कि बेसिक शिक्ष
है। शारीरिक शिक्षा का काम ऐसा है
के माता-पिता, सरकार और तालीम
सहायता की आवश्यकता है क्योंकि

इसमें सफलता प्राप्त करने के लिए उचित भोजन, आराम और मनोरंजन का प्रबन्ध करना चाहिए और स्वास्थ्य-रक्षक ढंगों को अपनाना चाहिए।

शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य—शारीरिक शिक्षा का उद्देश्य केवल यह ही नहीं कि शरीर को अच्छी दशा में रख कर बीमारी को रोका जाए, अपितु यह भी है कि शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों को व्यायाम द्वारा सुदृढ़, चुस्त, फुर्तीला और सुन्दर बनाया जाए; अर्थात् शारीरिक शिक्षा के दो उद्देश्य हैं—स्वास्थ्य की रक्षा करना और उस को उन्नत करना। ये दोनों उद्देश्य बच्चे के अपने जीवन से संबंधित हैं। इनके अतिरिक्त शारीरिक शिक्षा का एक और उद्देश्य यह भी है कि पाठशाला के स्वास्थ्य और सफाई के प्रोग्राम द्वारा बच्चों के माता-पिता और गांव के अन्य लोगों में ऐसी आदतें और रुचियां पैदा की जाएं, जो बच्चों के घर, गांव और सामाजिक स्वास्थ्य के लिये लाभकारी सिद्ध हों।

इन उद्देश्यों को सामने रखते हुए बेसिक शिक्षा के पाठ्य-क्रम में शारीरिक शिक्षा को सैद्धांतिक और क्रियात्मक, दोनों पक्षों से सम्मिलित किया गया है। बेसिक शिक्षा की प्रणाली में बताया गया है कि जहां तक शारीरिक शिक्षा के सैद्धांतिक पक्ष का संबंध है, शरीर का ज्ञान, स्वास्थ्य, सफाई और भोजन का ज्ञान बच्चों को साधारण विज्ञान के पाठ के रूप में दिया जायगा। बाकी रहा इसका क्रियात्मक पक्ष,तो वह पाठशाला के सारे काम के द्वारा पूरा होगा जिसमें दस्तकारी, खेल-कूद, बाग़बानी और क्रियात्मक ढंगों द्वारा शिक्षा शामिल हैं। शारीरिक शिक्षा संबंधी कई चीजों को 'सामाजिक शिक्षा' के पाठ्यक्रम में खोल कर बताया गया है। इस योजना में खेल को कोई अलग या

विशेष स्थान नहीं दिया गया क्योंकि यदि उसको पाठ्यक्रम का लाज़मी अंग बनाया जाय तो फिर उस में वह उपज बाकी नहीं रहती और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से वह खेल नहीं रहता। परन्तु हमने अपने पाठ्यक्रम में व्यक्तिगत और सामूहिक, दोनों प्रकार के खेल रखे हैं और हमारा विचार है कि सारी अच्छी पाठशालाओं में भिन्न-भिन्न खेल होने चाहियें। इस लिए यह भली प्रकार समझ लेना चाहिये कि प्रत्येक पाठशाला में जो शिक्षा क्रियात्मक ढंग से दी जाती है, खेल उस शिक्षा का एक लाज़मी अंग होता है। यह ठीक नहीं है कि खेल को किताबी शिक्षा से बचने के लिये रखा जाय।

इससे संबंधित पाठ्यक्रम में जो चीज़ें दी गई हैं, वे शारीरिक शिक्षा और स्वास्थ्य-सफाई के व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों पक्षों से संबंध रखती हैं। अध्यापक के नाते आपके लिए यह जानना अति आवश्यक है कि आपको शारीरिक शिक्षा के संबंध में क्या कुछ करना है, बच्चों को कौन कौन सी बातें बतानी हैं और क्या सिखाना है, ताकि शारीरिक शिक्षा के ऊपर बताये हुए उद्देश्य पूरे हो सकें।

सुगमता और सफाई के विचार से हम शारीरिक शिक्षा के नीचे लिखे हुए भागों को अलग अलग लेंगे:—

(1) जांच—साधारण सफाई की जांच और स्वास्थ्य की डाक्टरी जांच।

(2) कसरत और खेल।

(3) स्वास्थ्यप्रद आदतें।

(4) भोजन।

(5) पाठशाला का स्वास्थ्यप्रद प्रबंध और वातावरण।

(6) शरीर का स्वास्थ्य और सफाई।

1. जांच [मुआयना]

(1) सफ़ाई की जांच—पाठशाला का काम आरंभ करने से पहले आप भली प्रकार देख लीजिये कि बच्चों का पहनावा साफ़-सुथरा हो और मुँह-हाथ पर मैल आदि न हो. उनके शरीर के किसी भाग पर कोई ऐसी निशानी दिखाई न दे जिससे किसी रोग और विशेषकर छूत के रोग का सन्देह हो । यदि किसी चीज़ की सफ़ाई की आवश्यकता हो, जैसे मुँह, माथा, आंखें, हाथ धोने या नाख़ुन काटने की,तो इस काम को उसी समय करा देना चाहिये । यदि सन्देह हो कि किसी बच्चे को छूत का रोग है, तो उसे शीघ्र ही उसके घर या हस्पताल भेज देना चाहिये और उसके माता-पिता को भी इसकी सूचना देनी चाहिये ताकि वे उसकी ओर ध्यान दें।

जांच के समय इन बातों की ओर विशेष ध्यान दीजिये—

(1) कपड़े और उनकी सफ़ाई—यदि किसी बच्चे के कपड़े मैले या गन्दे हों तो पाठशाला के समय के बाद उससे कपड़े साफ़ कराये जाय। जिस पाठशाला में पानी का पर्याप्त प्रबंध है, वहां यह काम आसानी से हो सकता है। प्रत्येक इलाके में कोई न कोई ऐसी प्राकृतिक चीज़ मिलती है जिससे कपड़े साफ़ किये जा सकते हैं, जैसे सोडा, रेह रीठा आदि। कपड़े साफ़ करने का ढंग भी बताना चाहिए। रेह मिट्टी से कपड़े साफ़ करने का ढंग यह है कि मैले कपड़ों को पानी में अच्छी तरह गीला करके उन पर रेह लगा कर कुछ समय के लिए धूप में रख दो या किसी बर्तन में रख कर चूल्हे पर गर्म कर लो ताकि मैल फूल जाय। इसके बाद उसे अच्छी तरह मल कर पानी से धो डालो। सारी मैंने ही बच्चे कपड़े धोना सीखना चाहिए। यह चीज़ साधारण विज्ञान के पाठ्यक्रम में भी शामिल है। यदि आपकी निगरानी में कपड़े

धोने का काम सप्ताह में कम से कम एक बार हो जाय तो गंदे कपड़ों की शिकायत का अवसर कम मिलेगा।

2. शारीरिक सफ़ाई—मुँह, माथे, गर्दन, दांत, आंख, जीभ, कान, नाक, बाल, हाथ, पांव और नाखुनों की सफ़ाई—यदि इन में से कोई भी अंग गंदा हो तो बच्चे को झट ही उस जगह भेजिये जहां मुँह-हाथ धोने का प्रबंध है। पाठशाला में इसके लिये कोई विशेष स्थान होना चाहिये। वहां पानी, तौलिया, कंघा और शीशा आदि होना चाहिए। शीशा इतना ऊंचा लटका होना चाहिये कि सब बच्चे उससे लाभ उठा सकें। आप अपने पास एक नाखुन-तराश भी रखिये ताकि जिन बच्चों के नाखुन बड़े हों, वे काटे जा सकें। नाखुन देखते समय ध्यान रखिये कि किसी बच्चे को दांतों से नाखुन चबाने की आदत तो नहीं है। ऐसे बच्चों के नाखुन टेढ़े-मेढ़े और कटे-फटे होते हैं। यह बहुत बुरी और हानिकारक आदत है। इस प्रकार से गंदगी मुँह में जाती है और यह कई रोगों का कारण बन सकती है। यदि नाखुन बढ़ने न दिये जाएं तो यह आदत छूट सकती है।

आपका काम यह है कि बच्चे में यह चेतना पैदा करें कि कपड़ों और शरीर की सफ़ाई से वह अधिक तेज़, चुस्त और अच्छा लगता है। अनुभव से पता लगा है कि यदि किसी बच्चे का मुँह-माथा साफ़ न हो, आँख में कीचड़ हो, नाक गन्दी हो, बाल साफ़ या सुलझे हुए न हों और उसको कहा जाय कि शीशे में जाके देखो कि तुम कैसे लगते हो, तो शीशे में देखते ही वह आप अपना सुधार कर लेता है।

एक बात का और ध्यान रखिये। कई अध्यापक और बड़े-बूढ़े [illegible] रोग का भय देकर साफ़-सुथरा रहने का उपदेश देते हैं। [illegible] क्योंकि डर है कि बच्चे कहीं अनावश्यक चिंता और

9. किसी चीज़ को पढ़ते या देखते समय आंखों के समीप ले जाना।

10. काले तख्ते पर लिखे हुए को दूर से न पढ़ सकना।

11. भैंगा होना।

कान

1. प्रश्न करने पर बिल्कुल उत्तर न दे सकना, कई बार गलत समझना, गलत उत्तर देना या बार-बार पूछना—"क्या ?"

2. बात सुनने के लिए सिर को एक ओर मोड़ना।

3. कान में से बदबू या किसी चीज़ का निकलना।

4. बार-बार कान का खुरचना।

5. कान में दर्द होना।

6. बोलने में दोष होना, जैसे बड़े ज़ोर से या धीमे स्वर से बोलना या एक ही स्वर से बिना उतार-चढ़ाव के बोलते रहना।

नाक और गला

1. मुँह बहुत खुला रखना, मुँह द्वारा साँस लेना।

2. नाक का बहते रहना।

3. जुकाम, और गले में खारिश होना।

4. बार-बार खांसना।

यदि आपको इस में से कोई चीज़ दिखाई दे तो आप झट ही किसी वैद्य या डाक्टर से पूछिये कि इस बुराई को कैसे दूर किया जा सकता है। असावधानी से तकलीफ बढ़ने का डर होता है और रोग के दूसरे बच्चों में फैलने की संभावना बढ़ जाती है। कई बार देखने में आया है कि आरम्भ में ही इन बुराइयों की ओर ध्यान न देने के कारण कई बच्चे सदैव के लिए बहरे या अन्धे हो गये।

कुछ बच्चे अधिकतर अपना मुँह खुला रखते हैं। वे प्रायः मुँह द्वारा सांस लेते हैं। इसका प्रभाव उनके स्वास्थ्य और चेहरे-मुहरे पर बुरा पड़ता है। उनको कब्ज की आम शिकायत रहती है क्योंकि भोजन खाते समय भोजन चबाने में उनको जल्दी करनी पड़ती है ताकि साँस चालू रहे। इस प्रकार उनके आमाशय में भली प्रकार चबाया हुआ भोजन नहीं पहुँचता और आमाशय को भोजन पचाने के लिए आवश्यकता से अधिक काम करना पड़ता है और इसी कारण उनका आमाशय कमजोर पड़ जाता है। इस के साथ-साथ मुँह द्वारा सांस लेने वाला बच्चा मूर्ख लगता है। उसका निचला जबड़ा झुक जाता है और ऊपर के दाँत बाहर निकल आते हैं। उस को अपने हाथ-पाँव से काम लेने में भी रुकावट होती है। उस का साँस शीघ्र ही फूल जाता है क्योंकि उस के फेफड़े और दिल का काम बेरोक-टोक नहीं होता है। उसके फेफड़े इतने नहीं फैलते जितने नाक द्वारा साँस लेने से फैलते हैं। उसकी आवाज भी भद्दी हो जाती है। उसको नाक के स्वर द्वारा बोलने की आदत हो जाती है। उसको अधिकतर जुकाम और खाँसी रहती है, क्योंकि नाक की तरह मुँह में बाहर की ठण्डी और खुश्क वायु को गर्म और नम करने के लिए कोई साधन नहीं होता। उसे गन्दगी और रोग फैलानेवाले रोगाणुओं का भी डर रहता है, क्योंकि मुँह में नाक की तरह वायु को साफ करने की कोई वस्तु नहीं है।

इस प्रकार कुछ ऐसे रोग हैं जो आम तौर पर इस आयु के बच्चों को लग जाते हैं। यदि इन रोगों की शीघ्र ही देख-भाल करने के पश्चात् उचित कार्रवाई न की जाय तो डर होता है कि रोग सारी श्रेणी या स्कूल में फैल जायगा। इन छूत के रोगों का आपको पूरा-पूरा ज्ञान होना चाहिए कि इनकी पहचान, रोक-थाम और इलाज क्या है। यदि आप सफाई की जाँच करते समय देख

9. किसी चीज़ को पढ़ते या देखते समय आंखों के समीप ले जाना।

10. काले तख्ते पर लिखे हुए को दूर से न पढ़ सकना।

11. भेंगा होना।

कान

1. प्रश्न करने पर बिल्कुल उत्तर न दे सकना, कई बार ग़लत समझना, ग़लत उत्तर देना या बार-बार पूछना—"क्या?"

2. बात सुनने के लिए सिर को एक ओर मोड़ना।

3. कान में से बदबू या किसी चीज़ का निकलना।

4. बार-बार कान का खुरचना।

5. कान में दर्द होना।

6. बोलने में दोष होना, जैसे बड़े ज़ोर से या धीमे स्वर में बोलना या एक ही स्वर में बिना उतार-चढ़ाव के बोलते रहना।

नाक और गला

1. मुँह बहुत खुला रखना, मुँह द्वारा साँस लेना।

2. नाक का बहते रहना।

3. ज़ुकाम, और गले में खारिश होना।

4. बार-बार खांसना।

यदि आपको इस में से कोई चीज़ दिखाई दे तो आप झट ही किसी वैद्य या डाक्टर से पूछिये कि इस बुराई को कैसे दूर किया जा सकता है। असावधानी से तकलीफ़ बढ़ने का डर होता है और रोग के दूसरे बच्चों में फैलने की संभावना बढ़ जाती है। कई बार देखने में आया है कि आरम्भ में ही इन बुराइयों की ओर ध्यान न देने के कारण कई बच्चे सदैव के लिए बहरे या अन्धे हो गये।

कुछ बच्चे अधिकतर अपना मुँह खुला रखते हैं। वे प्रायः मुँह द्वारा सांस लेते हैं। इसका प्रभाव उनके स्वास्थ्य और चेहरे-मुहरे पर बुरा पड़ता है। उनको कब्ज़ की आम शिकायत रहती है क्योंकि भोजन खाते समय भोजन चबाने में उनको जल्दी करनी पड़ती है ताकि साँस चालू रहे। इस प्रकार उनके आमाशय में भली प्रकार चबाया हुआ भोजन नहीं पहुँचता और आमाशय को भोजन पचाने के लिए आवश्यकता से अधिक काम करना पड़ता है और इसी कारण उनका आमाशय कमज़ोर पड़ जाता है। इस के साथ-साथ मुँह द्वारा सांस लेने वाला बच्चा मूर्ख लगता है। उसका निचला जबड़ा झुक जाता है और ऊपर के दाँत बाहर निकल आते हैं। उस को अपने हाथ-पाँव से काम लेने में भी रुकावट होती है। उस का साँस शीघ्र ही फूल जाता है क्योंकि उस के फेफड़े और दिल का काम बेरोक-टोक नहीं होता है। उसके फेफड़े इतने नहीं फैलते जितने नाक द्वारा साँस लेने से फैलते हैं। उसकी आवाज़ भी भद्दी हो जाती है। उसको नाक के स्वर द्वारा बोलने की आदत हो जाती है। उसको अधिकतर जुकाम और खाँसी रहती है, क्योंकि नाक की तरह मुँह में बाहर की ठण्डी और खुश्क वायु को गर्म और नम करने के लिए कोई साधन नहीं होता। उसे गन्दगी और रोग फैलानेवाले रोगाणुओं का भी डर रहता है, क्योंकि मुँह में नाक की तरह वायु को साफ करने की कोई वस्तु नहीं है।

इस प्रकार कुछ ऐसे रोग हैं जो आम तौर पर इस आयु के बच्चों को लग जाते हैं। यदि इन रोगों की शीघ्र ही देख-भाल करने के पश्चात् उचित कार्रवाई न की जाय तो डर होता है कि रोग सारी श्रेणी या स्कूल में फैल जायगा। इन छूत के रोगों का आपको पूरा-पूरा ज्ञान होना चाहिए कि इनकी पहचान, रोक-थाम और इलाज क्या है। यदि आप सफाई की जाँच करते समय देख

लें कि छूत के किसी रोग की कोई निशानी तो नहीं है तो आशा है कि आपके स्कूल में छूत के रोग नहीं फैलेंगे।

बच्चों के साधारण रोग —छूत के रोगों के छोटे-छोटे कीड़े होते हैं जिन्हें रोगाणु कहते हैं। ये इतने छोटे होते हैं कि आँख से दिखाई नहीं देते। इनको देखने के लिए सूक्ष्मदर्शक यन्त्र का प्रयोग करना पड़ता है। जिस समय ये रोगाणु किसी स्वस्थ मनुष्य पर आक्रमण करते हैं, तो रोग के चिह्न तुरन्त ही प्रकट नहीं हो जाते अपितु एक विशेष समय तक ये रोगाणु शरीर के अन्दर चुपचाप अपना काम करते रहते हैं। इस को "रोग प्रकट होने का समय" कहते हैं। रोगी एक विशेष समय तक रोग फैलाने के योग्य रहता है। इस समय को "रोग फैलाने का समय" कहा जाता है।

छूत के रोग फैलने के निम्न लिखित कारण हैं:—

1. गन्दी वायु में रहना।
2. गन्दा पानी प्रयोग करना।
3. गन्दे मकान और गन्दे पड़ोस में जीवन व्यतीत करना।
4. अनुचित भोजन खाना।
5. आवश्यकता से अधिक थकानेवाला काम करना।

रोग प्रायः मिट्टी, वायु, खाने की वस्तुओं और कई कीड़ों, जैसे मक्खी, मच्छर आदि द्वारा फैलते हैं।

इनमें से कुछ छूत के रोग, जिन के प्रायः बच्चे शिकार होते हैं, नीचे दिये गए हैं, ताकि आप उनके लक्षणों को पहचान कर अपनी पाठशाला में उन्हें फैलने से बचा सकें।

(Diphtheria)—यह एक खतरनाक रोग है। इसमें में 85% दस वर्ष से कम आयु के बालक होते हैं। इस

रोका जाए। उनके अपने अलग अलग बर्तन होने चाहियें या उन्हें भली प्रकार हाथ धो कर चिल्लू से पानी पीने की आदत डालनी चाहिये।

(4) किसी बच्चे को पेन्सिल या कलम मुंह में न रखने दी जाय और यदि किसी को यह आदत हो तो छुड़ाई जाय।

चेचक —यह रोग प्रायः महामारी (वबा) का रूप धारण कर लेता है। उस समय ये लोग अधिकतर इसका शिकार हो जाते हैं जिन के पहले चेचक का टीका नहीं लगा होता। हमारे देश में यह रोग प्रायः गर्मी के दिनों में फैलता है और इस से हज़ारों जानें नष्ट हो जाती हैं।

लक्षण—रोगी की पीठ और सिर में ज़ोर का दर्द होता है, सर्दी लगती है और कै आती है और यदि तीसरे दिन खाल को टटोल कर देखा जाय तो उसके नीचे गिलटियां या गोलियां-सी मालूम होती हैं। फिर ये दानों के रूप में प्रकट होती हैं। ये दाने पहले चेहरे, छाती और कंधों पर बड़ी संख्या में उभरते है, फिर शरीर पर निकलते हैं परन्तु कम। इन दानों में पीप पड़ जाती है। प्रत्येक दाने के चारों ओर खाल का रंग लाल हो जाता है और बहुत खुजली लगती है। खुजलाने और नोचने से नर्म खाल फट जाती है और गहरे घाव हो जाते हैं और बहुत तेज़ बुखार होता है। कुछ दिनों के बाद इन दानों की जगह छिलके-से बन जाते हैं जो धीरे धीरे खाल से अलग होने लगते हैं।

रोग प्रकट होने का समय—आठ से सोलह दिन तक।

रोग फैलने का समय—जब तक शरीर पर एक भी खुरंट बाकी रहे।

रोग फैलने का ढंग—यह रोग वायु द्वारा फैलता है। रोगी की प्रयोग की हुई वस्तुओं में चेचक के अनगिनत रोगाणु होते हैं जिन्हें छूने से भी रोग लग सकता है। रोगी के शरीर के खुरंड रोग को तेज़ी से फैलाते हैं।

रोक-थाम के उपाय— 1. प्रत्येक दूसरे-तीसरे वर्ष चेचक का टीका लगवाते रहना चाहिये।

2. यदि बस्ती में रोग ने महामारी का रूप धारण कर लिया हो तो बच्चों का रोज़ाना भली प्रकार निरीक्षण किया जाय कि कहीं बच्चा रोग-ग्रसित तो नहीं हो गया।

3. चिन्ह प्रकट होने के बाद बच्चे को पाठशाला में न आने दिया जाय।

4. रोगी को ऐसे कमरे में अलग रखना चाहिये जहां वायु, प्रकाश और धूप पर्याप्त मात्रा में पहुँचे।

5. जब छिलके गिरने वाले हों तो उनके स्थान पर शरीर पर आयोडीन या कार्बोलिक की मरहम लगानी चाहिये।

6. रोगी की प्रयोग की हुई वस्तुएं और गिरे हुए छिलके जला दिये जायें या भूमि में दबा दिये जायें।

छोटी चेचक (Chickenpox)—यह चेचक की तरह खतरनाक नहीं, परन्तु बच्चों में प्रायः फैलती है।

लक्षण—शरीर पर छोटे-छोटे दाने निकलते हैं और हल्का-सा ज्वर होता है।

रोग प्रकट होने का समय—दो से तीन सप्ताह तक।

रोग फैलने का समय—दाने निकलने से 6 दिन बाद तक और अधिक से अधिक 10 दिन बाद तक, परन्तु आरम्भ में छूत का अधिक डर होता है।

रोग फैलने का ढंग—वही, जो चेचक का है।

रोक-थाम के उपाय—रोगी को पाठशाला से अलग कर दिया जाय और उसे तब तक पाठशाला में न आने दिया जाय जब तक कि उसके शरीर से सारे छिलके न गिर जायें और सारे घाव न भर जायें।

खसरा—बड़ों की अपेक्षा बच्चों पर इसका आक्रमण अधिक होता है।

लक्षण—नाक बहती है, खाँसी आती है, ज्वर होता है, आंखों में जलन होती है और पानी आता है। चार दिन में चेहरे पर भूसी (सुरखी) सी प्रकट होती है। विशेषकर कानों के इर्द-गिर्द और माथे पर, और यह बहुत तेजी से सारे शरीर पर फैल जाती है। चेहरा सूजा हुआ-सा और भारी-भारी-सा लगता है। तीन दिन बाद चित्ते पीले-पीले से हो जाते हैं।

रोग प्रकट होने का समय—आठ से दस दिन में ज्वर, बारह से चौदह दिन और अधिक से अधिक 21 दिन में भूसी प्रकट होती है।

रोग फैलने का समय—भूसी प्रकट होने के चार दिन पहले से पांच दिन बाद तक।

रोग फैलने का ढंग—नाक, कान और गले से जो पदार्थ निकलता है, उस से यह रोग फैलता है।

रोक-थाम के उपाय—रोग के चिन्ह प्रकट होने पर तत्पर रोगी को पाठशाला से अलग कर दिया जाय और उसे उस समय तक पाठशाला में न आने दिया जाय जब तक कि बिलकुल अच्छा

न हो जाय। अच्छा होने में कम से कम चार सप्ताह लगते हैं।

कनफेड़े (Mumps)—यह रोग भी छोटे-छोटे बच्चों में बहुत होता है।

लक्षण—थूक की गिलटियों में, जो कानों के सामने और नीचे होती हैं, जलन और सूजन पैदा हो जाती है। इससे मुँह खोलने और कोई चीज़ निगलने में बड़ी तकलीफ़ होती है। ज्वर आता है और नौ दिन से पहले सूजन कम नहीं होती।

रोग प्रकट होने का समय—12 से 26 दिन तक, प्रायः 18 दिन।

रोग फैलने का समय—जब तक गिलटियों की सूजन बिलकुल समाप्त न हो जाय।

रोग फैलने का तरीका—थूक के साथ रोगाणु निकलते हैं और वायु में मिल जाते हैं। इस वायु में सांस लेने से दूसरे बच्चे भी बीमार हो जाते हैं।

रोक-थाम के उपाय—1. मुँह को साफ रखना चाहिये और लाल दवाई के पानी से गरारा करते रहना चाहिये।

2. रोग का आक्रमण होने से तीन सप्ताह तक बच्चे को पाठशाला में नहीं आने देना चाहिये।

प्लेग (ताऊन)—यह एक आम रोग है और जब फैलता है तो प्रायः महामारी (वबा) का रूप धारण कर लेता है और इससे हजारों जानें नष्ट हो जाती हैं।

लक्षण—रोगी को तेज़ ज्वर चढ़ता है और सिर में सख्त दर्द होता है, कै आती है, कंपकंपी लगती है, बेहोशी हो जाती है और

बगल तथा रान में गिलटियां निकल आती हैं और उनमें पीप पैदा हो जाती है।

रोग प्रकट होने का समय—दो तीन दिन।

रोग फैलने का ढंग—इसके रोगाणु एक विशेष प्रकार की मक्खी के शरीर में रहते हैं जिसे पिस्सू कहते हैं। ये पिस्सू चूहों पर आक्रमण करते हैं, इसलिये पहले यह रोग चूहों में फैलता है और वे मरने लगते हैं। जब बहुत कम चूहे जीवित रह जाते हैं तो भूखे मनुष्य पर आक्रमण करते हैं और उसे प्लेग हो जाता है। एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य तक यह रोग सीधा नहीं फैलता।

रोक-थाम के उपाय—1. जिन दिनों में बस्ती में बीमारी फैली होती है, बच्चों का रोजाना भली प्रकार परीक्षण किया जाय और यदि किसी बच्चे पर सन्देह हो कि उसे रोग लग गया है तो उसे उसके घर भेज दिया जाए।

2. खाने-पीने के सामान को सफ़ाई और सलीके से रखा जाए ताकि घर में चूहे न आ सकें।

3. प्लेग के रोगी को अलग रखा जायं।

4. बस्ती में प्लेग फैलने पर बाहर खुली वायु में झोंपड़े बना कर रहा जाए।

5. प्लेग का टीका लगाया जाय।

हैज़ा—यह भी प्लेग की तरह हानिकारक रोग है। यह भी प्रायः महामारी (वबा) का रूप धारण कर लेता है। इसका रोगी कम ही बचता है।

लक्षण—रोगी को थोड़ी थोड़ी देर बाद कै और दस्त आते हैं।

रोग प्रकट होने का समय—एक से पाँच दिन तक।

रोग फैलने का समय—सात से चौदह दिन तक।

फैलने का ढंग—खाने-पीने की चीजों द्वारा इस के रोगा शरीर में प्रवेश करते हैं। मक्खियां इन रोगाणुओं को खाने-पीने चीजों तक पहुँचाती हैं।

रोक-थाम के उपाय—1. रोगी को तुरन्त अलग कमरे में लिटा जाय। कमरे में खुश्क वायु धूप, तथा प्रकाश भली प्रकार आता क्योंकि सूर्य के प्रकाश और खुश्क वायु में हैजा के रोगाणु जीवि नहीं रह सकते।

2. रोगी के कै और पाखाने को जला दिया जाय या जम के अन्दर दबा दिया जाए।

3. खाने-पीने की वस्तुओं को साफ और सुथरे ढङ्ग से ढ कर रखा जाय ताकि उन पर मक्खियां न बैठ सकें।

खारिश:—यह बड़ा दुःखदायी रोग है और बहुत तेजी फैलता है। इस के भी रोगाणु होते हैं। वे खाल के अन्दर घुस अण्डे देते हैं और उनसे और रोगाणु पैदा हो जाते हैं और शरीर के दूसरे भागों में फैल जाते हैं। जहाँ खाल सब से अधि पतली होती है, वहाँ पर ये रोगाणु सबसे अधिक प्रभाव डालते और वहाँ दाने निकल आते हैं। इन दानों में पीप पड़ जाती यदि दवाई न लगाई जाय तो शरीर पर बहुत से छोटे छोटे घाव जाते हैं।

लक्षण—अंगुलियों और अंगूठों के बीच भागों में और कल कुहनी और घुटनों पर छोटे छोटे दाने निकल आते हैं और खुजली होने लगती है।

रोग प्रकट होने का समय—एक-दो दिन।

रोग फैलने का समय—जब तक खुजली होती रहे।

रोग फैलने का ढंग—रोगी से मिलने और उसकी प्रयोग हुई चीजें छूने से यह रोग फैलता है। मैल इस रोग को फैलाने बहुत मदद करता है।

रोक थाम के उपाय—1. खारिश के प्रकट होते ही बच्चे पाठशाला से घर भेज देना चाहिये, नहीं तो यह रोग शीघ्र ही सा पाठशाला में फैल जायगा और फिर उसको दूर करना बहुत कठि होगा।

2. रोगी को गर्म पानी से रोजाना नहाना चाहिये और शरी को साबुन और पानी से खूब रगड़ रगड़ कर धोना चाहिये औ नहाने के बाद गंधक का मरहम लगाना चाहिये।

3. रोगी के कपड़े रोज़ाना उबलते हुए पानी में धोना चाहि और उसे साफ कपड़े पहनाना चाहिये।

खांसी और जुकाम—ये रोग मौसम के परिवर्तन से प्राय होते हैं। इनका फेफड़े पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

लक्षण—नाक बहती है, खांसी आती है और गले में खारा और जलन सी लगती है।

रोग प्रकट होने का समय—12 से 48 घंटे तक।

रोग फैलने का समय—जब तक रोग रहे।

रोग फैलने का ढंग—रोगाणु वायु द्वारा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँच जाते हैं। रोगी का रूमाल आदि प्रयोग करने से य [illegible]

रोक-थाम के उपाय—1. थूकने, खाँसने और छींकने की अच्छी आदतें डालनी चाहियें। प्रायः स्थानों पर थूकना या नाक साफ करना ठीक नहीं है। यदि इसकी आवश्यकता हो तो दूर हो कर करना चाहिये और यह भी थूक या नाक की गंदगी को मिट्टी से ढक देना चाहिये। खाँसते या छींकते समय नाक के सामने रूमाल रखने की आवश्यकता है।

2. अपने हाथ प्रायः धोते रहना चाहिये।

3. खांसी या जुकाम के रोगी के गिलास या प्याले में पानी नहीं पीना चाहिये।

4. पेन्सिल, कलम आदि मुँह में नहीं रखना चाहिये।

5. यदि जुकाम के साथ ज्वर और सिर दर्द की तकलीफ भी मौजूद हो तो बच्चे को उस समय के लिये पाठशाला से छुट्टी दे देनी चाहिये, जब तक कि वह बिलकुल अच्छा न हो जाय।

मलेरिया (फसली ज्वर):—हमारे देश में जितना दुःख और मौतें इस रोग से होती हैं, शायद और किसी रोग से न होती हों। वर्षा के समाप्त होते ही मलेरिया जोरों से फैलता है।

लक्षण—पहले सर्दी लगती है, फिर तेज ज्वर चढ़ता है, सिर में दर्द होता है और पसीना निकलता है।

रोग प्रकट होने का समय—दो से तीन दिन तक।

फैलने का ढंग—मलेरिया के रोगाणु एक विशेष प्रकार के मच्छर के काटने से शरीर के अंदर प्रवेश करते हैं, जिस के परों के किनारों पर छोटे छोटे दाग (धब्बे) होते हैं। जब ये मच्छर मलेरिया के किसी रोगी को काटते हैं तो इस रोग के रोगाणु उनके शरीर के अंदर प्रविष्ट हो जाते हैं और फिर जब वे किसी स्वस्थ व्यक्ति को

काटते हैं तो इन रोगाणुओं को उसके शरीर के अन्दर छोड़ देते हैं। यहां ये रोगाणु लहू के लाल कणों (Cells) पर आक्रमण करते हैं और उन पर स्वयं पलते हैं। ये बहुत तेज़ी से उन्नति करते हैं। फिर ये फट कर बहुत से रोगाणु हो जाते हैं। ये खून के उन कणों को नष्ट कर देते हैं और अन्य नये कणों पर आक्रमण करते हैं। इस प्रकार यह काम लगातार जारी रहता है और अन्त में उस व्यक्ति को ठंड लगने लगती है और तेज़ ज्वर चढ़ता है।

रोक-थाम के उपाय—1. सब से अच्छा तो यही है कि मलेरिया के मच्छर पैदा न होने दिये जायें। मच्छर ठहरे हुए पानी में अंडे देता है। इस लिये उन गढ़ों को भर देना चाहिये, जहाँ पानी जमा होता है ताकि मच्छर पैदा होने के स्थान न रहें। यदि यह न हो सके तो सप्ताह में एक बार पानी के तल पर मिट्टी का तेल या डी. डी. टी छिड़क दिया जाय ताकि मच्छरों के अंडे और लार्वे नष्ट हो जायें।

2. पानी के बर्तनों और हौजों को ढक कर रखा जाय ताकि उनके अन्दर मच्छर न रह सकें।

3. दिन के समय मच्छर अन्धेरे कमरों में छुपे रहते हैं क्योंकि वे प्रकाश में रहना पसन्द नहीं करते। जब रात होती है तो यही मच्छर बाहर निकल कर लोगों को काटते हैं। इसलिये दिन के समय कमरे की सारी खिड़कियां और दरवाज़े बन्द करके लोबान या गूगल जलाया जाय ताकि सारे मच्छर मर जायें।

4. सोते समय मच्छरों से बचने के लिए मच्छरदानी लगाई जाय या सरसों का तेल या तेल के साथ काफ़ूर या युकलिपटस आयल मिलाकर शरीर के उन भागों पर भली प्रकार मला जाय जो खुले हैं।

यदि आप अपनी श्रेणी और पाठशाला के बच्चों के आम स्वास्थ्य का रीकार्ड रखें, बच्चों के संरक्षकों को इस से कभी कभी सूचित करते रहें और उन्हें बच्चों की शारीरिक कमज़ोरियों और रोगों के इलाज करने में मदद दें तो इससे पाठशाला का काम अच्छा होगा बच्चों का स्वास्थ्य अच्छा रहने से उनकी तालीम ठीक हो सकेगी बच्चों के माता-पिता के साथ आपके अच्छे सम्बन्ध स्थापित होंगे, और उनसे पाठशाला के काम में भिन्न भिन्न प्रकार की सहायता लेने के अवसर मिलेंगे।

बच्चों के स्वास्थ्य के रीकार्ड में दो चीज़ें विशेष तौर पर दर्ज करनी चाहिये—वज़न और क़द। इसके लिये एक तराज़ू और पैमाने की आवश्यकता है।

वज़न तोलनाः—वज़न प्रतिमास किसी विशेष तिथि (जैसे अन्तिम या पहली तिथि) को ले लीजिये। किसी बच्चे का भार लेते समय इस बात का ध्यान रखिये कि वह जूते और कोट पहने हुए न हो और उसके हाथ नीचे की ओर गिरे हुए हों।

क़द (लम्बाई) मापनाः—क़द मापने के लिये किसी दीवार में फ़ुट और इंच के निशान बना लें। जिस बच्चे का क़द मापना हो, उसे दीवार के सहारे इस प्रकार खड़ा कीजिये कि उसकी पीठ और सिर दीवार को छूता रहे। बाज़ू दोनों ओर शरीर के साथ चिपके हुए हों। एड़ियां मिली हुई हों और आँखें सीध में किसी चीज़ को देख रही हों। सिर के ऊपर गत्ते का एक गुनिया के समान टुकड़ा, जो कि किसी गत्ते के बक्स में से बनाया जा सकता है, इस प्रकार रखा जाय कि वह दीवार के साथ सीधा समकोण बनाये। क़द का माप इंच के चौथे भाग तक होना चाहिये।

बच्चे और उसके संरक्षक को बताया जाए कि उस का वजन और कद कितना है। यदि किसी बच्चे का वजन घट रहा हो, तो उसका कारण जानने की कोशिश करनी चाहिये और ऐसा उपाय बताना चाहिये जिस से वह अपनी कमी पूरी कर सके। इस रीकार्ड का ठीक प्रयोग यह है कि इस से बच्चों में बढ़ने और उन्नति करने की इच्छा पैदा की जाय।

2. कसरत और खेल

कसरत :—कसरत और खेल का प्रोग्राम बनाते समय इस बात को सामने रखना चाहिये कि किसी विशेष आयु के बच्चों की शारीरिक विशेषताएं क्या हैं ताकि उन के लिए ठीक कसरतें सोची जा सकें और उन्हें ऐसी कसरतों से बचाया जा सके जो उनके शरीर के लिये हानिकारक हों।

6 से 8 साल तक के बच्चों का शारीर इतनी तेजी से नहीं बढ़ता जिस गति से 6 साल से पहले बढ़ता है। सांस सुस्त हो जाता है और खून का दौरा मध्यम पड़ जाता है। इस अवस्था में हृदय की कमजोरी और थकान की संभावना बढ़ जाती है। फिर भी बच्चे ऐसे खेल खेलने के लिये बेचैन रहते हैं जिन में ज्यादा मेहनत करनी पड़े। इसलिये इस बात का डर है कि यदि खेल और कसरत का प्रोग्राम सूझ-बूझ से न बनाया गया तो बच्चे आवश्यकता से अधिक कसरत करके नुकसान उठायेंगे। इस समय दूध के दाँतों के स्थान पर पक्के दाँत निकल आते हैं और हाज़मा कुछ बिगड़ सा जाता है। आठ वर्ष की आयु तक दिमाग़ का वजन जितना बढ़ना होता है, बढ़ चुकता है। चेतन-शक्ति उन्नत होती है और विचार-धारा तेज हो जाती है। परन्तु किसी एक चीज पर ध्यान स्थिर नहीं रहता, इस लिए आरम्भ

न में भिन्न भिन्न प्रकार की चीजें शामिल करनी होंगी जिन
ल्पना-शक्ति से काम लेने का अवसर हो। छः वर्ष तक बच्चा
अकेला खेलना पसन्द करता है। इसके बाद वह दूसरे बच्चों के
खेलना आरम्भ करता है। उसे दूसरों का मुकाबला करने में
प दिलचस्पी पैदा होती है। इसलिये कसरत और खेल ऐसे होने
यें जिन में बहुत से बच्चे एक साथ भाग ले सकें, एक दूसरे का
बला कर सकें और उनमें शरीर के भिन्न भिन्न भागों को सुदृढ़
ने का अवसर हो। इन खेलों का उद्देश्य बच्चे के सामने साफ़
ट होना चाहिये अर्थात् यह कि उसे क्या करना है, जैसे पीछा
ना, शिकार करना, किसी के पीछे चलना या दौड़ना या किसी
दौड़ कर पकड़ना, आंख-मिचोली खेलना या पतंग, झोंपड़ी,
गज के खिलौने और टोकरियां बनाना, ड्रामा करना, नकल
खेल खेलना या ऐसे खेल खेलना जिन में नाच-गाने, स्वर-ताल
साथ मार्चिंग आदि के अवसर मिलें जैसा कि बुनियादी तालीम
पाठ्यक्रम में बताया गया है।

शारीरिक विशेषताओं का ध्यान रखने के साथ-साथ प्रोग्राम
नाने में आप को यह बात भी सामने रखनी होगी कि उस के द्वारा
तुलित और सामान्य उन्नति हो सके। इस विचार से मनोरंजक
सरतें या खेल काफ़ी नहीं होंगे। इस प्रोग्राम के द्वारा बच्चे के
न्दर यह चेतनता पैदा हो जानी चाहिए कि पूरी आयु स्वस्थ और
ष्ट-पुष्ट रहना आवश्यक है और इस के लिये कसरत और खेल
ा सिलसिला पाठशाला छोड़ने के बाद भी जारी रखना चाहिये।

कसरत (व्यायाम)—

शारीरिक उन्नति के बारे में जो नई धारणा है, उसके अनुसार
प्रकार की नियम-बद्ध ड्रिल (Mass Drill) ज़्यादा अच्छी

नहीं समझी जाती, परन्तु उसको बिलकुल छोड़ देना भी ठीक नहीं, क्योंकि यह शरीर के ढांचे की कई कमियों के दूर करने में सहायता देती है। प्रोग्राम के आरम्भ में कुछ देर के लिये नियमबद्ध ड्रिल करवाना लाभकारी सिद्ध होगा।

व्यायाम के प्रोग्राम को आप चार बड़े बड़े भागों में बांट सकते हैं :—

1. बाजुओं का व्यायाम।
2. शरीर का व्यायाम।
3. शरीर साधने का व्यायाम।
4. दौड़ने और कूदने का व्यायाम।

इनके अतिरिक्त पहले-पहल ऐसे व्यायाम भी करवाने चाहियें जो अध्यापक की आज्ञा मिलते ही बच्चे करने लगते हैं। जैसे आज्ञा "सामने चलो" सुनते ही चल देना, या आज्ञा "रुक जाओ" सुनते ही रुक जाना या आज्ञा "बरखास्त (Dismiss)" सुनते ही लाइन तोड़ कर तितर-बितर हो जाना। इसे शारीरिक व्यायाम का पहला पाठ समझिए। बच्चे इसे बहुत शीघ्र ही सीख लेते हैं।

1. बाजुओं का व्यायाम:— (क) बाजुओं को बगलों की ओर फैलाना—पहले बाजू मोड़ो और फिर पूरी तरह बगल की ओर कंधों के बराबर एक लाइन में फैला दो। अंगुलियाँ और अंगूठे सीधे और मिले हुए रहें और हथेलियां नीचे की ओर हों।

(ख) बाजू ऊपर की ओर फैलाना—पहले बाजू मोड़ो और फिर पूरी तरह ऊपर की ओर फैला दो। हाथों का फासला कंधों की चौड़ाई के बराबर हो। अंगुलियाँ और अंगूठे सीधे मिले हुए हों और हथेलियां अन्दर की ओर रहें और बाजू एक लाइन में हों।

(ग) बाजू आगे फैलाना—पहले बाजुओं को मोड़ो और गे को कंधों के बराबर फैला दो। शरीर सीधा रहे और हथेलियां दर की ओर और हाथों का फ़ासला कंधों की चौड़ाई के बराबर हों।

(घ) बाजू नीचे फैलाना—बाजू मोड़ कर नीचे की ओर लाओ। अंगुलियां और अंगूठे सीधे रखो और हथेली अन्दर की र। इन व्यायामों से सीना चौड़ा होता है। बाजुओं के रग ौर पट्ठे दृढ़ होते हैं और जोड़ों में लचक पैदा होती है।

2. शरीर (धड़) के व्यायाम:—(क) शरीर को नीचे ोड़ना—पहले छाती उभारो। फिर रीढ़ के ऊपर छाती को नीचे की ोर झुकाओ। सिर को अलग गति न दो अपितु शरीर के साथ ीचे झुकने दो। कमर के निचले भाग को मत मोड़ो। घुटने ीधे रखो। सांस मत रोको।

इस से छाती चौड़ी होती है और चलने का ढंग ठीव होता है।

(ख) शरीर को आगे मोड़ना—छाती उभार कर शरीर के धीरे धीरे कूल्हों पर से झुकाओ। पीठ सीधी रखो। सिर के आगे मत झुकाओ अपितु कुछ ऊँचा रखो। घुटने सीधे रखो

(ग) शरीर को आगे और नीचे की ओर मोड़ना—शरी को आगे की ओर और नीचे झुकाओ जहाँ तक भी झुका सको घुटने सीधे रखो।

इन व्यायामों से पीठ के रग और पट्ठे दृढ़ होते हैं। क सुडौल और लचकदार हो जाते हैं।

(घ) शरीर को घुमाना—शरीर को जहाँ तक हो सके दायें बायें घुमाओ। परन्तु पैरों को मत हिलाओ और सिर और बाजुअ को, सिवाय उस गति के जो शरीर के साथ हो, और मत हिलाओ

झुलाओ। दोनों घुटनों को सीधा रखो और दोनों पैरों को मजबूती से जमीन पर रहने दो। इस व्यायाम में छाती चौड़ी होती है और पसलियों के रग-पठ्ठे दृढ़ होते हैं।

धड़ (शरीर) के व्यायाम से पोसचर (*Posture*) का सुधार होता है। इसके लिये आवश्यक है कि जब शरीर सीधी अवस्था में वापस आ जाय तो इसी अवस्था में कुछ मिनटों तक बिना हिलेजुले स्थिर रखा जाय।

इनके अतिरिक्त कुछ व्यायाम ऐसे भी कराने चाहियें जिनमें बाजू, पैर धड़ सब का व्यायाम हो। इनमें से कुछ नीचे दिये गये हैं।

(क) ठीक तरह से खड़ा होना—जितना ऊँचा शरीर खींचा जा सकता है, खींच कर खड़ा होना।

(ख) ठीक तरह से पालती मार कर बैठना, पाँवों को अंगुलियों से पकड़ना और घूम कर पीछे की ओर देखना, घुटना मोड़ कर बैठना, अंगुलियों के बल उकड़ूँ बैठना और फिर पंजों पर खड़े होना।

(ग) कूद कर टांगे फैलाना, हाथ की अंगुलियों से पाँव का पंजा छूना (पैरों का मध्य-गत फासला लगभग दो फुट रहे। दोनों पैरों पर वज़न बराबर हो और अंगूठे सामने की ओर हों)।

(घ) पालती मारकर बैठना और माथे से जमीन छूने की कोशिश करना।

(ङ) पाँव सिमटा कर बैठना और सिर को झुका कर घुटनों के बीच रखना और सीधे होना।

(च) पाँव सिमटा कर चित लेटना और टाँगों को ऊपर वायु में फैलाना और फिर नीचे लाना।

(छ) टाँगें फैला कर घुटनों को बिना मोड़े हुए टखने पकड़ना और सीधा होना।

(ग) बाजू आगे फैलाना—पहले बाजुओं को मोड़ो और आगे को कंधों के बराबर फैला दो। शरीर सीधा रहे और हथेलियां अंदर की ओर और हाथों का फासला कंधों की चौड़ाई के बराबर हो।

(घ) बाजू नीचे फैलाना—बाजू मोड़ कर नीचे की ओर फैलाओ। अंगुलियां और अंगूठे सीधे रखो और हथेली अन्दर की ओर। इन व्यायामों से सीना चौड़ा होता है। बाजुओं के रग और पट्ठे दृढ़ होते हैं और जोड़ों में लचक पैदा होती है।

2. शरीर (धड़) के व्यायाम:—(क) शरीर को नीचे मोड़ना—पहले छाती उभारो। फिर रीढ़ के ऊपर छाती को नीचे की ओर झुकाओ। सिर को अलग गति न दो अपितु शरीर के साथ नीचे झुकने दो। कमर के निचले भाग को मत मोड़ो। घुटने सीधे रखो। सांस मत रोको।

इस से छाती चौड़ी होती है और चलने का ढंग ठीक होता है।

(ख) शरीर को आगे मोड़ना—छाती उभार कर शरीर को धीरे धीरे कूल्हों पर से झुकाओ। पीठ सीधी रखो। सिर आगे मत झुकाओ अपितु कुछ ऊँचा रखो। घुटने सीधे

(ग) शरीर को आगे और नीचे की ओर
को आगे की ओर और नीचे झुकाओ जहाँ तक भी
घुटने सीधे रखो।

इन व्यायामों से पीठ के रग और पट्ठे
सुडौल और लचकदार हो जाते हैं।

(घ) शरीर को घुमाना
बायें घुमाओ। परन्तु पैरों को
को, सिवाय कम गति

झुलाओ। दोनों घुटनों को सीधा रखो और दोनों पैरों को मजबूती से ज़मीन पर रहने दो। इस व्यायाम में छाती चौड़ी होती है और पसलियों के रग-पट्ठे दृढ़ होते हैं।

धड़ (शरीर) के व्यायाम से पोसचर (Posture) का सुधार होता है। इसके लिये आवश्यक है कि जब शरीर सीधी अवस्था में वापस आ जाय तो इसी अवस्था में कुछ मिनटों तक बिना हिलेजुले स्थिर रखा जाय।

इनके अतिरिक्त कुछ व्यायाम ऐसे भी कराने चाहियें जिनमें बाजू, पैर धड़ सब का व्यायाम हो। इनमें से कुछ नीचे दिये गये हैं।

(क) ठीक तरह से खड़ा होना—जितना ऊँचा शरीर खींचा जा सकता है, खींच कर खड़ा होना।

(ख) ठीक तरह से पालती मार कर बैठना, पाँवों को अंगुलियों से पकड़ना और घूम कर पीछे की ओर देखना, घुटना मोड़ कर बैठना, अंगुलियों के बल चकड़ू बैठना और फिर पंजों पर खड़े होना।

(ग) कूद कर टांगें फैलाना, हाथ की अंगुलियों से पाँव का पंजा छूना (पैरों का मध्य-गत फासला लगभग दो फुट रहे। दोनों पैरों पर वज़न बराबर हो और अंगूठे सामने की ओर हों)।

(घ) पालती मारकर बैठना और माथे से ज़मीन छूने की कोशिश करना।

(ङ) पाँव सिमटा कर बैठना और सिर को झुका कर घुटनों के बीच रखना और सीधे होना।

(च) पाँव सिमटा कर चित लेटना और टाँगों को ऊपर वायु में फैलाना और फिर नीचे लाना।

(छ) टाँगें फैला कर घुटनों को बिना मोड़े हुए टखने पकड़ना और सीधा होना।

(ज) घुटनों पर खड़ा होना।

(झ) धड़ को झुका कर हाथों को ज़मीन पर रखना और सीधा होना।

(ञ) पीठ के बल लेट कर टाँगें ऊपर उठाना, हाथों से पैरों के अंगूठे पकड़ना इस प्रकार कि घुटने सीधे रहें।

(ट) पीठ के बल लेटकर पाँव के अंगूठे देखने के लिये सिर ऊपर उठाना।

3. शरीर साधने के व्यायाम

(क) एड़ी उठाना—एड़ियाँ मिला कर धीरे धीरे ज़मीन से जितनी ऊँची उठा सकें उठाओ और गिराओ, शरीर सीधा रखो और पंजों पर चलो।

(ख) एड़ी उठाना और घुटने मोड़ना-पहले एड़ियां उठाओ, फिर जहां तक हो सके घुटने मोड़ो, एड़ियां मिली हुई रहें, सिर और शरीर सीधा रहे।

(ग) पाँव आगे की ओर उठाना—जितना ऊँचा हो सके, पैर आगे की ओर उठाओ। घुटने सीधे रहें और अंगूठे ऊपर उठे रहें और दूसरा पाँव, जिस पर शरीर का सारा बोझ हो, बिलकुल सीधा रहे। इसी तरह पैर को दायें-बायें और पीछे उठाने का व्यायाम भी होता है।

(घ) सीधी लकीर पर नेता के पीछे चलना-स्वतन्त्रता से दौड़ना और सङ्केत पर (सीटी या ताली बजाकर) एक टाग पर खड़ा होना। खड़िया (मिट्टी) की लकीर पर दायें-बायें हाथ फैला कर चलना।

(ङ) उकड़ूँ बैठ कर पंजों पर धीरे धीरे खड़ा होना।

(च) स्वतन्त्रता से तेज चलना और संकेत से एड़ियों पर चलना।

(छ) पंजों पर दायें या बायें चलना और संकेत पर दिशा बदलना।

(ज) एक टाँग पर खड़े होना और दूसरी टाँग के घुटने को छाती से लगाना।

इन व्यायामों से मानसिक शक्ति बढ़ती है और पोस्चर के विकारों का सुधार होता है।

4. दौड़ने और कूदने का व्यायाम

(क) कूद कर लकीर तक पहुँचना।

(ख) सरपट दौड़ना (घुटने जितने ऊपर उठा सको उठाओ)।

(ग) जितना भी ऊँचा हो सके उछलना।

(घ) उकड़ूँ बैठ कर कूदना (टांगों को उछाल कर हाथों तक लाना)।

(ङ) एक फर्जी नाले को फाँदना, जितना लम्बा कूदा जा सके कूदना।

(च) एक फर्जी दीवार को फाँदना, जितना ऊँचा कूदा जा सके कूदना।

(छ) दौड़ने के बगैर स्थान पर जितना ऊँचा कूदा जा सके कूदना।

(ज) खड़े हो कर जितना लम्बा कूदा जा सके कूदना।

(झ) दौड़ते हुए जमीन पर दूर दूर बने हुए तीन निशानों को फाँदना।

पाँव सोटी को लग जाएगा तो सोटी तुरन्त ही जमीन पर गिर पड़ेगी और बच्चे को चोट नहीं लगेगी।

दौड़ने और कूदने के व्यायाम से रक्त-संचार, श्वास-क्रिया और पाचन-शक्ति पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

खेल —खेल में बच्चे खुशी से सम्मिलित होते हैं। न केवल खेल से बच्चों को शारीरिक लाभ होता है अर्थात् उनके रंग और पट्ठे दृढ़ होते हैं बल्कि इससे उनमें बहुत-सी सामाजिक विशेषताएँ जैसे—सहयोग, अनुशासन, आत्म-विश्वास आदि, पैदा होती हैं।

आपके आस-पास के इलाके के बच्चे बहुत-से खेल खेलते होंगे। यदि आप ध्यान से देखें कि बच्चे किस तरह बगैर किसी बड़े व्यक्ति की निगरानी के खेलते हैं तो आपको मालूम होगा कि प्रत्येक खेल के कुछ नियम-उपनियम होते हैं जिनकी बच्चे प्रायः दृढ़ता से पावन्दी करते हैं और यही कारण है कि उनके खेल बगैर किसी गड़बड़ के होते रहते हैं। इन खेलों में एक बड़ी विशेषता यह है कि इनके लिए किसी सामान आदि की आवश्यकता नहीं होती। इस लिए पाठशाला में इनके चालू करने में कोई खर्च नहीं होगा। आप अपने इलाके की प्रसिद्ध और मनोरंजक खेलों में से उचित खेल चुन सकते हैं। कबड्डी और कई "पीछा करने के खेल" भारत के लगभग हर इलाके में खेले जाते हैं। "पीछा करने के खेल" विशेष कर इस आयु के बच्चे के लिए बहुत अच्छे हैं। इनमें चालाकी से चक्कर काट कर पीछा करनेवाले से बचना होता है और सोच-विचार से काम लेना पड़ता है। इनमें हर समय सोचने और ठीक अनुमान लगाने और निर्णय करने का पर्याप्त अवसर मिलता है। व्यायाम के अन्त में इस प्रकार के खेल खेलना अधिक लाभदायक है। कुछ

ऐसे खेलों के नाम नीचे दिये जाते हैं जो लगभग हर जगह खेले जा सकते हैं।

कबड्डी, चूहा भाग बिल्ली आई।

चील-झपट्टा, नदी पार।

मजदूरी, बन्दर-बन्दर।

पोसचर—ऊपर दिए हुए कार्य-क्रम में हर जगह ठीक पोसचर पर ज़ोर दिया गया है। खड़ा होने, बैठने, चलने और व्यायाम करने के हर समय अच्छे पोसचर का कायम रखना और बुरे पोसचर का सुधार करना अति आवश्यक है। जिन लोगों के खड़े होने, बैठने और चलने का ढंग (पोसचर) अच्छा होता है, वे देखने में भले लगते हैं और उनके काम करने की गति अच्छी होती है। किसी व्यक्ति को पहली बार देखकर आप जो राय कायम करते हैं, इसमें उसका पोसचर बड़ा प्रभाव डालता है। यदि पोसचर ठीक है तो शरीर के भिन्न भिन्न भाग अपना अपना काम भली प्रकार बेरोक-टोक करते हैं। इसका शारीरिक विकास और स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। केवल यही नहीं, वह व्यक्ति, जिसका पोसचर ठीक है, स्वयं अपने ऊपर गौरव कर सकता है। जो बच्चा गर्दन झुका कर और कूबड़ निकाल कर बैठता या खड़ा होता है, वह न केवल भद्दा लगता है अपितु वह हर काम में सुस्ती दिखाता है। इसकी अपेक्षा जिसका शरीर सीधा रहता है, वह चुस्त-चुस्त दिखाई देता है और उसे अपने ऊपर भरोसा होता है। अध्यापक प्रायः बच्चों के शरीर और कपड़ों की सफाई पर तो ज़ोर देता है, परन्तु पोसचर पर अधिक ध्यान नहीं देता। यह अति आवश्यक है कि आप अच्छे और बुरे पोसचर को पहचान सकें और यह भी समझ लें कि अच्छे पोसचर को किस

प्रकार स्थापित किया जा सकता है और ख़राब पोसचर को कैसे सुधारा जा सकता है।

ठीक पोसचर—वही है जिसमें शरीर पर कोई अनावश्यक दबाव न पड़े और आराम के साथ शरीर से काम लिया जा सके। इस विचार से खड़े होने, बैठने, चलने और व्यायाम करने में ठीक पोसचर रखने के ढंग भिन्न भिन्न होंगे।

खड़े होने का ठीक पोसचर—सिर थोड़ा-सा पीछे, ठोड़ी अन्दर की ओर झुकी हुई, छाती थोड़ी-सी आगे की ओर निकली हुई और ऊपर की ओर उठी हुई, पेट चपटा, कमर सीधी, घुटने थोड़े-से झुके हुए, पाँव के अंगूठे आगे की ओर सीधे और शरीर का भार दोनों पाँव पर बराबर और अधिकतर एड़ियों पर हो। इस अवस्था में शरीर का सारा भार कुछ इस प्रकार बंटा हुआ होता है कि शरीर को जिस ओर भी चाहें सुगमता से हिला-जुला सकते हैं। ठीक पोसचर की जांच यह है कि यदि एक साहल कान की जड़ से लटकायें तो वह कंधे, कूल्हे के जोड़, घुटने की प्याली और टखने के बीच से गुजरेगी।

बैठने का ठीक पोसचर—ठीक पोसचर के साथ खड़े होने की अवस्था में धड़ का जो अन्दाज होता है, वह बैठने में भी रखना चाहिये अर्थात् धड़, गर्दन और सिर की वही अवस्था होनी चाहिये जो खड़े होने की दशा में ठीक समझी जाती है। पालथी मार कर इस प्रकार बैठना चाहिये कि दोनों रानों पर दबाव समान रहे।

चलते समय का ठीक पोसचर—चलते हुए भी खड़े होने के पोसचर की विशेषतायें कायम रहनी चाहियें। पांव के अंगूठे सीध में आगे की ओर संकेत करते रहें और हाथ ढीले लटके रहें।

व्यायाम के समय का ठीक पोसचर —बाजू के व्यायामों में आदि से अन्त तक शरीर सीधा रखना आवश्यक है। घड़ के व्यायामों में जहाँ झुकने की आवश्यकता होती है वहां यह भी आवश्यक है कि व्यायाम आरम्भ करने से पहले और उसके बाद समाप्त होने पर सीधा खड़ा होना चाहिये। शरीर साधने के व्यायामों में केवल संतुलन स्थापन कर लेना ही पर्याप्त नहीं है अपितु शरीर का सीधा रखना भी आवश्यक है। इसी तरह हर प्रकार की कूद में शरीर अच्छी तरह खिंचा हुआ और तना हुआ होना चाहिये। बच्चों को यह बात भली प्रकार अनुभव करा देना चाहिये कि कोई भी व्यायाम उस समय तक लाभकारी सिद्ध न होगा, जब तक कि उसके दौरान में ठीक पोसचर न रखा जाय।

पोसचर का सुधार —आरम्भ में आपका काम अधिकतर बच्चों को बुरे पोसचर से बचाना है, क्योंकि इस आयु में पोसचर की बुराइयां बहुत कम होती हैं। इस बात का ध्यान रखिए कि बच्चों को यह कहने पर कि अपना शरीर सीधा रखो, वे शरीर को अकड़ायें नहीं। देखने में आया है कि बच्चे शरीर को सीधा रखने का ठीक अर्थ नहीं समझते। वे शरीर को सीधा रखने की जगह अकड़ा देते हैं और ऐसा करते समय उनकी पीठ में एक गढ़ा-सा पड़ जाता है और पेट आगे की ओर निकल आता है। इस प्रकार उनकी बहुत-सी शक्ति क्षीण हो जाती है। ऐसी अवस्था में आपको स्वयं ठीक पोसचर का नमूना पेश करना चाहिये और जिन बच्चों का पोसचर ठीक हो, उनकी मिसाल देनी चाहिये। अच्छे पोसचर के चार्ट भी इस सिलसिले में लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं। इन्हें [illegible] पर लटकाना चाहिये और आवश्यकता हो तो उनकी ओर [illegible] ध्यान दिलाना चाहिये।

प्रत्येक काम में आप को देखना चाहिये कि बच्चे ठीक पोसचर स्थापन करें, चाहे पढ़ाई-लिखाई का काम हो या दस्तकारी हो या खेल-कूद। बच्चों को बताइये कि पढ़ते-लिखते समय वे पुस्तक और कापी को आंख से एक फुट दूर रखें ताकि वे कमर या गर्दन झुका कर काम करने की आदत से बच सकें। इसी प्रकार दस्तकारी के समय इस बात का ध्यान रखिये कि बच्चे ठीक पोसचर के साथ खड़े हों या बैठें। रीढ़ की हड्डी कई तरह टेढ़ी हो सकती है। बैठते समय यदि कोई एक ही पाँव को दबा कर बैठना रहे या खड़े होते समय एक ही पाँव पर शरीर का पूरा बोझ सँभालता रहे या बागवानी के काम में पानी का फव्वारा या और कोई भारी चीज़ प्रायः एक ही हाथ में ले कर चलता रहे तो रीढ़ की हड्डी एक ओर अधिक झुक जायगी और पोसचर खराब हो जायगा। यदि कोई चुस्त और तंग कपड़े पहनने का आदी हो जाय तो भी पोसचर बिगड़ने का भय है। इसलिये बच्चों और उनके संरक्षकों को बताना चाहिये कि बच्चे के लिये ढीली-ढाली पोशाक होनी आवश्यक है।

व्यायाम और खेल का समय—अब यह प्रश्न उठता है कि बेसिक स्कूल में व्यायाम और खेल के लिये कितना और कौन-सा समय रखना उचित होगा। प्रातःकाल स्वास्थ्य और सफ़ाई का निरीक्षण करने के बाद 15 मिनट तक व्यायाम कराना लाभदायक सिद्ध होगा। तीसरे पहर स्कूल के समय के पश्चात् आधा घंटा खेलों के लिये भी रखना चाहिये। उन दो घंटियों के मध्य में भी थोड़ा सा व्यायाम कराना ठीक है जिन में दिमाग को थका देनेवाले विषय पढ़ाये जाते हों या ऐसा काम कराया जाता हो जिसमें शरीर

को बगैर हिलाये-जुलाये, एक स्थान पर बैठ कर काम करना पड़े। इस समय ऐसे व्यायाम जैसे "अपने शरीर को जितना ऊंचा कर सकते हो करके खड़े हो जाओ," "एड़ियां ऊपर उठाओ," "एड़ियों पर बैठो" आदि दो तीन मिनिट के लिये श्रेणी के कमरे में ही कराये जा सकते हैं।

खेल का स्थान—व्यायाम के लिये एक विशाल मैदान की आवश्यकता है क्योंकि खुली वायु में ताज़गी पैदा होती है। हर स्कूल के समीप कुछ जमीन अवश्य होती है जो इस काम के लिये प्रयोग की जा सकती है। जब वर्षा हो रही हो या मौसम बिगड़ा हुआ हो और बाहर व्यायाम न कराया जा सके तो श्रेणी के कमरे में खिड़कियां और दरवाजे खोल कर व्यायाम कराना चाहिये।

खेल के लिये कपड़े—व्यायाम के लिये भारी पोशाक या तंग कपड़े और भारी जूते ठीक नहीं हैं। कपड़े हल्के होने चाहियें। जांघिया या निकर और बनयान या आधी आस्तीन वाली कमीज उचित पहनावा है। यदि इसको स्कूल की आम वर्दी (Uniform) बना दिया जाय तो और भी अच्छा है। न केवल यह सस्ता है अपितु सुन्दर भी है। इसे पहन कर बच्चा चुस्त और फुर्तीला दिखाई देता है और इस में हर काम में सुगमता होती है।

व्यायाम और खेल कराने का तरीका—शारीरिक शिक्षा की पहली शर्त यह है कि इस सिलसिले में जो कुछ कराया जाय, बच्चे खुशी से करें। बच्चों के सामने प्रत्येक अभ्यास का कोई न कोई उद्देश्य होना चाहिये कि उन्हें किसी विशेष अभ्यास से क्या लाभ पहुंचेगा। परन्तु इसके लिये किसी लम्बे-चौड़े भाषण की आवश्यकता नहीं है। थोड़े से शब्दों में यह बात बता देनी चाहिये और अभ्यास आरम्भ

करवा देना चाहिये क्योंकि अधिक समय तक बच्चों को चुप खड़ा रखने में डर है कि उनकी इच्छा और दिलचस्पी कम हो जायगी। यह भी आवश्यक है कि उन्हें पहली बार पर्याप्त देर तक अभ्यास करने का समय दिया जाये। बच्चे स्वयं अपने काम को बेहतर दिखाना चाहते हैं इसलिये आपको चाहिये कि जो बच्चे किसी व्यायाम को ठीक ढंग से कर रहे हों, उनकी प्रशंसा करें। इससे दूसरे बच्चे भी वैसा ही करने की कोशिश करेंगे। यदि व्यायाम करने में कोई ऐसी भूल या कमी हो जो अधिकतर बच्चों में दिखाई दे तो उसे नोट कर लीजिये और जब वे थोड़ा आराम करने या दम लेने के लिये ठहरें तो थोड़े-से शब्दों में उन्हें इसकी ओर ध्यान दिलाइये और फिर उसका ठीक अभ्यास करने का अवसर दीजिये। यह ठीक नहीं है कि बच्चे जैसा भी भला-बुरा कर रहे हों, उन्हें करने दिया जाय। सुधार की ओर हर समय ध्यान देने की बहुत आवश्यकता है।

पहलेपहल जितने कम "आदेश" दिये जायें अच्छा है। आदेश जोशीले और सजीव ढंग में देना चाहिये और स्वर एक विशेष झटके पर खतम होना चाहिये। जो कुछ सिखाना हो, उसे पहले स्वयं करके दिखाइये और बच्चों से कहिये कि वे आपके साथ साथ वैसा ही करें। इससे उन्हें ठीक ढंग अपनाने में सुगमता होगी। पहले-पहले इस बात पर अधिक ज़ोर नहीं देना चाहिये कि सब बच्चे हर चीज़ इकट्ठे करें। पूरी टोली को उस समय तक ऐसे रखना ठीक नहीं है, जब तक कि कमज़ोर से कमज़ोर और सुस्त से सुस्त बच्चा इस चीज़ को समाप्त न कर ले। इससे बच्चों में बेचैनी, परेशानी और घबराहट पैदा होती है। हाँ, इस बात में "आदेश"

के अनुसार किसी चीज़ को एक साथ करने की योग्यता अवश्य पैदा होनी चाहिये।

सारी श्रेणी को पूरे समय काम पर लगाये रखना चाहिये। यदि श्रेणी बड़ी हो तो उसको कई गुटों में बांट कर प्रत्येक गुट एक-एक चुस्त बच्चे को सौंप देना चाहिये। जिन बच्चों में नेतृत्व की विशेषताएँ हों, उन पर विशेष ध्यान देना चाहिये। वे खेल और व्यायाम का प्रोग्राम चलाने में अध्यापक की बड़ी मदद कर सकते हैं।

आरम्भ में अध्यापक स्वयं किसी सचेत और स्वस्थ बच्चे को नेता नियुक्त कर दे तो अच्छा है। इससे नेतृत्व के एक स्तर का निश्चय हो जायगा। धीरे धीरे बच्चों को स्वयं अपना लीडर चुनने का ढंग आना चाहिये। उनकी मदद के लिये हो सकता है कि अध्यापक दो-तीन योग्य बच्चों का नाम तजवीज़ कर दे और उनमें से किसी एक को बच्चे अपना नेता चुन लें परन्तु धीरे-धीरे बच्चों को अध्यापक की मदद के बग़ैर अपने तौर पर अपना लीडर चुनने के योग्य हो जाना चाहिये।

बच्चों के लीडर (नेता) से काम लेते समय एक बात याद रखने की है कि उसे भी थोड़ी-बहुत देर श्रेणी के साथ खेल और व्यायाम में भाग लेना चाहिये। ऐसा न हो कि वह केवल दूसरे बच्चों के खेल और व्यायाम की निगरानी करता रहे। देखा गया है कि अधिकतर नेता अपने आपको अध्यापक समझने लगता है और स्वयं अपनी श्रेणी के साथ न खेलता है और न व्यायाम करता है और इस कारण उसका स्तर गिर जाता है।

खेल सिखाने के लिये चेतावनी—जो भी खेल सिखाना हो, पहले उसके नियम-उपनियम भली प्रकार समझ लेना चाहिये

और यदि हो सके तो अध्यापक को स्वयं भी खेल में सम्मिलित होना चाहिये। यदि आप खेल श्रेणी के नेता द्वारा सिखाना चाहते हैं तो पहले नेता को सिखाइये ताकि वह खेल के नियमों और उपनियमों को भली भांति समझ जाय।

बच्चों के साथ एक अच्छे खिलाड़ी-जैसा व्यवहार करना चाहिये। बच्चों को खेल द्वारा शिक्षा दीजिये कि वे खेल में ईमानदारी और सचाई का ध्यान रखें, धोखा देने से बचें, कमज़ोर की कमज़ोरी से अनुचित लाभ प्राप्त करने का यत्न न करें, खेल में चाहे हार हो या जीत, प्रत्येक अवस्था में प्रसन्न रहें।

खेल आरम्भ करने से पहले बच्चों को थोड़ा-सा सीधे-सादे शब्दों में खेलने का ढंग समझा दीजिये और यदि आवश्यकता हो तो कुछ बच्चों को सारा खेल धीरे-धीरे खिला कर खेल के नियम बता दीजिये ताकि सब बच्चे उसे भली प्रकार समझ सकें।

आप नोट कीजिये कि बच्चे खेल में कहां तक दिलचस्पी दिखाते हैं। जिस समय देखिये कि खेल में उनकी दिलचस्पी कम हो रही है, तो कोई अन्य खेल आरम्भ कीजिये ताकि बच्चों की दिलचस्पी स्थिर रहे।

खेल समाप्त हो, तो इन प्रश्नों पर विचार कीजिये :—

क्या बच्चे खेल के पूरे समय खुश रहे हैं? क्या प्रत्येक बच्चा पूरा समय काम में लगा रहा है? क्या बच्चों के शरीर में पर्याप्त गर्मी पैदा हो गई है, और पसीना निकल आया है? श्रेणी का पोसचर कैसे रहा? क्या नेता की उचित मदद ली गई है? क्या खेल के बाद बच्चों के चेहरों से ताजगी प्रतीत होती थी? क्या बच्चे थके हुए और उनके चेहरे मुर्झाये हुए लगते थे?

ऋतु के अनुसार व्यायाम का प्रोग्राम—सर्दी की ऋतु में

पहली कसरत ऐसी होनी चाहिये जिसमें पर्याप्त परिश्रम करना पड़े और जिसको बच्चे पहले ही अच्छी तरह जानते हों ताकि उसका ढंग और नियम बताने की आवश्यकता न हो और उस को फुर्ती और आसानी के साथ किया जा सके। फिर ऐसे व्यायाम होने चाहियें जिनमें सब बच्चे एक साथ भाग ले सकें और किसी को अपनी बारी के लिये प्रतीक्षा न करनी पड़े । व्यायाम समाप्त होने पर बच्चों को गर्म कपड़े पहन लेने चाहियें, नहीं तो सर्दी लग कर बीमार पड़ जाने का भय है।

गर्मियों में जहां तक हो सके, व्यायाम प्रातःकाल के समय होना चाहिये, जब कि अधिक गर्मी नहीं होती या फिर छाया में ऐसी जगह व्यायाम कराना चाहिये जहाँ सूर्य सामने न आता हो। आँखों को सूर्य से बचाना तो हर ऋतु में आवश्यक है क्योंकि उसके प्रकाश से आँखें चुँधिया जाती हैं और सिर को सीधा नहीं रखा जा सकता जिससे पोसचर की खराबियां पैदा हो सकती हैं। कसरत हल्की-फुल्की होनी चाहिये जिसमें थोड़ा-सा परिश्रम करना पड़े। इन दिनों पोसचर को ठीक करने पर पर्याप्त ध्यान दिया जा सकता है। थोड़ी देर तक व्यायाम करने के बाद बच्चों को साये में सुस्ताने का अवसर देना चाहिये।

अनुशासन (Discipline)—व्यायाम और खेल के सिल-सिले में इस बात पर बहुत जोर दिया गया है कि खुशी का वाता-करण कायम रखा जाय। परन्तु इसका मतलब यह नहीं कि बच्चे आवश्यकता के बिना चीखें-चिल्लायें, शोर करें और किसी नियम का ध्यान न रखें। ऐसी अवस्था में व्यायाम से पूरा-पूरा तालीमी लाभ नहीं उठाया जा सकता। परन्तु बिलकुल चुप रहना भी अच्छी है। यदि बच्चे किसी खेल या व्यायाम में दिलचस्पी के

साथ लगे हुए हों तो इनमें बिना कारण शोर करने की इच्छा पैदा न होगी। यदि व्यायाम में थोड़ी बात चीत और खेल में उचित हँसी-मज़ाक और दिल्लगी हो तो अच्छी बात है परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बच्चे आज्ञा मिलते ही या सीटी की आवाज़ पर शीघ्र ही चुप हो जायें और अध्यापक या नेता की बात सुनने के लिए तैयार हो जाएं। यह बात कोई कठिन नहीं। यदि बच्चे अपने अनुभव से यह जानते हैं कि अध्यापक या नेता जो कुछ कहता है, वह सुनने योग्य है तो वे संकेत से ही चुप हो जायंगे। सीटी की आवाज़ से रुकने का अभ्यास इसलिये भी कराना चाहिये कि यह खतरे से बचने के लिए आवश्यक है। यदि अध्यापक देखे कि खेल के बीच में कोई दुर्घटना होने वाली है, जैसे किसी बच्चे के गिर पड़ने का डर है, तो वह सीटी बजा कर उन्हें सावधान कर सकता है।

3. स्वास्थ्यप्रद आदतें

अब कुछ ऐसी आदतों का वर्णन किया जायगा जो स्वास्थ्य के लिये बहुत आवश्यक हैं और जिनकी ओर आपको आरम्भ से ही ध्यान देना चाहिये। इनमें कई चीजें ऐसी हैं जिनकी देख-भाल के लिये आपको बच्चों के माता-पिता की सहायता लेनी पड़ेगी।

स्नान—गर्मी और वर्षा-ऋतु में प्रतिदिन एक बार स्नान करना और सर्दियों में कम से कम सप्ताह में तीन बार।

सोना—प्रतिदिन कम से कम दस घंटे सोना। सोते समय कमरे में अन्धेरा रहे परन्तु स्वच्छ वायु आने के लिए खिड़कियां खुली रहें।

भोजन—दूध पीना, सब्जियाँ खाना, भूसी-सहित अनाज

पहली कसरत ऐसी होनी चाहिये जिसमें पर्याप्त परिश्रम करना पड़े और जिसको बच्चे पहले ही अच्छी तरह जानते हों ताकि उसका ढंग और नियम बताने की आवश्यकता न हो और उस को फुर्ती और आसानी के साथ किया जा सके। फिर ऐसे व्यायाम होने चाहियें जिनमें सब बच्चे एक साथ भाग ले सकें और किसी को अपनी बारी के लिये प्रतीक्षा न करनी पड़े। व्यायाम समाप्त होने पर बच्चों को गर्म कपड़े पहन लेने चाहियें, नहीं तो सर्दी लग कर बीमार पड़ जाने का भय है।

गर्मियों में जहां तक हो सके, व्यायाम प्रातःकाल के समय होना चाहिये, जब कि अधिक गर्मी नहीं होती या फिर छाया में ऐसी जगह व्यायाम कराना चाहिये जहाँ सूर्य सामने न आता हो। आँखों को सूर्य से बचाना तो हर ऋतु में आवश्यक है क्योंकि उसके प्रकाश से आंखें चुँधिया जाती हैं और सिर को सीधा नहीं रखा जा सकता जिससे पोसचर की खराबियां पैदा हो सकती हैं। कसरत हल्की-फुल्की होनी चाहिये जिसमें थोड़ा-सा परिश्रम करना पड़े। इन दिनों पोसचर को ठीक करने पर पर्याप्त ध्यान दिया जा सकता है। थोड़ी देर तक व्यायाम करने के बाद बच्चों को साये में सुलाने का अवसर देना चाहिये।

अनुशासन (Discipline)—व्यायाम और खेल के सिलसिले में इस बात पर बहुत जोर दिया गया है कि सुशी का वातावरण कायम रखा जाय। परन्तु इसका मतलब यह नहीं कि बच्चे आवश्यकता के बिना चीखें-चिल्लायें, शोर करें और किसी नि... का ध्यान न रखें। ऐसी अवस्था में व्यायाम से पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाया जा सकता। परन्तु बिलकुल चुप चीज़ नहीं है। यदि बच्चे किसी खेल या व्यायाम में

यदि सिर में जुएँ पड़ जाएँ तो रात के समय सिर में मिट्टी का तेल तथा तारपीन के तेल की मालिश करनी चाहिये और सिर पर कोई तौलिया या रूमाल बांध देना चाहिए। प्रातः काल उठ कर गर्म पानी से सिर को भली प्रकार धो देना चाहिये। एक बात याद रखिये कि जिस समय सिर में मिट्टी का तेल या तारपीन का तेल लगाना हो तो लैम्प या आग से दूर रहना चाहिये, ताकि आग न लग जाय।

कई बच्चों के सिर में दाद होती है। यह बहुत फैलनेवाला रोग होता है। यदि एक बच्चे को हो जाए तो औरों को भी सुगमता से हो जाता है। इसलिए अति आवश्यक है कि ऐसे बच्चों को स्कूल से उस समय तक अलग रखा जाय जब तक वे बिल्कुल स्वस्थ न हो जाएँ।

आँख को ठीक अवस्था में रखना—आँख मलने की आदत बड़ी हानिकारक है। जब पढ़ते-पढ़ते या किसी चीज को देर तक देखने से आँखें थक जाती हैं तो उन्हें मलने को जी चाहता है। लेकिन ऐसा करने से डर है कि हाथ द्वारा कोई छूत का रोग आँखों तक न पहुँच जाए।

आँख यदि थक जाए तो कुछ देर बन्द कर के आराम करने से या बहुत दूर दृष्टि दौड़ाने से चैन मिलता है और फिर मलने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।

ऐसे स्थान पर पढ़ना-लिखना और काम करना चाहिए जहाँ पर्याप्त प्रकाश हो। लिखते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रकाश बांई ओर से आये ताकि लिखनेवाले स्थान पर हाथ की परछांई न पड़े।

पढ़ने या निरीक्षण करनेवाली चीज़ को आँख से उचित दूरी पर अर्थात् एक फुट दूर रखना चाहिए।

सूर्य या किसी तेज प्रकाश से आँख नहीं मिलानी चाहिए। देखा गया है कि कई बच्चे सूर्य से आँख मिलाने में एक दूसरे का मुकाबला करते हैं और इससे उनकी दृष्टि कमजोर हो जाती है।

बिस्तरे पर लेट कर और चलती गाड़ी में नहीं पढ़ना चाहिये क्योंकि इससे आँखों पर अनुचित दबाव पड़ता है।

यदि आँख में कोई वस्तु पड़ जाय, तो उसको बड़े ध्यान से निकालना चाहिये।

कान साफ़ रखना—कान को धोकर अन्दर से साफ़ रखना चाहिये। यदि कोई बच्चा कान में लकड़ी या किसी अन्य वस्तु से खुजला रहा हो तो उसे बताना चाहिये कि इस तरह करने से उसके कान के कोमल पर्दे को नुकसान पहुँचने का भय है, इसलिये वह कान को पानी से धो कर साफ़ करे या यदि उसमें मैल जम गया हो तो हस्पताल जाकर साफ़ कराये।

नाक का ठीक प्रयोग करना—मुँह बंद रखते हुए केवल नाक द्वारा सांस लेना चाहिये। नाक साफ़ करने के लिये रूमाल रखना चाहिये और उसको रोज़ धो कर साफ करना चाहिये।

नाक सदा धीरे से साफ़ करना चाहिये। क्योंकि जुकाम होने की अवस्था में यदि नाक ज़ोर से साफ करें तो डर रहता है कि जुकाम के रोगाणु कान की भीतरी नली में प्रविष्ट हो कर कान को हानि पहुँचायेंगे।

मुँह और दांतों को ठीक अवस्था में रखना—प्रतिदिन ताजा नीम या कीकर की दातुन से दांतों को साफ़ करना चाहिये।

मसूढ़ों और जीभ को भली प्रकार रगड़ कर धोना चाहिये।

छोटे बच्चे प्रायः कई चीजों को मुँह में रख लेते हैं और दांतों से चबाते रहते हैं—जैसे कलम, पेंसिल, लोहे या शीशे के टुकड़े आदि। उन्हें ऐसा करने से रोकिये क्योंकि इस प्रकार दांत कमजोर हो जाते हैं और कई छूत के रोग लग जाते हैं।

प्रायः माता-पिता अपने बच्चों के "दूध के दांतों" का कोई ध्यान नहीं करते। वे कहते हैं कि अभी तो वे कच्चे दांत हैं, जब पक्के दांत निकल आयेंगे तो देखेंगे। यह बड़ी भूल है। जब दूध के दांत मैले रहने के कारण बिगड़ जाते हैं तो पक्के दांत निकल पर वे भी खराब हो जाते हैं। सात-आठ वर्ष की आयु में "दूध के दांत" गिरने लगते हैं और उनकी जगह पक्के दांत निकलते हैं। इन दांतों को बड़ी सावधानी से प्रयोग में लाना चाहिये, क्योंकि किसी पक्के दांत के टूट जाने पर उसकी जगह फिर दांत नहीं निकलता और सदा के लिये उस दांत की जगह खाली रहती है। इसका प्रभाव स्वास्थ्य पर भी बहुत बुरा पड़ता है और देखने में भी भद्दा लगता है।

स्वास्थ्य और खुराक के साथ दांतों का घना संबंध है। वे चीजें, जिन से दांत पक्के होते हैं कैलशियम (चूना), फासफोरस और ए (A), सी (C) विटामिन हैं। ये चीजें किन-किन भोजनों में होती हैं, इसका वर्णन आगे किया जायगा।

सख्त रोटी, कच्चे फल और सब्जियाँ खूब चबा-चबा कर खानी चाहियें, ताकि दांतों में और इनके इर्द-गिर्द द्रव पदार्थ का दौरान तेज हो जाय और चबाने में जो रग-पट्ठे सहायता देते हैं, उन में से मुँह की लुआब अधिक से अधिक गुजरे। इससे दांतों के भिन्न भिन्न सतहें साफ होती हैं और मसूढ़ों की भी कसरत होती है।

दातुन करने से भी इसी लिये दांत और मसूढ़े पक्के हो जाते हैं। दातुन के बारे में यह ध्यान रखना चाहिये कि दातुन न तो इतनी सख्त हो कि इस से नर्म और कोमल मसूढ़े जख्मी हो जायें और न इतनी नर्म कि उससे दांतों से चिपटा हुआ भोजन न निकल सके। दातुन करने का ठीक ढंग यह है कि इससे दांतों को ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर रगड़ा जाय, ताकि दांतों का भीतरी मैल निकल जाये। आपकी सफलता तो यह है कि आपके बच्चे साफ और चमकदार दांतों पर गौरव करने लगें।

खाल को साफ और सुन्दर रखना—चेहरा, गर्दन और कानों को रोजाना भली प्रकार धोना चाहिये और किसी साफ कपड़े से पोंछ कर सुखाना चाहिये। खाल के रोगों, जैसे खारिश, कोढ़ आदि से बचने के लिये आवश्यक साधन प्रयोग में लाना चाहिये।

हाथ साफ रखना—खाना खाने से पहले और बाद में हाथ धोने की आदत डालनी चाहिये। इसी प्रकार शारीरिक सफाई करने के बाद हाथ धोने की आवश्यकता है।

नाखुन साफ रखना—दांतों से चबा कर या काट कर नहीं बल्कि नाखुन-तराश से काट कर नाखुन साफ रखने चाहिएं।

पांव साफ रखना—पांव को नित्यप्रति धोना चाहिये। पांव के नाखुन भी काटते रहना चाहिये। इतना बड़ा जूता पहनना चाहिये कि पांव को कष्ट न हो।

4. खुराक (भोजन)

अच्छा व्यायाम और स्वास्थ्यप्रद आदतें तो केवल उसी अवस्था में दृढ़ और सुडौल शरीर बनाने में सहायता दे सकते हैं जबकि

खाने-पीने का उचित प्रबंध हो। इस लिये आप को अध्यापक के नाते यह जानना चाहिये कि उचित और सतुलित भोजन में क्या क्या होना चाहिये ताकि माता-पिता और संरक्षकों को ठीक-ठीक परामर्श दिया जा सके और यदि हो सके तो पाठशाला में भोजन की कमियों को किसी सीमा तक पूरा किया जा सके।

भोजन के काम :—भोजन के विशेष काम तीन हैं:—

1. शरीर बनाना।
2. गर्मी और शक्ति देना।
3. शरीर की टूट-फूट को ठीक करना।

छोटे बच्चों के भोजन में ऐसी चीजें होनी चाहियें जो ऊपर लिखे तीन काम कर सकें, क्योंकि उनके शरीर बड़ी तेज़ी से बढ़ते है। जिस भोजन में ये सब चीज़ें होती हैं, उसे संतुलित भोजन (Balanced Diet) कहते हैं। अब आपको पता होना चाहिये कि वे कौन-कौन सी चीज़ें हैं जो इन तीनों आवश्यकताओं में से किसी न किसी को पूरा करती हैं।

1. शरीर बनाना :– प्रोटीन शरीर बनानेवाला मसाला है। दूध, लस्सी, अण्डा, मांस, दाल और अनाज में प्रोटीन पर्याप्त मात्रा में मिलती है परन्तु यह याद रखना चाहिये कि गेहूँ, जौ, बाजरा आदि में प्रोटीन और अन्य भोजन-तत्त्व, जैसे—विटामिन (Vitamins) और खनिज पदार्थ आदि केवल ऊपर के परत में होते हैं, इन के भीतरी भाग में बहुत-सा निशास्ता होता है। जब इन अनाजों को मशीन द्वारा अधिक साफ़ किया जाता है, तो ऊपर का लाभदायक भाग नष्ट हो जाता है। इसलिये इन को छिलके सहित हो खाना चहिये जिसे प्रायः लोग बेकार और घटिया समझ कर फेंक देते हैं।

वृद्धि के लिये अति आवश्यक है। यह नाक और कान की झिल्ली को दृढ़ करता है और छूत के रोगों से बचाता है। यह दूध, मक्खन, पत्तोंवाली सब्जियों, मछली के तेल, कलेजी और गुर्दे में होता है।

विटामिन (B) :—इस की कमी से शरीर के तन्तु (Nerves) कमज़ोर हो जाते हैं। विटामिन (B) मशीन से पिसे आटे या मशीन द्वारा साफ़ किये हुए चावलों में नष्ट हो जाता है। भोजन में जब इस की कमी होती है तो भूख कम लगती है और बेरी बेरी (Beri Beri) रोग लगने का भय होता है। यह अण्डे और पूरे अनाज में मिलता है।

विटामिन (C) :—इस की कमी से एक विशेष प्रकार का रोग हो जाता है जिस में मसूढ़े सूज जाते हैं, शरीर पर काले दाग़ पड़ जाते हैं और हाथ-पांव में दर्द होता है। यह ताज़े फलों, सब्जियों, टमाटर, गाजर आदि में होता है। प्राचीन समय में इस का प्रयोग कम होने के कारण मल्लाह और समुद्री जहाज़ चलाने वाले प्रायः बीमार हो जाते थे। इसलिए इस रोग को समुद्री रोग (Sea Scurry) कहते हैं।

विटामिन (D) :—इस की कमी के कारण बच्चों को सूखे का रोग हो जाता है। दूध पिलाने वाली माताओं के भोजन में इस की बहुत आवश्यकता है। यह मछली के तेल, दूध और अण्डे से प्राप्त होता है।

विटामिन (E) :—यह बच्चे पैदा करने के लिए बहुत आवश्यक है। यह अनाज, बिनोले, मटर आदि में पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

संतुलित भोजन :—संतुलित भोजन में ऊपर बताई गई सब चीजें होनी चाहिये परन्तु इस के लिये यह भी आवश्यक है कि

भोजन में ये वस्तुयें एक विशेष मात्रा और अनुपात में हों।

हमारे देश में निर्धनता के कारण प्रायः लोगों को अच्छा और पूरा भोजन प्राप्त नहीं होता। इन के भोजन में अधिकतर आटा, चावल, दाल और थोड़ी-सी सब्जी होती है। उन में निशास्ते की मात्रा अधिक होती है और स्वास्थ्य कायम रखने वाली अन्य चीजें कम होती हैं। निर्धनों का तो कहना ही क्या, हमारे देश में धनवानों की भी खुराक संतुलित नहीं होती। इस लिये गरीब-अमीर सभी का स्वास्थ्य का स्तर गिरा हुआ है।

यदि हम खाने-पीने की चीजें चुनते समय थोड़ी-सी समझ-बूझ से काम लें, तो संतुलित भोजन प्राप्त करने के लिये बहुत व्यय करने की आवश्यकता नहीं है। आप अपने ग्रामवासियों की बड़ी सेवा कर सकते हैं यदि आप उन को सस्ते और संतुलित भोजन के बारे में बतायें। आप इसके लिये स्कूल में स्वास्थ्य और सफ़ाई का सप्ताह मनाइये और इस अवसर पर भोजन-संबंधी एक प्रदर्शनी का भी प्रबन्ध कीजिये जिस में चार्टों, तस्वीरों और पोस्टरों द्वारा संतुलित भोजन के बारे में बताया जा सके।

प्रायः लोग केवल स्वाद के लिये खाते हैं और वे चटपटी, मज़ेदार, खट्टी-मीठी, तली हुई या भुनी हुई चीज़ों को अधिक पसन्द करते हैं। वे कभी इस बात पर ध्यान नहीं देते कि उनको क्या और कितनी मात्रा में खाना चाहिये। उन्हें इस बात की चिन्ता नहीं होती कि खाने के बाद वे बीमार पड़ जायेंगे। कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो अधिक खा सकने के लिये जुलाब लेते या चूर्ण आदि फांकते रहते हैं। वे उस भोजन को अच्छा समझते हैं जो स्वादिष्ट हो। वे यह नहीं समझते कि इस प्रकार का भोजन शरीर को स्वस्थ रखने की जगह नुकसान पहुँचाता है।

आप लोगों को संतुलित खुराक की आवश्यकता समझाइये और बताइये कि इस में कौन कौन-सी चीज़ कितनी कितनी मात्रा में होनी चाहिये। केन्द्रीय सरकार के स्वास्थ्य विभाग की ओर से जो रीसर्च की गई है, उसके अनुसार औसत दर्जे के प्रौढ़ व्यक्ति को प्रतिदिन यह भोजन खाना चाहिए :—

चावल—5 छटांक।
बाजरे या गेहूं का आटा—2½ छटांक।
दूध—4 छटांक।
सब्जी—3 छटांक।
पत्तेदार सब्जी—2 छटांक।
चिकनाई— 1 छटांक।
फल—1 छटांक।

सात-आठ वर्ष के बच्चे के लिये इसका ½ भाग पर्याप्त होगा।

इस मात्रा को प्रातः काल के नाश्ते, दिन के भोजन और रात के भोजन में उचित ढंग से बांट लेना चाहिये। यदि नाश्ता और दिन का भोजन हल्का हो तो अच्छा है। जो लोग मांस खाते हैं, वे सब्जी के साथ मांस और अण्डा भी खा सकते हैं।

भोजन का पूरा पूरा लाभ तब ही प्राप्त किया जा सकता है, जब इसे उचित मात्रा में, ठीक समय पर और ठीक तरीके से खाया जाय। भोजन खूब चबा-चबा कर खाना चाहिये। जब दांतों से अच्छी तरह चबाया हुआ भोजन मुंह के लुआब से मिल कर आमाशय में पहुंचता है, तो यह बड़ी सुगमता से पच जाता है और उससे बना हुआ रक्त शरीर के काम आता है। यदि भोजन जल्दी जल्दी खा लिया जाय तो आवश्यकता से अधिक

भोजन में ये वस्तुयें एक विशेष मात्रा और अनुपात में हों।

हमारे देश में निर्धनता के कारण प्रायः लोगों को अच्छा और पूरा भोजन प्राप्त नहीं होता। इन के भोजन में अधिकतर आटा, चावल, दाल और थोड़ी-सी सब्जी होती है। उन में निशास्ते की मात्रा अधिक होती है और स्वास्थ्य कायम रखने वाली अन्य चीजें कम होती हैं। निर्धनों का तो कहना ही क्या, हमारे देश में धनवानों की भी खुराक संतुलित नहीं होती। इस लिये गरीब-अमीर सभी का स्वास्थ्य का स्तर गिरा हुआ है।

यदि हम खाने-पीने की चीजें चुनते समय थोड़ी-सी समझ-बूझ से काम लें, तो संतुलित भोजन प्राप्त करने के लिये बहुत व्यय करने की आवश्यकता नहीं है। आप अपने ग्रामवासियों की बड़ी सेवा कर सकते हैं यदि आप उन को सस्ते और संतुलित भोजन के बारे में बतायें। आप इसके लिये स्कूल में स्वास्थ्य और सफ़ाई का सप्ताह मनाइये और इस अवसर पर भोजन-संबंधी एक प्रदर्शनी का भी प्रबन्ध कीजिये जिस में चार्टों, तस्वीरों और पोस्टरों द्वारा संतुलित भोजन के बारे में बताया जा सके।

प्रायः लोग केवल स्वाद के लिये खाते हैं और वे चटपटी, मसालेदार, खट्टी-मीठी, तली हुई या भुनी हुई चीजों को अधिक पसन्द करते हैं। वे कभी इस बात पर ध्यान नहीं देते कि उनको क्या और कितनी मात्रा में खाना चाहिये। उन्हें इस बात की चिन्ता नहीं होती कि खाने के बाद वे बीमार पड़ जायेंगे। कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो अधिक खा सकने के लिये जुलाब लेते या चूर्ण आदि फांकते रहते हैं। वे उस भोजन को अच्छा समझते हैं जो स्वादिष्ट हो। वे यह नहीं समझते कि इस प्रकार का भोजन शरीर को स्वस्थ रखने की जगह नुकसान पहुँचाता है।

आप लोगों को संतुलित खुराक की आवश्यकता समझाइये और बताइये कि इस में कौन कौन-सी चीज़ कितनी कितनी मात्र में होनी चाहिये। केन्द्रीय सरकार के स्वास्थ्य विभाग की ओर से जो रीसर्च की गई है, *उसके अनुसार औसत दर्जे के प्रौढ़ व्यक्ति को प्रतिदिन* यह भोजन खाना चाहिए :—

चावल—5 छटांक।
बाजरे या गेहूँ का आटा—2½ छटांक।
दूध—4 छटांक।
सब्जी—3 छटांक।
पत्तेदार सब्जी—2 छटांक।
चिकनाई— 1 छटांक।
फल—1 छटांक।

सात-आठ वर्ष के बच्चे के लिये इसका ¾ भाग पर्याप्त होगा।

इस मात्रा को प्रातः काल के नाश्ते, दिन के भोजन और रात के भोजन में उचित ढंग से *बांट लेना चाहिये। यदि नाश्ता और* दिन का भोजन हल्का हो तो अच्छा है। जो लोग मांस खाते हैं, *वे सब्जी के साथ मांस और अण्डा भी खा सकते हैं।*

भोजन का पूरा पूरा लाभ तब ही प्राप्त किया जा सकता है, जब इसे उचित मात्रा में, ठीक समय पर और ठीक तरीके से खाया जाय। भोजन खूब चबा-चबा कर खाना चाहिये। जब दांतों से अच्छी तरह चबाया हुआ भोजन मुँह के लुआब से *मिल कर आमाशय में पहुंचता है, तो वह बड़ी सुगमता से पच जाता* है और उससे बना हुआ रक्त [illegible] । यदि भोजन जल्दी जल्दी

ना लिया जाता है और वह सुगमता से पच नहीं सकता। डका आती है, वायु खारिज होती है, रात को अच्छी नींद नहीं आती, स्वप्न आते हैं और प्रातःकाल जीभ का स्वाद बुरा लगता है।

खाते समय पानी नहीं पीना चाहिये। जब भोजन अच्छी तरह चबाया नहीं जाता, तब पानी पीने की आवश्यकता प्रतीत होती है ताकि अन-चबाई हुई खुराक को पानी की मदद से गले के नीचे उतार लिया जाये। यदि भोजन अपने आप गले से नीचे न उतरे तो समझना चाहिये कि या तो भोजन को भली प्रकार चबाया नहीं गया या आमाशय को इस की आवश्यकता नहीं है। खाने के बाद कुछ समय ठहर कर पानी पीना अच्छा है। दिन-रात में कम से कम छः गिलास पानी पीना चाहिये।

(5) स्कूल का स्वास्थ्यप्रद प्रबन्ध और वातावरण—स्कूल के प्रबन्ध और वातावरण का बच्चों के स्वास्थ्य पर बहुत प्रभाव पड़ता है। स्कूल की इमारत, पढ़ाई-लिखाई का सामान, टाइम-टेबल और काम करने की व्यवस्था आदि सब चीजें ऐसी होनी चाहियें कि वे बच्चे के स्वास्थ्य को अच्छा बनाने में सहायता करें।

स्कूल की इमारत—जहां तक हो सके, स्कूल की इमारत गाँव से बाहर स्वास्थ्यप्रद वातावरण में होनी चाहिए। इसके इर्द-गिर्द मैला और गन्दा पानी इकट्ठा न होता हो। इमारत में धूप, प्रकाश और वायु आने के लिए पर्याप्त खिड़कियां, दरवाजे और रोशनदान हों। प्रकाश से दृष्टि का गहरा सम्बन्ध है। जैसे कम रोशनी में काम करना आँख के लिए हानिकारक है, वैसे ही अधिक रोशनी से भी आँखों पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

पढ़ाई का सामान—किताब का टाइप जितना छोटा होगा, उसको

पढ़ने के लिए उतना ही आँखों पर अधिक ज़ोर पड़ेगा। इस अवस्था में बच्चे पुस्तक को आँखों के समीप ले जाएँगे और सिर झुका कर पढ़ने के आदी हो जाएँगे। इस का परिणाम यह होगा कि रीढ़ की हड्डी टेढ़ी हो जाएगी और पोसचर बिगड़ जाएगा। इस लिए जहाँ तक हो सके, बच्चों को ऐसी पुस्तकें पढ़ने को दी जाएँ जिन का टाइप मोटा हो। इनका कागज चिकना हो परन्तु चमकदार न हो। चिकना कागज होने का यह लाभ है कि उस पर मिट्टी के द्वारा रोगाणु शीघ्र नहीं चिमट सकते और चमकदार कागज होने में यह नुकसान है कि उस पर प्रकाश पड़ने से आँखें चुँधिया जाती हैं।

लिखाई का साधन—याद रखिये कि जिस चीज़ पर आप लिखायें और जिस चीज़ से आप लिखायें, इन दोनों के रंग एक दूसरे के विपरीत होने चाहियें, जैसे काली तख्ती पर सफ़ेद खड़िया से लिखाना या सफ़ेद कागज पर काली सियाही से लिखाना इस लिए अच्छा है कि इस से आंखों पर अधिक जोर नहीं पड़ता। स्लेट और पैन्सिल का प्रयोग बुरा है। इस बात का भी ध्यान रखिए कि लिखते समय बच्चे अपना शरीर सीधा रखें, आँखें तख्ती या कापी से कम से कम एक फुट दूर हों।

जिन बच्चों की आँखें कमज़ोर होती हैं, उन्हें विशेष करके उन अवस्थाओं से बचना चाहिए जिन में उनकी दृष्टि को और बिगड़ने का भय हो। ऐसे बच्चों को आप कई चिन्हों से पहचान सकते हैं। किसी चीज़ को देखते हुए जिस बच्चे के माथे पर बल पड़ जाए या जो आँख को टेढ़ा कर के देखे या पढ़ते समय पुस्तक को आँखों के समीप ले जाए, प्रायः उसकी दृष्टि कमज़ोर होती है। ऐसे बच्चे को श्रेणी में सब से अगली पंक्ति में बिठाना चाहिए ताकि

वह काले तख्ते पर लिखी हुई चीजों को या दीवार पर लगे हुए चार्टों को सुगमता से पढ़ या देख सके। इस बात का भी ध्यान रखिये कि जिस काम से आंखों पर अधिक जोर पड़ता है, उस काम को बहुत समय तक ऐसे बच्चों से लगातार न करवाइए। यदि हो सके तो किसी डाक्टर या वैद्य से उसकी आंखों का परीक्षण करवाइए।

टाइम-टेबल और स्कूल का काम-स्कूलमें भिन्न-भिन्न कामों को तरतीब देने में इस बात का ध्यान रखिए कि किसी काम का शारीरिक उन्नति और स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव न पड़े। जिस काम से अधिक थकावट होती है, उसे अधिक समय तक लगातार न करवाइए या ऐसे दो कामों को एक दूसरे के पीछे न करवाइए जिन से मानसिक थकावट होती हो, जैसे गणित और पढ़ाई का काम लगातार नहीं होना चाहिए। नीची कक्षाओं में इनमें से हर एक को अधिक से अधिक आध घण्टा दिया जा सकता है। मानसिक काम की थकावट को दूर करने के लिए थोड़े समय के लिए आराम करने की या खुली हवा में खेलने की आज्ञा देनी चाहिए।

स्कूल और श्रेणी के कमरे की सफ़ाई—आपको चाहिये कि बैठने की जगह, कमरे और स्कूल की सफ़ाई की जिम्मेवारी धीरे-धीरे बच्चों को दें। इस बारे में सामाजिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में कई बातें दी गई हैं। बच्चों को सिखाइये कि वे रद्दी की टोकरी और कूड़े के बर्तन का ठीक प्रयोग करें। दस्तकारी का काम खत्म करने के उपरांत कमरे को झाड़ कर साफ़ कर दें और स्कूल तथा श्रेणी की अलमारियों को सदैव साफ़ रखें। बहुत बार देखने में आया है कि इस काम में अध्यापक को शीघ्र सफलता प्राप्त नहीं होती क्योंकि

बच्चे अपने घर में बिलकुल उलटी अवस्था देखते हैं। घर में माँ जिस जगह पर सब्जी साफ़ करती या छीलती है, वहाँ ही उसके पत्ते या छिलके फैंक देती है। बड़े बहन-भाई फल या अन्य कोई वस्तु खा कर उसके फालतू भाग इधर उधर फैंक देते हैं। इस के लिए कूड़े की टोकरी या और कोई विशेष स्थान नहीं होता और इसी कारण सारे घर में गंदगी रहती है, जिस से न केवल घरवालों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है अपितु घर भी बुरा लगता है। मुहल्ले का हाल घर से भी बुरा होता है। गलियों में गोबर और कूड़ा आदि पड़ा रहता है। बहुत-से लोग गलियों में ही पेशाब करते हैं और घर की गंदगी भी वहाँ ही फैंक देते हैं।

ऐसी अवस्था में आपको बड़े सन्तोष और धैर्य से काम लेना चाहिये। आपका केवल यही काम नहीं है कि बच्चों का ध्यान स्कूल और उसकी सफाई की ओर दिलायें, अपितु यह भी है कि बच्चों के मन में सफ़ाई की ऐसी चेतना पैदा कर दें कि वे किसी जगह को भी गंदा न देख सकें। उन्हें अपने घर और मुहल्ले में रद्दी की टोकरी और कूड़े के बर्तनों का प्रयोग बताइये। इसके लिये कभी कभी उनके माता-पिता को मिलना पड़ेगा। उन्हें घर और मुहल्ले को साफ़-सुथरा रखने के साधन समझाइये और इस काम में उनका नेतृत्व कीजिए। फिर आशा की जा सकती है कि बच्चों में सफ़ाई की आदत पक्की हो जायगी।

स्कूल का पीने का पानी—*छूत के प्रायः रोग पीने के पानी* के द्वारा फैलते हैं। इसलिये पानी को सफ़ाई और सावधानी से प्रयोग में लाने की आवश्यकता है, जैसा कि बेसिक पाठ्यक्रम में सामाजिक शिक्षा के संबंध में बताया गया है। यदि किसी स्थान पर

साफ़ पानी न मिलता हो, तो वहाँ पानी को उबाल कर, छान कर या औषधि डाल कर साफ करना चाहिये। यदि संदेह हो कि पानी में रोगाणु हैं तो उसको उबाल लेना चाहिये या उसमें लाल दवाई या ब्लीचिंग पाउडर (Bleaching Powder) डालना चाहिये। यदि पानी में मैल-मिट्टी हो तो उसके कंकड़ों, रेत, कोयले को कपड़े द्वारा छान कर साफ करना चाहिये। ये बातें गाँव के पानी की सफ़ाई के बारे में विस्तारपूर्वक आगे चल कर बताई जायेंगी। यहाँ केवल इतना कहना ही पर्याप्त है कि स्कूल में जो पानी प्रयोग में लाया जाय, वह साफ और रोगाणु-रहित होना चाहिये और उसे किसी साफ सुथरे बर्तन में रखना चाहिए। कई स्कूलों में देखा गया है कि बच्चे घड़े या मटके में से गिलास डुबो कर पानी निकालते हैं। स्वास्थ्य के लिए यह आदत बुरी है। इस लिये एक साफ बर्तन होना चाहिए जिस में इतना लम्बा दस्ता लगा हो कि पानी निकालते समय बच्चों के हाथ पानी को न छूएँ। हो सके तो टेढ़ी नलकी (Siphon) का प्रबन्ध किया जाय। बच्चों को बताना चाहिये कि बर्तन में से पानी निकाल कर उसको ढक देना आवश्यक है ताकि उसमें मिट्टी आदि न पड़े।

स्कूल का पाखाना और पेशाबघर—प्रायः देखा गया है कि बच्चे स्कूल में टट्टी और पेशाबघर का ठीक प्रयोग नहीं करते। कई स्कूलों में ग्राम-सुधार विभाग की ओर से मोरी, पाखाने और मूत्र-गृह बनाए गए हैं। इनकी गहराई 20 फुट और व्यास 16 इंच के लगभग होता है और इस बात का ध्यान रखा जाता है कि मोरियां कुएँ और पीनेवाले पानी के दूसरे स्थानों से दूर हों ताकि पानी का प्रभाव न पड़े। यदि आपके स्कूल में पाखाने और कोई प्रबन्ध नहीं है, तो इस प्रकार की मोरियां बनवाई

जा सकती हैं। पाखाना किसी प्रकार का हो, बच्चों को इसके प्रयोग का ढग बताना चाहिए। यदि पाखाना जाने के बाद, उसको थोड़ी-सी मिट्टी से ढांप दिया जाय तो बदबू नहीं फैलती। टट्टी और मूत्र-गृह की देख-भाल अति आवश्यक है। बहुत-से बच्चे उन के प्रयोग करने से झिझकते हैं, और स्कूल के इर्द-गिर्द गंदगी करते रहते हैं। उन्हें बताइये कि यह बुरी आदत है और इससे रोग फैलने का डर है।

बच्चों में यह आदत डालिये कि पेशाब और टट्टी के बाद अच्छी तरह हाथ धो लें। यह बात याद रखिये कि कई बच्चे पेशाब या टट्टी जाने की आज्ञा माँगने से शर्माते हैं। इसके लिए आप यह कर सकते हैं कि एक या दो कार्ड किसी विशेष स्थान पर रख दीजिए और बच्चों को बता दीजिए कि जिसको आवश्यकता हो, वह कार्ड लेकर बाहर चला जाय और अपनी आवश्यकता पूरी करने के उपरांत कार्ड को उसी स्थान पर फिर रख दे।

कई बच्चों का मसाना (Bladder) कमज़ोर होता है और उन्हें उस पर काबू नहीं होता। इस के कारण उनका कभी कभी पेशाब निकल जाता है। ऐसी अवस्था में उन्हें डांटना नहीं चाहिए अपितु पाजामा बदलवा देना चाहिए।

6. गांव का स्वास्थ्य और सफ़ाई —स्कूल के स्वास्थ्य और सफ़ाई में इस का वर्णन किया गया है। यह काम घर और गांव के स्वास्थ्य और सफ़ाई के काम से संबंध रखता है। गांव में प्रायः इस बारे में अध्यापक को सब से अधिक ज्ञान होता है। इसलिये आप इसमें ग्रामवासियों की बड़ी सहायता कर सकते हैं।

खेल और व्यायाम—गांव में बहुत से लोग मेहनत

करके अपनी रोटी कमाते हैं और इसलिये उनको न तो व्यायाम करने का समय है और न ही इसकी आवश्यकता है, फिर भी कभी कभी मनोरंजन के लिये खेल खेलते हैं। इनमें कबड्डी सर्वप्रिय खेल है। स्कूल में ऐसे अवसर पैदा करने चाहियें, जब गांव वाले खेल और व्यायाम के मुकाबलों में भाग ले सकें। कबड्डी, रस्सा खींचना, ऊंची कूद और लम्बी कूद आदि ऐसे खेल हैं, जिनमें गांववाले दिलचस्पी से भाग ले सकते हैं।

स्वास्थ्य-रक्षक ढंग—उन रोगों के बारे में गांव वालों को बतलाना चाहिये जो अधिक फैलते हैं, जैसे—हैजा, ताऊन, मलेरिया आदि। इस के लिये स्कूल में स्वास्थ्य और सफाई का सप्ताह मनाना चाहिये। इसमें गांव वालों को बुलाइये और उन्हें बताइये कि ये रोग कैसे फैलते हैं, और इनसे बचने के क्या उपाय किये जा सकते हैं। इस अवसर पर यदि एक प्रदर्शनी का प्रबन्ध भी किया जाय तो बहुत ही अच्छा है। इसमें आवश्यक बातें माडलों, चार्टों और तस्वीरों द्वारा बताई जा सकती हैं।

गांव में टट्टी-पेशाब, गोबर आदि के लिये कोई अच्छा प्रबन्ध नहीं होता। इस प्रकार जल और वायु दोनों दूषित होते रहते हैं और इस का स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। जहाँ अच्छी टट्टियां और मूत्र-गृह न हों, वहां कम से कम यह अवश्य होना चाहिये कि पखाना या पेशाब करने के बाद उसे झटपट ही मिट्टी से ढक दिया जाय। टट्टी के अन्दर टीन के पीपे या मिट्टी के गमले में राख अथवा सूखी मिट्टी रखनी चाहिये।

जगह पर थूकने की आदत बुरी होती है। थूक में छूत हो सकते हैं, और ये रोगों का कारण बन सकते

हैं। इसके अतिरिक्त हर जगह थूकने से घर और गली गंदी रहती है। थूकने के लिये घर में थूकदान होना चाहिये और यदि रास्ता चलते थूकने की आवश्यकता हो, तो जहां सूखी जमीन पर बहुत-सी धूल हो, वहाँ थूकना चाहिये और उसे मिट्टी से ढक देना चाहिये।

घर में फल,तरकारी आदि के छिलके इधर-उधर फेंक दिये जाते हैं। इसके लिये एक बर्तन होना चाहिये और उसके कूड़े को गांव से दूर जाकर खाली करना चाहियें। यदि उसे थोड़ी गहराई में गाड़ दिया जाय तो उससे एक लाभ तो यह होगा कि कुछ दिनों में खाद बन जायगी और दूसरे यह कि इसके कारण वायु दूषित न होगी।

घरों के लोगों को बताना चाहिये कि वे अपने घरों में खिड़कियां और रोशनदान अवश्य रखें ताकि वायु और प्रकाश पर्याप्त मात्रा में आ सके। सोते समय खिड़कियां खोल कर सोना चाहिये। पशु रिहायशी मकानों के अन्दर नहीं बांधने चाहियें क्योंकि इन के गोबर और पेशाब से बहुत गंदगी फैलती है और वायु दूषित हो जाती है।

ग्राम का पानी:—पानी प्राप्त करने के दो साधन हैं:—

(1) भूमि के नीचे का पानी, जैसे कुएं का।

(2) भूमि के ऊपर तल का पानी, जैसे नदी, नहर, झील या तालाब का।

गांवों में पानी इन दोनों साधनों से प्राप्त होता है। भूमि के नीचे का पानी कुंए खोद कर भिन्न-भिन्न गहराइयों से निकाला जाता है और यह पानी बहुत-से उन दोषों से मुक्त होता है जो

तल के पानी में प्रायः होते हैं। अधिकतर गंदगी नीचे की मिट्टी या रेत में छन जाती है। कंकरीली और रेतली मिट्टी से पानी साफ हो जाता है। परन्तु हर एक कुंएं का पानी स्वास्थ्य के लिये अच्छा नहीं होता। यदि कुंएं के इर्द-गिर्द कूड़ा-कर्कट जमा है, तो उसका पानी खराब हो जाता है। यदि कुंआं कच्चा हो, गंदगी मिट्टी से छन छन कर पानी में मिल जाती है। केवल यही नहीं, कभी कभी उसमें चिड़ियां घोंसले बना लेती हैं, अपने परों और बीट से पानी को गंदा करती रहती हैं और मर कर पानी में सड़ जाती हैं। इसलिये कच्चे कुओं का पानी स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। कूप की मन्न यदि अंदर की ओर ऊंची और बाहर की ओर ढलवान न हो तो उसका पानी साफ नहीं रह सकता क्योंकि इस अवस्था में पानी भरने वालों के पांवों की मैल आदि पानी में मिल जाती है। इस प्रकार जब कुंएं से पानी निकालने में मैले बर्तन प्रयुक्त होते हैं या कुएं पर कपड़े धोये जाते हैं तो कुंएं का पानी गंदा हो जाता है और पीने योग्य नहीं रहता। गांव वालों का इस ओर ध्यान दिलाइये और उन्हें बताइये कि अपने कुंएं में अकसर लाल दवाई या ब्लीचिंग पाऊडर डालते रहा करें और कभी-कभी उसका अधिक से अधिक पानी निकाल कर बाहर में साफ कर दिया करें।

यदि किसी तालाब, झील, नदी आदि का पानी पीने के काम आता है तो उसको साफ रखना चाहिए। किसी को उस जगह नहाने, धोने, पेशाब-पखाना करने या मुर्दे जलाने की आज्ञा नहीं होनी चाहिए। पानी की सुरक्षा और उसकी सफाई का ध्यान रखना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। परन्तु देखा गया है कि बहुत कम लोग इस का ध्यान करते हैं। इसलिए आवश्यक है कि कड़क कानून बनाने

लिये पानी को पीने योग्य बनाये। इसका अच्छा तरीका यह है कि पहले पानी को आधा घण्टा तक उबाला जाय और फिर ठण्डा कर के बिना हिलाये-जुलाये एक दूसरे वर्तन में मोटे और साफ कपड़े से छान लिया जाय। यदि पानी देखने में साफ लगता है, तो उसे पीने के योग्य समझ लेना ठीक नहीं। क्योंकि इस अवस्था में भी मोती-झरा, पेचिश और हैजा जैसे भयानक छूत के रोगों के लाखों कीटाणु उस पानी में हो सकते हैं। इस लिये पानी को उबाल कर और छान कर पीना हर अवस्था में अच्छा है।

बच्चे की मानसिक शिक्षा

पिछले पृष्ठों में बच्चे के शारीरिक विकास के भिन्न पहलुओं प
रोशनी डाली गई है और बताया गया है कि इस बारे में अध्यापक
नाते आपको क्या कुछ करना चाहिये। अब हम बच्चे की शिक्षा के उस
अंग की चर्चा करेंगे जो पाठशाला में बच्चे की शिक्षा का सब से बड़
उद्देश्य समझा जाता है अर्थात् बच्चे की मानसिक शिक्षा। यदि बच्चे
को मानसिक शिक्षा देनी है तो जानना चाहिए कि बच्चा मानसिक तौर
पर अपनी आयु के किसी विशेष दौर में क्या सीख सकता है। उसके
मन का झुकाव किन चीजों की ओर है और उसके मानसिक विकास
की क्या संभावना है। उसकी स्वाभाविक विशेषताओं को सामने रखते
हुए पाठशाला में कौन-कौन से अवसर हैं या पैदा किए जा सकते
हैं। कहावत प्रसिद्ध है कि लोहे पर उस समय चोट लगाओ, जब
वह भली प्रकार गर्म हो। किसी विशेष समय किसी वस्तु के सिखाने
और करने का जो अवसर आपको मिल रहा है शायद फिर कभी हाथ
न आएगा। उससे उचित ढंग से लाभ उठा लेना सच्ची शिक्षा
है। बच्चे के स्वभाव का विचार न करके, उसे शिक्षा देने की कोशिश
करना ऐसा ही है जैसा कि लकड़ी पर उसके रेशे के विरुद्ध रंदा कर

उसको समतल और सुडौल बनाने की कोशिश करना। यदि आप चाहते हैं कि बच्चे की शिक्षा में सफलता हो तो बच्चे के स्वभाव को समझना और उससे शिक्षा में पूरा-पूरा लाभ उठाने का ढंग जानना अति आवश्यक है।

किसी बच्चे को देखिए कि वह अपने घर और गली में खुशी से क्या करता है। पहली बात तो यह है कि वह कभी निचला नहीं बैठता, कुछ न कुछ करता रहता है। खेलना, कूदना, चीजों को बनाना-बिगाड़ना, अपने बड़ों की नकल करना, नई चीजों की खोज करना, प्रश्न पूछना आदि किसी न किसी काम में वह सदा लगा रहता है। और सब से अधिक लगन और सरगरमी वह उस काम में दिखाता है, जिस में उसे अपने हाथों से काम लेना पड़ता है। इससे यह मालूम होता है कि बच्चे को क्रियात्मक (Practical) काम से गहरा लगाव होता है।

चीजें बनाना :—आपने देखा होगा कि बच्चे कभी मिट्टी का खिलौना बनाते हैं तो कभी लकड़ी का तीर-कमान, कभी गढ़ा खोदते हैं तो कभी चबूतरा बनाते हैं, कभी मिट्टी के खिलौने बनाते हैं और कभी फर्श या दीवार पर डिजाइन (Design) बनाते हैं। यूं तो उन के काम के ये नमूने बहुत अच्छे नहीं होते, लेकिन इन के द्वारा वे जो ज्ञान प्राप्त करते हैं, वह ठोस होता है इसलिये कि वे जो कुछ करते हैं, उसका अर्थ भली प्रकार समझते हैं। इस बात को सामने रखते हुये जरूरी है कि पाठशाला में अधिक ऐसे अवसर दिये जायें कि बच्चे हाथ से काम कर सकें। बुनियादी पाठशाला में दस्तकारी का प्रबन्ध इस लिये बहुत उपयोगी सिद्ध होगा कि इस से एक लाभ तो यह है कि बच्चे को काम करके सीखने का अवसर होगा

और दूसरा यह कि ये जो कुछ सीखेंगे, वह इन के काम आयेगा और इस से समाज को भी लाभ पहुँचेगा।

खेल और नकल करना :—बच्चों में खेल के साथ-साथ नकल करने की रुचि विशेष तौर पर पाई जाती है। आपने बच्चों को अपने तौर पर प्रायः ऐसे खेल खेलते देखा होगा जिन में वे बड़े-बूढ़ों की नकल करते हैं। कभी एक बच्चा चौकीदार बन के पहरा देता है। ग्रामवासी अर्थात् दूसरे बच्चे गहरी नींद सो जाते हैं। एक चोर चौकीदार की आँखों से बचकर एक मकान में घुस जाता है और चोरी करके सामान ले जाता है। फिर पुलीस खोज करके चोर को पकड़ लेती है और उस को अदालत में पेश करती है। जज फैसला करता और चोर को दण्ड देता है। कभी एक बच्चा रेल गाड़ी का इञ्जन बनता है और शेष बच्चे गाड़ी के डिब्बे। गार्ड सीटी बजाता है, सचमुच की सीटी नहीं, हाथ और मुँह की मदद से सीटी जैसी आवाज पैदा करता है, और इंजन छक, छक, छक, छक, करता हुआ गाड़ी भी खैंचता है। कभी एक बच्चा अध्यापक बनता है और उस का साथी विद्यार्थी, अध्यापक पढ़ाता है, और किसी किसी बच्चे को डांटता है, फिर लाल आँखें निकाल कर पाठ सुनता है। यदि बच्चा भूल या अटक जाय तो झट उसे थप्पड़ मारता है। इस प्रकार बच्चा कभी दुकानदार बनता है और कभी राज का काम करता है और मकान बनाता है, कभी घर का मालिक बनता है और कभी नौकर। कभी वह अपने लकड़ी के घोड़े को चाबुक मार-मार कर दौड़ाता है। क्या कभी असली घुड़सवार को घोड़ा दौड़ाने में वह प्रसन्नता होती होगी जो उसको होती है? लड़कियां मां-बनती हैं, अपने गुड्डे-गुड़ियों के विवाह रचाती हैं, बरात आती है, खुशी के बाजे बजते हैं और प्रीति

भोजन होते हैं। बच्चा जो चाहता है, करता है। खेल में वह अपने आप को भी भूल जाता है और खेल द्वारा बहुत सी चीजें सीखता है।

यह न समझिये कि बच्चे की इन खेलों में केवल नकल (अनुकरण) होती है, और कुछ नहीं होता। वास्तव में इन खेलों द्वारा बच्चा 'बनाने' और 'सोचने' की शक्ति को प्रकट करता है। इन में बच्चा अपने आप को बहुत खुशी और आजादी के साथ पेश करता है। उनमें वह अपनी कल्पना (Imagination) से काम लेता है। वह हर चीज़ को ठीक वैसे ही पेश नहीं करता जिस तरह अपने बड़ों को करते हुए देखता है, अपितु इस में एक नयापन और उपज होती है। इस प्रकार देखिये तो यह खेल बच्चे की मानसिक उन्नति का बहुत अच्छा साधन है।

अध्यापक के नाते आपका काम है कि जहां तक हो सके, तालीम के गंभीर काम में खेल की स्पिरिट को कायम रखें। मातृभाषा और सामाजिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में जो कहानियां दी गई हैं, उन को बच्चों की सहायता से ड्रामे द्वारा कराया जा सकता है और इस प्रकार खेल और नकल की रुचि से शिक्षा में लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

खोज करना :—आपने देखा होगा कि बच्चे हर नई चीज़ के बारे में ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं। वे उनकी विशेषताओं का पता लगाना चाहते हैं और यह कुछ करने के लिये कभी कभी चीजों को भी तोड़-फोड़ डालते हैं, जैसे यह जानने के लिये कि घड़ी कैसे चलती है या ग्रामोफोन कैसे बजता है, या रेडियो कैसे बोलता है, बच्चे मशीन को खोल कर देखना चाहते हैं और ऐसा करने में कभी-कभी मशीन खराब भी हो जाती है। परन्तु बच्चे के मन

में खोज करने का जो झुकाव होता है उस को यदि ठीक रास्ते डाला जाय तो तोड़-फोड़ और हानि के स्थान पर बहुत ला दायक परिणाम निकल सकते हैं। वास्तव में बच्चे की खोज क की रुचि ज्ञान-प्राप्ति के लिये बुनियादी चीज़ है।

आपको चाहिये कि पाठशाला के प्रत्येक काम में बच्चे को अप आप खोज और छानबीन करने का समय दें। इस प्रकार व जो ज्ञान प्राप्त करेगा, वह पक्का और लाभदायक होगा और व उसको दूसरे अवसरों पर भी प्रयोग में ला सकेगा।

टोली बनाना:—आपने सात-आठ वर्ष के बच्चे को शाय ही अकेले खेलते देखा होगा। वह दूसरे बच्चों के साथ मिलक खेलता है। वह अपने मनोरंजन में दूसरों को शामिल करना चाहत है। प्रत्येक बच्चे के मित्रों और साथियों की एक टोली होती है वह उनके साथ भिन्न-भिन्न प्रकार की योजनायें बनाता है। शिक्ष और समाज की दृष्टि से बच्चे की यह रुचि बहुत महत्ता रखत है। सच तो यह है कि सामाजिक जीवन की नींव इसी पर निर्भ है। साथ-साथ खेलने और मिल कर काम करने से बहुत से सामा जिक गुण पैदा होते हैं, जैसे—सुशीलता, सहिष्णुता, एकता, सहयोग, सहनशीलता आदि। जब कई बच्चे मिलकर काम करते हैं तो प्रत्येक बच्चे के व्यक्तित्व के भद्दे और खुरदरे किनारे घिस कर समतल हो जाते हैं और वह समाज में दूसरों से मिलकर रहने और सामाजिक जीवन को अच्छा बनाने के योग्य हो जाता है।

दैनिक पाठ्यक्रम में बच्चों के मन के इस झुकाव को काम में लाने के अनगिनत अवसर हैं। विशेष तौर पर, दस्तकारी के काम और सामाजिक शिक्षा में मिलकर काम करने की बड़ी आवश्यकता है।

आत्म-प्रकटन करना:—वैसे तो अपने आपको बढ़-चढ़ कर दिखाने की चाह लगभग सभी में होती है परन्तु बच्चों में तो यह चाह बहुत ही होती है। प्रत्येक बच्चा चाहता है कि लोग उसकी ओर ध्यान दें और उसकी सराहना करें। वह प्रसिद्धि प्राप्त करने के लिये सौ यत्न करता है, वह खेल, पढ़ाई, लिखाई, ड्रामे चित्रकला, संगीत, प्रत्येक चीज में दूसरों से आगे बढ़ जाने का यत्न करता है।

पाठशाला के काम के इतने अंग हैं कि प्रत्येक बच्चे को किसी न किसी चीज में अपनी इस चाह को पूरा करने का अवसर मिल सकता है। आप का काम है कि प्रत्येक बच्चे के व्यक्तित्व के उस अंग का पता लगायें जिसे अधिक उजागर किया जा सकता है।

पाठ्यक्रम और शिक्षण-विधि:—*जैसा कि ऊपर बताया गया है* कि इस आयु के बच्चों के स्वभाव में सब से प्रत्यक्ष चीज यह होती है कि वे सदा कुछ न कुछ करते रहते हैं, कभी भी निचले नहीं बैठते। वे 'करने' के द्वारा सीखते हैं। बच्चा ज्ञान और क्रिया को दो अलग अलग चीजें नहीं समझता। वह प्रत्येक चीज को अनुभव द्वारा सीखता है। उसके सामने मुख्य चीज होती है कुछ करना। और इस 'करने' के समय उसको कुछ ज्ञान भी प्राप्त हो जाता है इस लिये पाठशाला में इस सिद्धान्त को प्रयोग में लाना चाहिये कि बच्चे किस क्रिया द्वारा ज्ञान प्राप्त करें। बेसिक पाठशाला में इस प्रकार की शिक्षा के लिये बहुत अवसर हैं। उद्योग का काम, स्वास्थ्य और सफाई का प्रोग्राम, बाल-सभा की बैठक, ग्राम में समाज-सुधार का काम, मनोरंजन, सैर-सपाटे, कौमी और मौसमी त्योहार मनाना, पाठशाला के काम की प्रदर्शनी का आयोजन करना और माता-पिता और ग्राम-वासियों के लिये शिक्षाप्रद और मनोरंजक नाटक और जलसे करना आदि ऐसी

चीज़ें हैं जिनमें बच्चों के लिये करने, सीखने और भिन्न-भिन्न प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के अनगिनत अवसर छुपे हुये हैं। आप का काम उन अवसरों के पहचानना और उनसे लाभ प्राप्त करना है।

समवाय की विधि :—बेसिक पाठशाला में प्रायः इस बारे में बड़ी कठिनाइयां अनुभव की जा रही हैं। बहुत बार देखा गया है कि यहां हाथों के काम और दूसरे विषयों में कोई सम्बन्ध नहीं होता, हाथ का काम मशीनी ढंग से कराया जाता है। इसमें मानसिक क्रिया का कोई स्थान नहीं होता और शिक्षा के दूसरे विषय बच्चे के जीवन और सामाजिक आवश्यकताओं से मीलों दूर रहते हैं। इस प्रकार बेसिक शिक्षा और आम शिक्षा में केवल यही अन्तर रह जाता है कि बेसिक पाठशाला में एक दस्तकारी भी सिखाई जाती है। परन्तु यह चीज़ बेसिक शिक्षा की स्पिरिट (spirit) के विरुद्ध है। यहां तो इस बात की आवश्यकता है कि बच्चे को जो कुछ सिखलाया जाय वह किसी ऐसी क्रिया द्वारा हो जिस के अर्थ और उद्देश्यों से बच्चा परिचित हो ताकि वह ज्ञान उसकी व्यक्तित्व की मांग बन सके। जो कठिनाइयां कोई क्रियात्मक काम करते समय बच्चे के सामने आयेंगी, उन पर काबू पाने की आवश्यकता वह स्वयं अनुभव करेगा और इस के बारे में आवश्यक बातों का ज्ञान उसको प्राप्त करना पड़ेगा। स्पष्ट है कि इस तरह प्राप्त किया हुआ सारा ज्ञान उस काम से सीधा सम्बन्ध रखेगा। इस का नाम 'समवाय' है। जो पढ़ाना या सिखाना है, उसको क्रमबद्ध करते और शिक्षा-विधि सोचते समय समवाय के सिद्धांत को सामने रखना चाहिये।

आप जब किसी श्रेणी के काम का ढांचा बनाएं तो उसमें [illegible] उद्योग और दूसरे क्रियात्मक कामों को दीजिये और

भिन्न-भिन्न विषयों के केवल वे भाग चुनिये जो उस विशेष क्रिया को करने में सहायता करते हों या उसके अर्थ को स्पष्ट करते हों। इस प्रकार 'समवाय' का एक और पक्ष आपके सामने आयेगा कि अलग-अलग विषयों की मदद से किसी उद्देश्यपूर्ण काम को कैसे फैलाया और सार्थक बनाया जा सकता है। आप समवाय को जबरदस्ती पैदा नहीं कर सकते। जिन चीजों में कोई नाता या सम्बन्ध न हो, भला उन में समवाय कैसे पैदा किया जा सकता है। जिन में आपस में संबंध होता है, वहां उस सम्बन्ध को समझने की आवश्यकता अवश्य ही पड़ती है। यदि बच्चे यह मालूम करना चाहते हैं कि हम अपने लिये कपड़े कैसे प्राप्त करते हैं तो उनको बहुत सी बातों की खोज करनी पड़ेगी, जिनका सम्बन्ध खेती-बाड़ी, सामाजिक विज्ञान, हिसाब-किताब, कताई-बुनाई, विज्ञान-कला आदि से है। इसलिए कपड़े के विषय को समझने के लिये, इन सब विषयों का संबन्धित ज्ञान प्राप्त करना पड़ेगा। यहां भिन्न-भिन्न विषयों का 'समवाय' केवल उस सीमा तक ही होगा कि यह इस विषय का हल तलाश करने में मदद करे। यह तब ही हो सकता है जब अध्यापक खुद उस विषय के सारे पक्षों से परिचित हो।

आप जानते हैं कि बेसिक शिक्षा-प्रणाली में उद्योग के साथ-साथ शिक्षा के अन्य केन्द्र बच्चे का सामाजिक वातावरण और बच्चे का प्राकृतिक वातावरण माने गये हैं। इसका बड़ा कारण यह है कि नई तालीम के दृष्टिकोण से स्कूल बच्चे को किसी अनिश्चित भावी जीवन के लिये तैयार करने का स्थान नहीं है जिसका रूप तेज़ी से बदलते हुये हालात में पहले से ठीक-ठीक निर्धारित नहीं किया जा सकता। बल्कि स्कूल का काम बच्चे के वर्तमान जीवन की आवश्यकताओं को पूर्ण करना और उसे सँवारना

चीजें हैं जिनमें बच्चों के लिये करने, सीखने और भिन्न-भि
प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के अनगिनत अवसर छुपे हुये हैं।
का काम उन अवसरों के पहचानना और उनसे लाभ प्राप्त करना

समवाय की विधि :—बेसिक पाठशाला में प्रायः इस बारे
बड़ी कठिनाइयां अनुभव की जा रही हैं। बहुत बार देखा ग
है कि यहां हाथों के काम और दूसरे विषयों में कोई सम्बन्ध
होता. हाथ का काम मशीनी ढंग से कराया जाता है। इ
मानसिक क्रिया का कोई स्थान नहीं होता और शिक्षा के दू
विषय बच्चे के जीवन और सामाजिक आवश्यकताओं से भी
दूर रहते हैं। इस प्रकार बेसिक शिक्षा और आम शिक्षा में केव
यही अन्तर रह जाता है कि बेसिक पाठशाला में एक दस्तक
भी सिखाई जाती है। परन्तु यह चीज बेसिक शिक्षा की स्पि
(spirit) के विरुद्ध है। यहां तो इस बात की आवश्यकता है
बच्चे को जो कुछ सिखलाया जाय वह किसी ऐसी क्रिया द्वारा
जिस के अर्थ और उद्देश्यों से बच्चा परिचित हो ताकि वह ज्ञा
उसकी व्यक्तित्व की मांग बन सके। जो कठिनाइयां कोई क्रियात्म
काम करते समय बच्चे के सामने आयेंगी, उन पर काबू पाने
आवश्यकता वह स्वयं अनुभव करेगा और इस के बारे
आवश्यक बातों का ज्ञान उसको प्राप्त करना पड़ेगा। स्पष्ट है
इस तरह प्राप्त किया हुआ सारा ज्ञान उस काम से सीधा सम्बन्ध
रखेगा। इस का नाम 'समवाय' है। जो पढ़ाना या सिखाना है
उसको क्रमबद्ध करने और शिक्षा-विधि सोचने समय समवाय
सिद्धांत को सामने

भिन्न-भिन्न विषयों के केवल वे भाग चुनिये जो उस विशेष क्रिया को करने में सहायता करते हों या उसके अर्थ को स्पष्ट करते हों। इस प्रकार *'समवाय'* का एक और पक्ष आपके सामने आयेगा कि अलग-अलग विषयों की मदद से किसी उद्देश्यपूर्ण काम को कैसे फैलाया और सार्थक बनाया जा सकता है। आप समवाय को जबरदस्ती पैदा नहीं कर सकते। जिन चीजों में कोई नाता या सम्बन्ध न हो, भला उन में समवाय कैसे पैदा किया जा सकता है। जिन में आपस में संबंध होता है, वहां उस सम्बन्ध को समझने की आवश्यकता अवश्य ही पड़ती है। यदि बच्चे यह मालूम करना चाहते हैं कि हम अपने लिये कपड़े कैसे प्राप्त करते हैं तो उनको बहुत सी बातों की खोज करनी पड़ेगी, जिनका सम्बन्ध खेती-बाड़ी, सामाजिक विज्ञान, हिसाब-किताब, कताई-बुनाई, विज्ञान-कला आदि से है। इसलिए कपड़े के विषय को समझने के लिये, इन सब विषयों का संबन्धित ज्ञान प्राप्त करना पड़ेगा। यहां भिन्न-भिन्न विषयों का 'समवाय' केवल उस सीमा तक ही होगा कि वह इस विषय का हल तलाश करने में मदद करे। यह तब ही हो सकता है जब अध्यापक खुद उस विषय के सारे पक्षों से परिचित हो।

आप जानते हैं कि बेसिक *शिक्षा-प्रणाली* में उद्योग के साथ-साथ शिक्षा के अन्य केन्द्र बच्चे का सामाजिक वातावरण और बच्चे का प्राकृतिक वातावरण माने गये हैं। इसका बड़ा कारण यह है कि नई तालीम के दृष्टिकोण से स्कूल बच्चे को किसी अनिश्चित भावी जीवन के लिये तैयार करने का स्थान नहीं है जिसका रूप तेजी से बदलते हुये हालात में पहले से ठीक-ठीक निर्धारित नहीं किया जा सकता। बल्कि स्कूल का काम बच्चे के वर्तमान जीवन की आवश्यकताओं को पूर्ण करना और उसे सँवारना

है। बच्चे के जीवन पर उसके इर्द-गिर्द का प्रभाव पड़ता रहता है, इस लिये आवश्यक है कि वह अपने इर्द-गिर्द की अवस्था को भली प्रकार समझे और अपने समाज और चारों ओर की प्राकृतिक वस्तुओं द्वारा ज्ञान, समझ-बूझ, रुचियां और रसिकता प्राप्त करे, उसका जीवन भरपूर और मालामाल हो सके। यदि केवल उद्योग ही सारी शिक्षा का केन्द्र होता, तो शायद बच्चा बहुत-सी उन बातों से अनजान रह जाता जो उसके जीवन को सार्थक बनाती हैं, उस के व्यक्तित्व को रंग-रूप प्रदान करती हैं और उसको अपने और दूसरों के लिये काम का बनाती हैं। या फिर खींच-तान कर उन बातों का सम्बन्ध दस्तकारी से पैदा करने का हास्यप्रद यत्न किया जाता जिसका परिणाम यह होता कि उन बातों में सफाई पैदा होने की जगह उलझन हो जाती है। शिक्षा को सामाजिक वातावरण से समवाय करने का क्या अर्थ है? कुछ लोग इस का भाव यह समझते हैं कि बच्चों को अपने समाज के भिन्न-भिन्न कामों से परिचित किया जाय, जैसे-हमारे सामाजिक जीवन में अलग अलग व्यवसायों की क्या महत्ता है, किस किस जाति के लोग इर्द-गिर्द रहते हैं, कौन-कौन से मेले-ठेले और तिथि-त्योहार होते हैं, हमारी खाने-पीने पहने-ओढ़ने और रहने-सहने की आवश्यकतायें कैसे पूरी होती हैं, लोगों के रीति-रिवाज क्या-क्या हैं, कौन कौन सी संस्थायें सामाजिक जीवन को सुधारने और इस में सुविधा पैदा करने का काम कर रही हैं, आदि। ये ऐसी बातें हैं जिन के सम्बन्ध में बच्चों को ज्ञान होना चाहिये कि वे कैसे जीवन पर प्रभाव डालती हैं।

[illegible] वातावरण से समवाय देने का अर्थ यह [illegible] के समाज का हवाला दे कर अलग-अलग देशों

के वासियों के रहने पर प्रकाश डाला जाय। जैसे, यदि अरब देश के 'बद्दू' लोगों पर पाठ पढ़ाना हो तो अपने गांव या कस्बे में कभी कभी आने वाले (खानाबदोशों) ओड़, बागड़ आदि से लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

कुछ लोग सामाजिक वातावरण से समवाय का भाव यह समझते हैं कि बच्चे में अच्छी सामाजिक आदतें पैदा की जायें ताकि वे अपने समाज की उन्नति में भाग ले सकें। जैसे उस में मिलकर रहने और काम करने का सलीका पैदा किया जाय या अपने शरीर, वस्त्र, कमरे, पाठशाला और गांव की सफ़ाई का भाव पैदा किया जाय, आदि।

ऊपर सामाजिक वातावरण से शिक्षा को समवाय करने के जो अर्थ दिये गये हैं, वे अपर्याप्त और अधूरे हैं। इसमें कोई हर्ज नहीं यदि इन सब साधनों से शिक्षा में काम लिया जाय। परन्तु यह सारी दिखावटी और मौखिक शिक्षा है। आवश्यकता इस बात की है कि बच्चे का ज्ञान उसके अपने निरीक्षण, अनुभव और क्रिया की ठोस नींव पर क़ायम किया जाय। ऐसे सामाजिक काम और क्रियाएं की जायें जिन के द्वारा बच्चा वह ज्ञान, सूझ-बूझ, रुचियां और रसिकता प्राप्त कर सकें, जो उसको अपने और अपनी समाज के जीवन को अच्छा बनाने में सहायक हों।

इस दृष्टिकोण से देखिये तो सामाजिक वातावरण से शिक्षा का समवाय करने के कुछ रूप ये हो सकते हैं :—

1. पाठशाला में स्वास्थ्य और सफ़ाई के प्रोग्राम को चलाना, जिसके अनुसार बच्चे अपने शरीर, वस्त्र, कमरे और पाठशाला की सफ़ाई में क्रियात्मक तौर पर भाग लें और इस सम्बन्ध में साधारण

विज्ञान और स्वास्थ्य-रक्षा के ढंगों से सम्बन्धित बातें सीखें और समझें ।

2. बाल-सभा की साप्ताहिक बैठक करना जिसमें बच्चे न केवल नागरिकता की वास्तविक शिक्षा प्राप्त करेंगे अपितु इसकी तैयारी में मातृभाषा का बहुत-सा रोचक और लाभदायक काम हो सकता है, जैसे—कविता, गीत, कहानी, ड्रामा, भाषण, वाद-विवाद, आदि ।

3. बस्ती में समाज-सुधार के काम में भाग लेना । इसमें सामाजिक विज्ञान, मातृभाषा, साधारण विज्ञान और कला की शिक्षा के अवसर मिलेंगे ।

4. कौमी और मौसमी त्यौहारों का मनाना. पाठशाला में इस प्रकार के जलसे करने के सम्बन्ध में बच्चे हिसाब-किताब, कला, मातृभाषा, इतिहास आदि का काम करेंगे ।

5. सामाजिक संस्थाओं का निरीक्षण करना, डाकखाना, हस्पताल, बिजली-घर, रेलवे स्टेशन या गांव के भिन्न-भिन्न व्यवसायों की जगहों को जाकर देखने और उनसे सम्बन्धित मौखिक और लिखित तौर पर अपने विचारों को प्रकट करने में भिन्न-भिन्न विषयों की शिक्षा होगी । अतः शिक्षा को बच्चे के सामाजिक वातावरण से समवाय करने का भाव यह है कि बच्चा सामाजिक कामों में भाग लेकर या सामाजिक चीजों का निरीक्षण और अनुभव करके भिन्न-भिन्न प्रकार की चीजें सीखे और समझे ।

ऐसे ही शिक्षा को बच्चे के प्राकृतिक वातावरण से समवाय करने का भाव यह है कि बच्चा प्राकृतिक निरीक्षण करके आवश्यक ज्ञान प्राप्त करे। इस पक्ष से पाठों को ऋतुओं के अनुसार चुना जा

सकता है। जैसे, वर्षा-ऋतु में कीड़े-मकोड़ों का जीवन, वसन्त ऋतु में फूल और फल, सर्दी के आरम्भ में, जब कि आकाश साफ होता है, तारों का ज्ञान, आदि। छोटी-छोटी तालीमी सैरों के द्वारा सुगमता से और प्रभावशाली ढंग में इसे पेश किया जा सकता है। इस प्रकार बच्चे के कुदरती वातावरण से लाभ प्राप्त करके साधारण विज्ञान, मातृभाषा और कला की शिक्षा को सार्थक बनाया जा सकता है।

काम की समवाय सहित रूपरेखा:—पढ़ाने के सम्बन्ध में आप का पहला काम पाठ्यक्रम को समय के अनुसार छोटे-छोटे भागों में बांटना और उनको क्रम देना है। इनमें प्रत्येक इकाई (Unit) की रूपरेखा तैयार करते समय आपको उस की कठिनाई, महत्ता और बच्चों की आयु और योग्यता का ध्यान रखना चाहिये। इसी प्रकार इकाई के किसी एक भाग की लम्बाई नियत करने में भी इन ही बातों को सामने रखना आवश्यक है। उदाहरण के लिये, साधारण घटाने का तरीका, जो एक नौसिखिये या कच्चे अध्यापक को गणित का एक सुगम भाग मालूम होता है, वास्तव में छोटे बच्चों के लिये एक कठिन चीज है। इसलिये इस को ऐसे भागों में बांटना चाहिये कि बच्चे आसानी से समझ जायें।

प्रत्येक इकाई में एक केंद्रीय विचार होना चाहिये जिसे एक समस्या के रूप में पेश किया जा सके। जैसे—हम अपने कपड़ों से सम्बन्धित आवश्यकतायें पूरी कैसे करते हैं? फसलें कैसे उगाई जाती हैं? हम भारतवासियों को स्वतन्त्रता कैसे प्राप्त हुई? हम गांधी-जन्म-दिवस कैसे मनायें? आदि।

ऊपर बताई गई बातों के प्रकाश में आप को साल-भर के काम की रूपरेखा पहले ही तैयार कर लेनी चाहिये। इस में बड़ी-बड़ी

विज्ञान और स्वास्थ्य-रक्षा के ढंगों से सम्बन्धित बातें सीखें और समझें।

2. बाल-सभा की साप्ताहिक बैठक करना जिसमें बच्चे न केवल नागरिकता की वास्तविक शिक्षा प्राप्त करेंगे अपितु इसकी तैयारी में मातृभाषा का बहुत-सा रोचक और लाभदायक काम हो सकता है, जैसे—कविता, गीत, कहानी, ड्रामा, भाषण, वाद-विवाद, आदि।

3. बस्ती में समाज-सुधार के काम में भाग लेना। इसमें सामाजिक विज्ञान, मातृभाषा, साधारण विज्ञान और कला की शिक्षा के अवसर मिलेंगे।

4. कौमी और मौसमी त्यौहारों का मनाना, पाठशाला में इस प्रकार के जलसे करने के सम्बन्ध में बच्चे हिसाब-किताब, कला, मातृ-भाषा, इतिहास आदि का काम करेंगे।

5. सामाजिक संस्थाओं का निरीक्षण करना, डाकखाना, हस्पताल, विजली-घर, रेलवे स्टेशन या गांव के भिन्न-भिन्न व्यवसायों की जगहों को जाकर देखने और उनसे सम्बन्धित मौखिक और लिखित तौर पर अपने विचारों को प्रकट करने में भिन्न-भिन्न विषयों की शिक्षा होगी। अतः शिक्षा को बच्चे के सामाजिक वातावरण से समवाय करने का भाव यह है कि बच्चा सामाजिक कामों में भाग लेकर या सामाजिक चीजों का निरीक्षण और अनुभव करके भिन्न-भिन्न प्रकार की चीजें सीखे और समझे।

ऐसे ही शिक्षा को बच्चे के प्राकृतिक वातावरण से समवाय करने का भाव यह है कि बच्चा प्राकृतिक निरीक्षण करके आवश्यक ज्ञान प्राप्त करे। इस पक्ष से पाठों को ऋतुओं के अनुसार

3. रुई तोलना—छटांक, तोला और आने के बांट।

4. रुई की सफ़ाई—पिंजाई, पूनी बनाना और कताई की रफ़्तार, घड़ी से समय मालूम करना, घण्टा, मिन्ट, समय के पैमाने, रफ़्तार निकालने में गुणन और भाग का अभ्यास।

5. प्रति दिन काते हुए सूत को गजों में प्रकट करना। गुणन और भाग का अभ्यास (1 तार=4 फ़ुट)

6. एक दिन में कुल कितने तार काते। गिनना और दो अलग-अलग घंटों में कातने में तारों को जोड़ना और यह पता लगाना कि लट्टी पूरी करने के लिये और कितने तार काते जायं। इस प्रकार गुणा, जोड़ करने और घटाने का अभ्यास।

7. पिंजाई और कताई का रिकार्ड रखना।

सामाजिक विज्ञान

1. धनुप-धुनकी और पिंजाई की जुटाई के लिये बांस का प्रयोग। बांस कहां और कैसे पैदा होता है? हमारे पास कैसे पहुँचता है? जल-वायु और सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के साधन।

2. ताँत कहां से प्राप्त होती हैं? धुनिये के काम का निरीक्षण।

3. तकली की कहानी, प्राचीन समय से इस का प्रयोग।

4. अटेरन की लकड़ी कहां से आती है? बढ़ई के काम का निरीक्षण कराना।

साधारण विज्ञान

1. धनुप-धुनकी में धागे का तनाव। कीकर की पत्तियों का प्रयोग, कीकर का निरीक्षण, इस की विशेषतायें, पहचान, बांस की उपज से सम्बन्धित ज्ञान।

2. ताँत-संबन्धी आंतों का वर्णन और उनका काम।

3. पूनियाँ, पिंजाई और कताई पर वायु का प्रभाव।

मातृभाषा

1. कताई की अलग-अलग क्रियाओं के बारे में बातचीत करना और उस से सम्बन्धित चार्ट पर लिखी हुई इबारत को पढ़ना।

2. धुनकी के भागों के नाम लिखना।

3. धुनिये और बढ़ई के सम्बन्ध में पाठ पढ़ना।

4. धुनिये का गीत—एक कविता पढ़ना और याद करना।

कला

बच्चे अपने पसन्द का चित्र बनायें जिसका सम्बन्ध कताई की किसी क्रिया या इस इकाई के किसी विषय से हो। इतने कम आयु के बच्चों को अपनी इच्छा के अनुसार चित्र बनाने या कला का अन्य कोई काम करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिये। यहाँ कोई विषय देकर चित्र बनवाना उचित नहीं।

इकाई नं० २. बागबानी का काम

1. क्यारी की गुड़ाई करना।
2. खाद डालना।
3. बीज (मूली) बोना।
4. सिंचाई करना।
5. नलाई और गुड़ाई करना।

गणित

1. क्यारी की लम्बाई और चौड़ाई नापना। नौ-नौ इंच के अन्तर पर बोने के लिये बीजों की संख्या का पता लगाना। भाग का अभ्यास।

2. एक क्यारी में कितनी खाद डालनी चाहिये? मन और

सेर के पैमाने। यदि एक तसले में 5 सेर खाद आती हो तो पूरी क्यारी में कितने तसले खाद डालनी पड़ेगी ? भाग का अभ्यास।

सामाजिक विज्ञान

खाद कहां से प्राप्त होती है ? गोबर को ईंधन की जगह प्रयोग करने की हानियां। रासायनिक (Chemical) खाद के कारखाने। किसान अपने खेतों के लिये खाद कहां से प्राप्त करते हैं।

साधारण विज्ञान

1. मूली के बीजों की पहचान।
3. खाद कैसे तैयार करनी चाहिये ?
2. पौदा कैसे उगता है ? पौदे के भाग।

मातृभाषा

किये हुये काम का मौखिक और लिखित वर्णन।

कला (Art)

पहले की तरह

इकाई नं० 3 स्वास्थ्य और सफ़ाई का प्रोग्राम

1. शारीरिक सफ़ाई, स्नान, मुँह, हाथ, पांव, आँखें, नाक, कान, दाँत, बाल और नाखून की सफ़ाई।

2. कपड़ों की सफ़ाई।

3. कमरे, कमरे और पाठशाला की सफ़ाई।

4. भोजन।

5. स्वास्थ्यप्रद आदतें।

6. आम रोग।

गणित

1. बच्चों के कद और भार का रिकार्ड रखना, लम्बाई पैमाने, इंच के भाग, आधा, चौथाई और तीन-चौथाई भागके पैमा पौंड, सेर और मन, पौंड और सेर का सम्बन्ध।

2. कमीज, पाजामा के लिये कितना कपड़ा लगेगा, गज औ गिरह का ज्ञान।

सामाजिक शिक्षा

1. तेल और साबुन कहां से प्राप्त होता है?

2. धोबी और जुलाहे के काम का निरीक्षण करना।

3. नागरिकता की शिक्षा, अपनी चीजें, कमरे और पाठशाला को साफ रखना। मिल कर काम करने की आवश्यकता का अनुभव कराना।

4. खाने की चीजें कहां से और कैसे प्राप्त होती हैं? दूध देनेवाले पशु और उनकी देख-भाल।

5. खाने और खेलने के ढंग सीखना और प्रयोग करना।

6. सरकारी और गैर-सरकारी हस्पताल का निरीक्षण करना।

साधारण-विज्ञान

1. स्नान की आवश्यकता, खाल के छेदों का खुलना, तेल की मालिश क्यों करनी चाहिये?

2. नाखून साफ करने और काटने की आवश्यकता।

3. दातुन करने की आवश्यकता। नीम और कीकर की विशेषतायें तथा पहचान।

4. कमरे में सफेदी कराने के लाभ।

5. फीनाइल प्रयोग करने के लाभ।

6. भोजन में कौन-कौन सी-चीजें होनी चाहियें ?
   भोजन और पानी की रक्षा।
7. रोगों के फैलने के कारण, बचने के साधन और इलाज।

मातृभाषा

1. स्वास्थ्य-सम्बन्धी बातचीत करना।
2. चार्ट और पाठ पढ़ना।
3. अच्छी आदतें और रोग से बचने के साधन लिखना।
4. कहानियां पढ़ना और कविताएँ याद करना।

कला (Art)—पहले की तरह।

शिक्षण-विधि

अब हम इस बात पर विचार करेंगे कि पाठ्यक्रम के भिन्न भिन्न विषयों के बारे में क्या क्या सिखाया और पढ़ाया जाय और उसकी विधि क्या हो। यहां यह प्रश्न पैदा होता है कि क्या पाठ्यक्रम में जो कुछ है और जैसे दिया हुआ है, वह ही पढ़ाया जाय या उस में कोई परिवर्तन किया जा सकता है। वैसे तो प्रत्येक पाठ्यक्रम में और विशेष करके बेसिक पाठ्यक्रम में अध्यापक को आज़ादी होनी चाहिये कि वह समय के अनुसार आवश्यक परिवर्तन कर ले। बेसिक पाठशाला में कोई बन्धा हुआ पाठ्यक्रम नहीं चल सकता, क्योंकि यहां सीखना और सिखाना उन अवसरों पर निर्भर है जो उद्योग और दूसरी दिलचस्पियों के समय पैदा होते हैं। इस लिये बेसिक पाठशाला के लिए निश्चित पाठ्यक्रम को एक अटल चीज़ समझने के स्थान पर उसे इस प्रकार में देखना चाहिये कि यह थोड़ा-बहुत उन बातों की ओर इशारा करता है जो बच्चों को शिक्षा

उनका बढ़ना-फूलना रुक जायगा। मिट्टी में कुछ गोबर की खाद और सूखे हुये पत्ते भी मिला देने चाहियें।

बागीचा लगाने का काम आपको वर्षा-ऋतु के आरम्भ में ही कर लेना चाहिये ताकि वर्षा का पूरा-पूरा लाभ प्राप्त किया जा सके। इस से बगीचे को सारा वर्ष हरा-भरा रखने में आसानी होगी।

बागबानी के पाठ, जहां तक हो सके, बागीचे में ही पढ़ाइये। साधारण विज्ञान के पाठ पढ़ाने में भी इस से मदद मिलेगी। बागीचे में बहुत-से पक्षी घोंसले बनायेंगे और प्रातःकाल चहकेंगे, तितलियां और शहद की मक्खियां भिन-भिन करती फिरेंगी। इस से बच्चों को उनके निरीक्षण करने में मदद मिलेगी।

अब नीचे उन विषयों के संबन्ध में कुछ बातें लिखी जाती हैं, जो बागबानी के भाग में शामिल हैं।

पाठशाला का अजायबघर :—बच्चों में भिन्न-भिन्न चीजें इकट्ठी करने की इच्छा होती है। यदि आप किसी बच्चे की जेब या बस्ता देखें तो आपको उसमें अनोखी-अनोखी चीजें मिलेंगी—भिन्न-भिन्न बीज, कांच के टुकड़े, छोटे-छोटे पत्थर, रोड़े आदि। बच्चे के इस शौक को ठीक मार्ग पर डालकर तालीमी फायदा उठाया जा सकता है। बच्चों को बताइये कि वे किस प्रकार की चीजें इकट्ठी करें और उन्हें कैसे रखें।

बच्चों के इस शौक से लाभ प्राप्त करके आप पाठशाला में एक छोटा-सा अजायबघर स्थापित कर सकते हैं। बच्चे सैर करते समय जो चीजें जमा करें, उन्हें नियमानुसार इस अजायबघर में रखिये। इस के लिये पाठशाला का कोई कमरा, और यदि यह असंभव हो तो कमरे का एक कोना चुन लीजिये। अजायबघर को अलग-अलग चीजों की दृष्टि से अलग-अलग भागों में बांट

दीजिये। इससे यह लाभ होगा कि बच्चे अपने आप इन चीज़ों के बारे में ज्ञान प्राप्त करना चाहेंगे। आप भी इन चीज़ों को पाठ देते समय तालीमी सहायक साधनों के काम में प्रयोग कर सकेंगे। जब आप बच्चों को सैर के लिये बाहर ले जाइये तो उनके पास भिन्न भिन्न प्रकार के पत्थर, मिट्टी, पत्ते, छाल, फूल, अनाज, गोंद, जड़ी बूटियां, चिड़ियों के पंख और घोंसले, तितलियां, पतंगे, कीड़े-मकौड़े, अण्डे, मरे हुए जानवरों की हड्डियां, चमड़ा, धातु, सिक्के, जो भी मनोरंजक और उपयोगी चीज़ें मिलें, जमा कराइये।

अजायबघर में जो चीज़ें इकट्ठी की जायें, उनकी सूची तैयार करने और नंबर और लेबल लगाने में बच्चों की मदद लेनी चाहिय। इन चीजों को क्रम देने और प्रदर्शनी के लिये सजाने में बच्चों का हाथ होना चाहियें।

ऊपर दी हुई चीज़ों के जमा करने के संबन्ध में ये बातें याद रखनी चाहियें:—

फूल और पत्ते:—बच्चे अपनी पसंद के फूल और पत्तों को एक कापी या अलबम में दबा कर रखें और सूख जाने के बाद गोंद से कागज पर लगादें और प्रत्येक वस्तु के नीचे उसका नाम भी लिख दें। यदि बच्चों में यह शौक पैदा हो गया तो छुट्टी के समय वे अपनी अलग-अलग अलबम भी तैयार कर लेंगे। पत्तों को दबाते समय उनको बताइये कि पत्तों में सिलवटें न पड़ें। सर्दियों में यह काम अच्छा होता है। फूलों और पत्तों को सुखाने का ठीक ढंग यह है कि उनको वृक्ष या पौदे से तोड़ कर शीघ्र ही एक बड़े स्याही-चूस पर ठीक तरह फैला दिया जाय और फिर उस के ऊपर कुछ रद्दी कागज़ रख कर किसी भारी और समतल चीज़ से दबा दिया जाय।

पांच-छः दिन बाद उनको बाहर निकल कर धूप में रख दिया जाय। परन्तु उनको उतना समय ही धूप में रहने दिया जाय जिससे उन की नमी न रह जाय क्योंकि बहुत समय तक धूप में रखने से उनका रंग बदल जाता है। इस के बाद उनको गोंद या लेई से अलबम में लगा दिया जाय। इतना ध्यान करने के बाद भी इनका असली रंग बहुत दिनों तक स्थिर नहीं रह सकता। परन्तु उन का रूप, आकार और रेशे ठीक उसी प्रकार ही रहते हैं।

बीज :—फूल और पत्तियों आदि की तरह बीज भी जमा कराये जा सकते हैं। बीजों को अलग-अलग शीशियों या डिब्बों में रख कर प्रत्येक पर उनके नाम का लेबल लगा देना चाहिये। बीज जमा करने के संबन्ध में बच्चों को बताना चाहिये कि बीज कैसे प्राप्त किये जाते हैं। बहुत-से फूलों के सूख जाने के बाद उनसे बीज प्राप्त हो सकते हैं। सूर्यमुखी जैसे फूलों के बीज प्राप्त करने के लिये उन्हें सुखाना पड़ता है। गुल अब्बास का फूल सूख कर नीचे गिर पड़ता है और उसका बीज काली मिर्च की तरह दिखाई पड़ता है। गुलाब का बीज प्रायः दिखाई नहीं देता। बीज जमा करते समय बच्चों को इस प्रकार की बहुत-सी काम आनेवाली बातों का पता लगेगा।

पत्थर :—अलग-अलग प्रकार के पत्थर और मिट्टी जमा कराना उपयोगी होगा क्योंकि इसकी मदद से भूमि की रचना के बारे में बच्चे जो ज्ञान प्राप्त करेंगे, वह ठोस होगा। पत्थरों और मिट्टियों के नाम और उन का प्रयोग कागजों पर लिख कर उन के साथ रखना चाहिये।

चिड़ियों के घोंसले :—कई चिड़ियों के घोंसले बड़े सुन्दर

होते हैं, जैसे बये का घोंसला। बच्चे ऐसे घोंसले इधर-उधर से लाकर अजायबघर में रखें। इस से उनको इन चिड़ियों की हुशियारी और स्वभाव के बारे में बहुत-सी मनोरंजक बातों का पता लगाने का अवसर मिलेगा।

चित्र :—यदि चिड़ियों, पशुओं, पौदों और फलों और फूलों के चित्र मिल सकें तो उनको भी अजायबघर के लिये जमा कराया जा सकता है। इसमें साधारण विज्ञान के पाठ पढ़ाने में बड़ी मदद मिलेगी और बच्चों को प्रकृति की चीजों का निरीक्षण करने और समझने की आदत पड़ेगी।

बागवानी सिखाने से सम्बन्धित कुछ आवश्यक बातें:— काम करने के लिये चार-चार, पांच-पांच बच्चों की टोलियां बनाइये। प्रत्येक टोली अपना-अपना नेता चुने। इस प्रकार बच्चों को मिल कर काम करने की आदत पड़ेगी, अपने-अपने काम का खाका स्वयं बना कर उसके अनुसार काम करने और उस को पूरा करने की शिक्षा प्राप्त होगी और उनमें सोच-समझ कर और जिम्मेदारी से काम करने की योग्यता पैदा होगी।

काम का खाका बनाते समय बच्चों को न केवल यह बात सामने रखनी चाहिये कि क्या करना है और कैसे करना है बल्कि उस काम के लिये जिस सामग्री की आवश्यकता हो, उस की सूची भी बना लेनी चाहिये, जैसे—टोकरियां, रस्सियां, फव्वारे, फावड़े, खुरपियां आदि। जब काम समाप्त हो जाय तो सब चीजों को भली प्रकार रखना चाहिये। बहुत-से बच्चे काम समाप्त होने की घड़ी बजते ही सामान को वहीं फैंक कर भाग जाते हैं। इस बुरी आदत से उनको बचाना चाहिये।

बच्चों में शौक पैदा कीजिये कि जो काम उन्होंने पाठशाला में सीखा है, वह घर जाकर भी करें। जब कभी आप उनके घर जाइये तो उनकी क्यारियों का परीक्षण कीजिये। इससे उनका साहस बढ़ेगा और उनका ज्ञान पक्का और जीवन से सम्बन्धित हो जायगा। इस के साथ-साथ घर और पाठशाला के रिश्ते को पक्का करने में भी सहायता मिलेगी।

साधारण–विज्ञान

विज्ञान की शिक्षा का उद्देश्य:—तालीमी भाषा में विज्ञान का उद्देश्य वैज्ञानिक ढंग (Scientific method) बताया जाता है अर्थात् विज्ञान की शिक्षा द्वारा बच्चों में चीज़ों को ध्यान से देखने, अनुभव करने और बुद्धि की कसौटी पर परखने की आदत पड़नी चाहिये। उनमें एक ऐसा मानसिक झुकाव पैदा होना चाहिये कि वे किसी बात को भी उस समय तक ठीक न मानें, जब तक कि उसके लिये काफ़ी सबूत न हों। केवल किसी के कहने-सुनने से ही भरोसा न कर लें अर्थात् बच्चों में सचाई के खोजने और परखने की योग्यता पैदा होनी चाहिये।

बेसिक स्कूल की आरम्भिक श्रेणियों में विज्ञान का जो पाठ्य-क्रम दिया गया है, उस में प्रकृति-अध्ययन (Nature study) एक विशेष विषय है। कहते हैं कि कुदरत अपना भेद केवल अपने प्रेमियों को ही बताती है। इस लिये बच्चों के मन में प्रकृति के लिये प्रेम होना चाहिये, तब ही वे प्रकृति की चीज़ों को ध्यान से देखेंगे। पाठशाला के बग़ीचे में बाग़बानी करते समय और इर्द-गिर्द के इलाके की सैर करते हुए बच्चों को प्रकृति की अनगिनत मनोरंजक वस्तुएं मिलेंगी, जिन का निरीक्षण कराया जा सकता [illegible]

की खोज और लोक-सेवा के लिये बड़ी-बड़ी कठिनाइयां झेलीं और बलिदान दिये ताकि उनके मन में वैज्ञानिकों के काम का सम्मान हो और वे खुद भी सचाई का साथ देना सीखें।

हमारे देश में विज्ञान की शिक्षा पर और अधिक ज़ोर देने की आवश्यकता है क्योंकि यहां अन्धविश्वास और मनोमालिन्य (prejudice) अधिक है।

शिक्षण विधि:—जैसा कि ऊपर इशारा किया गया है, साधारण विज्ञान की शिक्षा का बागवानी से बहुत अधिक संबंध होगा। इर्द-गिर्द के खेतों, वृक्षों, पौदों और जानवरों आदि का निरीक्षण खेतों की सैर कराते समय कराया जायगा। विषयों को ऋतुओं के अनुसार बांटना अधिक उचित होगा। इस प्रकार आप बच्चों के शौक और जोश को सुगमता से ही उभार सकेंगे। इस बात का ध्यान रखिये कि शुरू में छोटे बच्चों को सजीव वस्तुओं से अधिक प्यार होता है। इस लिये पहली दो-तीन श्रेणियों में जानवरों, पक्षियों और कीड़े-मकोड़ों के निरीक्षण की ओर अधिक ध्यान दीजिये और शेष श्रेणियों में प्राकृतिक वस्तुओं, जैसे—सूर्य-चांद, तारों, ऋतुओं, बिजली, गर्मी, प्रकाश आदि के निरीक्षण पर अधिक ध्यान दीजिये। और आगे की कक्षाओं में प्राकृतिक चीज़ों, जैसे—सूर्य, चन्द्रमा, तारों, मौसम, बिजली, गर्मी, रौशनी आदि के अध्ययन का प्रबन्ध कीजिये।

मातृभाषा

मातृभाषा की शिक्षा का उद्देश्य:—मातृभाषा को भली प्रकार सिखाना सारी शिक्षा की नींव है। जब तक कोई मनुष्य अपनी भाषा को भली प्रकार न बोल सकता हो और ठीक तथा

द्वारा विज्ञान के सिद्धांत समझाये जा सकते हैं, जैसे—नदी एक विशेष दिशा की ओर क्यों बहती है? रात-दिन क्यों बनते हैं? ऋतुएं क्यों बदलती हैं? इन्द्रधनुष कैसे पैदा होता है? वृक्ष और पौदे क्यों उपजते और बड़े होते हैं? आदि। निरीक्षण करने और अध्ययन करने से बहुत-सी छुपी हुए बातें सामने आएंगी। बच्चे के सामने प्रायः ऐसा होगा कि एक चीज़ की खोज करते हुए दूसरी सामने आ जायगी, जो बच्चे के ध्यान को अपनी ओर खैंचेगी, और फिर वह उसको समझने का यत्न करेगा। इस प्रकार उसकी खोज का सिलसिला कायम रहेगा।

साधारण विज्ञान का एक उद्देश्य यह भी है कि बच्चा अपने और अपने इर्द-गिर्द के रहनेवालों के स्वास्थ्य को कायम रखने में मदद दे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये पाठ्यक्रम में स्वास्थ्य-रक्षा के ढंगों के बारे में आवश्यक बातें दी गई हैं। इस संबंध में विशेष करके स्वास्थ्य को हानि पहुँचानेवाले जानवरों और कीड़े-मकौड़ों का निरीक्षण कराना चाहिये, जैसे—मक्खी, मच्छर, मकड़ी, सांप, बिच्छू, चूहे आदि। स्वास्थ्य और सफाई के बारे में उन सब बातों की ओर ध्यान देना चाहिये जिनका वर्णन शारीरिक शिक्षा के भाग में आ चुका है।

साधारण विज्ञान से यह उद्देश्य भी पूरा होना चाहिये कि बच्चे विज्ञान के उन बड़े-बड़े सिद्धान्तों को समझने लग जायें जो मानवी जीवन में सुविधायें पैदा करने के लिये प्रयोग किये गये हों, जैसे—भाप का इंजन, बिजली का तार, पानी की बर्फ, प्रतिदिन जीवन में काम आनेवाली मशीनें आदि। इस संबंध में बच्चों को उन वैज्ञानिकों के यत्नों से भी परिचित कराना चाहिये जिन्होंने सचाई

की खोज और लोक-सेवा के लिये बड़ी-बड़ी कठिनाइयां झेलीं और बलिदान दिये ताकि उनके मन में वैज्ञानिकों के काम का सम्मान हो और वे खुद भी सचाई का साथ देना सीखें।

हमारे देश में विज्ञान की शिक्षा पर और अधिक जोर देने की आवश्यकता है क्योंकि यहां अन्धविश्वास और मनोमालिन्य (prejudice) अधिक है।

शिक्षण विधि:—जैसा कि ऊपर इशारा किया गया है, साधारण *विज्ञान की शिक्षा का बागवानी से बहुत अधिक संबंध होगा।* इर्द-गिर्द के खेतों, वृक्षों, पौदों और जानवरों आदि का निरीक्षण खेतों की सैर कराते समय कराया जायगा। विषयों को ऋतुओं के अनुसार बांटना अधिक उचित होगा। इस प्रकार आप बच्चों के शौक और जोश को सुगमता से ही उभार सकेंगे। इस बात का ध्यान रखिये कि शुरू में छोटे बच्चों को सजीव वस्तुओं से अधिक प्यार होता है। इस लिये पहली दो - तीन श्रेणियों में जानवरों, पक्षियों और कीड़े-मकोड़ों के निरीक्षण की ओर अधिक ध्यान दीजिये और शेष श्रेणियों में प्राकृतिक वस्तुओं, जैसे—सूर्य-चांद, तारों, ऋतुओं, बिजली, गर्मी, प्रकाश आदि के निरीक्षण पर अधिक ध्यान दीजिये। और आगे की कक्षाओं में प्राकृतिक चीजों, जैसे —सूर्य, चन्द्रमा, तारों, मौसम, बिजली, गर्मी, रौशनी आदि के अध्ययन का प्रबन्ध कीजिये।

मातृभाषा

मातृभाषा की शिक्षा का उद्देश्य:—मातृभाषा को भली प्रकार सिखाना सारी शिक्षा की नींव है। जब तक कोई मनुष्य अपनी भाषा को भली प्रकार न बोल सकता हो और ठीक तथा

साफ़ न लिख सकता हो, उसके विचारों में शुद्धता और सफ़ाई पैदा नहीं हो सकती। इसके अतिरिक्त मातृभाषा के द्वारा बच्चा अपने राष्ट्रीय विचारों और भावनाओं के कोष को प्राप्त करता है इसलिये इससे सामाजिक और नैतिक शिक्षा का काम भली प्रकार लिया जा सकता है। मातृभाषा की शिक्षा का बहुत महत्त्व है और इसका सब से बड़ा उद्देश्य यह है कि बच्चा बोल कर और लिख कर अपने विचारों और भावनाओं को बिना झिझके शुद्धता और सफ़ाई के साथ प्रकट कर सके।

विचारों को ज़बानी प्रकट करना:—यह काम बच्चे के पाठशाला में प्रवेश होते ही आरंभ कर देना चाहिये। बच्चे को श्रेणी तथा पाठशाला से परिचित करने के लिये उसे स्वतन्त्रता से अन्य बच्चों और अध्यापक के साथ बातचीत करने का अवसर दीजिये। पाठशाला के वायु-मंडल में जितनी अधिक आज़ादी होगी (जैसी कि घर में होती है) उतनी ही आसानी से बच्चा अपने विचार बे-झिझक प्रकट कर सकेगा और पाठशाला में अपनापन अनुभव करेगा। इस के लिये आवश्यक है कि आप बच्चे के साथ एक अच्छे मित्र की तरह व्यवहार करें। बेसिक पाठ्यक्रम के अनुसार आरंभ में छ मास तक केवल मौखिक शिक्षा होनी चाहिये ताकि बच्चा अपने विचार ज़बानी प्रकट करने का पर्याप्त अभ्यास कर सके।

एक बात का ध्यान रखिये। आरम्भ में बच्चे बोलते समय उच्चारण और व्याकरण की ग़लतियां करेंगे। यदि आप किसी बच्चे की प्रत्येक ग़लती को ठीक करने का यत्न करेंगे तो डर है कि वही वह शर्म के कारण बोलना ही बन्द न कर दे। इसलिये उचित होगा कि आप आरम्भ में बच्चे की उमंग पर और ग़ल्ती की बोली

में ही विचारों को प्रकट करने दें और जब वह बिना झिझक अपनी बात कहने लग जाय तो धीरे-धीरे उसकी बोली की मोटी-मोटी गलतियां ठीक करना आरंभ करें। परन्तु बच्चों को समय समय पर यह बताते रहना चाहिये कि वे जो कुछ भी कहें, साफ़-साफ़ कहें ताकि दूसरे समझ सकें और उनकी आवाज़ और ढंग ऐसा हो, जो कानों को अच्छा लगे। उचित ढंग से बोलने की शिक्षा की ओर आरंभ से ही ध्यान देना चाहिये, नहीं तो आगे चल कर बोलने के दोषों और खराबियों को ठीक करना बहुत कठिन हो जायगा। मौखिक काम के कई रूप हो सकते हैं, जैसे—बातचीत करना, कहानी सुनाना, ड्रामा करना, घोषणा करना या सूचना देना, भाषण देना या वाद-विवाद करना आदि।

१. बातचीत करना:—विचारों को ज़बानी प्रकट करने का सब से साधारण रूप बातचीत है। बच्चे कई बार अध्यापक की नकल करते हैं। इस लिये आपकी भाषा जितनी साफ़ और शुद्ध होगी, उतनी ही साफ़ और शुद्ध भाषा बच्चे बोल सकेंगे। बातचीत करने के लिये ऐसे विषय चुने जा सकते हैं जो या तो बच्चे के जीवन से सम्बन्धित हों या उसके लिये किसी अन्य कारण से मनोरंजक हों। जैसे—घर, पाठशाला, इर्द-गिर्द की चीज़ें, दस्तकारी का काम, पाठशाला के उत्सव, त्योहार, मेले, स्वांग, खेल, सैर-सपाटा, घर और मुहल्ले के लोगों का जीवन, भोजन और वस्त्र आदि। बागबानी, साधारण विज्ञान और सामाजिक विज्ञान की शिक्षा में भी विचारों को ज़बानी प्रकट करने के बहुत अवसर हैं।

विधि:—श्रेणी को आठ-आठ, दस-दस बच्चों की टोलियों में बांट दीजिये। प्रत्येक टोली अपनी पसंद के विषय पर निश्चित

समय में अपने विचारों को प्रकट करे। इसमें उन्हें पूरी आज़ा होनी चाहिये। वे अपनी बात को जिस तरह कहना चाहते ह कहने दीजिये। जब एक बच्चा अपनी बात कह चुके तो दूसरे बच यदि चाहें तो उसमें संशोधन या परिवर्तन कर सकते हैं। इस सम आप नीचे लिखी बातों की ओर उनका ध्यान दिलाइये :—

1. इतना साफ़ और ऊंचा बोलो कि सारे सुननेवाले ठी ठीक सुन सकें।

2. बात करते समय बोलनेवाले को न टोको। यदि किसं बात के बारे में पूछना हो तो बात समाप्त होने के बाद पूछो।

3. बिना कारण बातचीत के विषय से मत हटो।

शुद्धि:—यह स्पष्ट है कि बच्चों की बातचीत में अशुद्धियां होंगी और आप उनको ठीक करेंगे परन्तु यह काम बहुत हुशियारी से किया जाना चाहिये। आरंभ में विचारों की शुद्धि की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है, भाषण-शैली की ओर नहीं। ऐसे समझिये कि आरंभ में शरीर को दृढ़ और सुडौल बनाने की ओर अधिक ध्यान देना चाहिये, न कि वस्त्रों की सुन्दरता की ओर। बहुत-से अध्यापक इस बात पर ज़ोर देते हैं कि बातचीत में प्रत्येक वाक्य पूरा-पूरा बोला जाय, कोई भी अधूरा न रह जाय। वैसे तो यह बात अच्छी है परन्तु आरंभ में इस पाबंदी से डर है कि कहीं हर समय पूरे वाक्य बोलने के यत्न में विचार प्रकट करने में रुकावट न पड़ जाय। उचित विधि यह है कि यदि कोई वाक्य पूरा नहीं और इस कारण उसके अर्थों में संदेह होने का डर है तो यह संदेह प्रकट करके वाक्य पूरा कराया जाय। आरंभ में विचारों की अशुद्धियों को ठीक करने की ओर ध्यान रखना चाहिये। बातचीत के बीच में टोकना नहीं [illegible] अशुद्धियां और दोषों को बाद में बताना चाहिये।

2. **कहानी सुनाना** :—कहानी सुनना और सुनाना दोनों बातें बच्चों को बहुत भाती हैं। बच्चे प्रायः घर में अपने बड़े-बूढ़ों से नई-नई कहानियां सुनते हैं। दादी और नानी बच्चों को छोटी आयु में ही बहुत-सी कहानियां याद करवा देती हैं। जो कहानी बच्चों को अच्छी लगती है, उसको वे बार बार सुनना और सुनाना चाहते हैं। इस लिये विचारों के जबानी प्रकट करने में कहानी को विशेष स्थान प्राप्त है।

कहानी की किस्में :—कहानी कई प्रकार की होती है। कुछ कहानियों की नींव अपने निरीक्षण और अनुभव पर होती है। कई ऐसी होती हैं जिन का सम्बन्ध अपने निरीक्षण और अनुभव से तो नहीं होता परन्तु ये सच्ची होती हैं। तीसरी प्रकार की कहानियां बिलकुल कपोल-कल्पित होती हैं, जैसे परियां, देवों आदि की कहानियां। कहानी को एक किस्म लतीफे भी हैं।

बच्चे प्रायः हर प्रकार की कहानियां पसन्द करते हैं। परन्तु कई एक को एक प्रकार की कहानियां अच्छी लगती हैं और कुछ को दूसरी प्रकार की। इसलिये कक्षामें बच्चों को हर प्रकार की कहानियां सुनाने का अवसर देना चाहिये ताकि सभी बच्चे किसी न किसी कहानी से लाभ उठा सकें।

विधि :—कहानियों के लिये समय नियत करने से पहले आप को चाहिये कि आप कहानी के लिये बच्चों के शौक को उभारें। उदाहरण के लिये, आप बच्चों से पूछ सकते हैं—क्या तुम अपने घर में कहानियां सुनते हो? तुम्हें कहानियां कौन सुनाता है? तुम कौन कौन-सी कहानी जानते हो? कौन-कौन सी कहानियां तुम्हें अच्छी लगती हैं? क्या तुम श्रेणी में अपनी मन-भाती कहानी सुनाओगे

और औरों की कहानी सुनोगे ? क्या इस के लिए विशेष समय नियत कर दिया जाय ? यदि तुम्हें बाल-सभा की साप्ताहिक बैठक में दो-तीन कहानियां सुनाने के लिये कहा जाय, तो क्या तुम इसके लिये कक्षा में तैयारी करोगे ?

फिर आपको कोई मनोरंजक कहानी इस प्रकार पेश करनी चाहिये कि बच्चे भी अपनी कहानियां खुशी से सुनाने के लिए तैयार हो जायें । इसलिए आवश्यक है कि आप बच्चों की मन-भाती कहानियों से परिचित हों । आपको स्वयं कहानी सुनाने का ढंग सीखना चाहिये । उसमें इतना प्रभाव हो कि बच्चों की रुचि बढ़े । कहानी सुनाने से पहले यह निश्चय कर लेना चाहिये कि बच्चों के अनुभव की पृष्ठभूमि ऐसी है जो कहानी को समझने और उसके सराहने के लिये आवश्यक है । अच्छा होगा कि कहानी सुनाने के समय वे आपके इर्द-गिर्द इस प्रकार बैठे हों जैसे वे घर में बैठते हैं । जहां आवश्यक हो, कहानी सुनाते हुए आवाज के उचित उतार-चढ़ाव से या हाथ और चेहरे की गति से कहानी के भाव को स्पष्ट किया जाय । बच्चों की दिलचस्पी जांचने के लिये कहानी के बीच में कहीं-कहीं प्रश्न भी पूछने चाहियें परन्तु प्रश्न के पूरे उत्तर का इन्तजार नहीं करना चाहिये । दो-चार शब्दों से ही अनुमान लगाया जा सकता है कि वे कहानी ध्यान से सुन रहे हैं या नहीं और उन में उन्हें दिलचस्पी हो गई है या नहीं । सचेत और अनुभवी अध्यापक तो इस का अनुमान बच्चों के चेहरों से भी लगा सकता है ।

जब आप कहानी समाप्त कर लें और श्रेणी में कहानी सुनने और सुनाने के लिये उचित वातावरण पैदा हो जाय, तो बच्चों को अलग-अलग अपनी कहानी सुनाने का अवसर देना चाहिये । इस [illegible] बच्चों की टोलियां बना दीजिये ताकि वे

आज़ादी से अपनी टोली को अपनी पसंद की कहानियां सुना सकें। कभी-कभी सारी श्रेणी के लिये कहानियों का विशेष प्रोग्राम रखना चाहिये, जिस में प्रत्येक टोली के बच्चे चुनी हुई कहानियां सुनायें। कभी कभी दूसरी श्रेणी को इस प्रोग्राम में भाग लेने के लिये निमन्त्रित करना चाहिये ताकि वे अच्छी से अच्छी कहानियां सुनें और सुनायें। बाल-सभा के साप्ताहिक जलसे में प्रत्येक श्रेणी को चुनी हुई कहानियां सुनानी चाहियें। इस तरह बच्चों में कहानियों को परखने और अच्छी कहानियां चुनने की योग्यता पैदा हो जायगी।

ऊँची श्रेणियों में कुछ कहानियां विशेष अध्ययन के लिये चुनी जानी चाहियें। बच्चे उन के पात्रों और दृश्यों के बारे में विचार करें कि उन में क्या गुण और क्या दोष हैं। यह भी हो सकता है कि प्रत्येक बच्चा पूरी कहानी पर अलोचना करे, या कहानियों के महत्व-शाली भागों से सम्बन्धित प्रश्न करके बच्चों के विचार मालूम किये जायें।

यदि कहानी लम्बी हो, बच्चा उसे एक बार सुन कर दुहरा न सकता हो, तो उसके कई भाग कर देने चाहियें, और प्रत्येक भाग पर एक प्रश्न करके बच्चों से कहानी दोहरवानी चाहिये। इस प्रकार कहानी को भागों में बांट कर कई बार दोहराने से प्रत्येक बच्चे को पूरी कहानी याद हो जायगी। बच्चों को बताइये कि वे जो कहानियां में पाठशाला सुनें, घर जा कर अपने भाई-बहनों को सुनायें।

बच्चों की कल्पना-शक्ति को उन्नत करने के लिये कभी-कभी यह लाभकारी होगा कि बच्चे कहानी के विशेष अंगों को अपनी जगह रखते हुये सोचें कि कहानी को और किस तरह समाप्त किया जा

सकता था। इस प्रकार बच्चों को कहानी घड़ने का अभ्यास होग कभी-कभी यह भी करना चाहिये कि किसी सुनी हुई कहानी पात्रों को बदल कर नई कहानी कहलवाई जाय। उदाहरण के लि "लोमड़ी और खट्टे अंगूर" के स्थान पर "लड़की और छींके पर र मिठाई" की कहानी बनावें। कभी-कभी ऐसा भी किया जाय किसी कहानी को सुनने या सुनाने के बाद बच्चे उसको आप-बीत के रूप में सुनायें।

बातचीत के सम्बन्ध में ऊपर जिन बातों की ओर ध्या देने और जिस ढंग से अशुद्धियों को ठीक करने का वर्णन गय है, कहानी में भी उस पर अमल करना चाहिये।

3. ड्रामा करना:—बच्चे को दूसरों की नकल करनेमें बड़ आनन्द आता है। वह अपने आप जो खेल खेलता है, उस में नकल की बहुत झलक होती है। वह सिपाही, जादूगर, दुकानदार और अन्य कई रूपों में इन खेलों में भाग लेता है। विचारों के मौलिक प्रकटन में बच्चे के इस झुकाव से बहुत लाभ प्राप्त किया जा सकता है। बातचीत और कहानी में बहुत-सी चीज़ों को ड्रामे के रूप में पेश किया जा सकता है, जैसे—उछलना, कूदना, थर-थर कांपना, क्रोध से माथे पर बल डालना आदि। ऐसे अवसरों पर बच्चों को सुझाना चाहिये कि वे अपने भाव को संकेत या अभिनय द्वारा प्रगट करें। किसी किसी कहानी को दो चार बच्चे मिल कर ड्रामे के रूप में पेश कर सकते हैं। ड्रामे में स्वाभाविक ही हर वाक्य और शब्द को पूरे प्रभाव और ठीक भाव से पेश करने की आवश्यकता होती है और इस प्रकार मातृभाषा की शिक्षा के एक बड़े उद्देश्य की पूर्ति होती है।

कहानी सुनाने के मुकाबले में ड्रामा करना अधिक मनोरंजक और लाभकारी है। इससे बच्चों की झिझक दूर होती है और वे अपने विचारों को अधिक सरलता और प्रभाव सहित प्रकट करना सीखते हैं।

विधि :—कुछ ऐसी कहानियां चुन लीजिये जो ड्रामे के लिये उचित हों और जिन को किसी विशेष सामान और प्रबन्ध के बिना श्रेणी में ही बच्चों से ड्रामे के रूप में कराया जा सके। इन कहानियों के वार्तालाप सुगम और सरल भाषा में होने चाहियें और उन्हें बच्चों को पहले ही भली भाँति समझ लेना चाहिये। फिर बच्चों को अपनी इच्छानुसार पार्ट चुनने की आज्ञा देनी चाहिये। परन्तु यहां यह बात याद रखिये कि इनको अपना-अपना पार्ट तोते की तरह रटने की आवश्यकता नहीं। यदि बच्चों ने अपने-अपने पार्ट को समझ लिया है, तो वे अपने ढंग से उसे पेश कर सकेंगे। श्रेणी में तैयारी करने के बाद ड्रामे को बाल-सभा के साप्ताहिक जलसे में पेश करना चाहियें।

4. सूचना देना — इस सम्बन्ध में निम्नलिखित प्रकार की चीजें सिखलानी चाहिये :—

1. किसी चीज़ (जैसे-पुस्तक, चाकू आदि) के खोने या किसी चीज़ के मिलने की सूचना देना। किसी जलसे, खेल-तमाशे या मनोरञ्जन के प्रोग्राम की सूचना देना।

2. किसी खेल के खेलने की विधि बताना या किसी चीज़ के बनाने का ढंग वर्णन करना।

3. किसी स्थान पर पहुँचना या किसी काम को करने के सम्बन्ध में आदेश देना, जैसे यह बताना कि एक गांव से दूसरे गांव कैसे जाते हैं, कबूतर या तोता कैसे पालते हैं, आदि।

4. किसी को बुलावा देना या किसी का बुलावा स्वीकार करना।

विधि :—ये बातें उचित अवसरों पर सिखानी चाहियें। उदाहरण के लिये, यदि किसी बच्चे की कोई चीज़ खो गई है तो उस खोई हुई चीज़ की घोषणा प्रातःकाल प्रार्थना के समय करवानी चाहिये, ताकि यदि किसी को वह मिल जाय तो वह उसे दे दे। यदि किसी बच्चे ने कोई नया खेल सीखा है, या किसी नई चीज़, जैसे पतंग बनाने का ढंग मालूम किया है, तो वह अपने साथियों को बताये।

घोषणा के सम्बन्ध में बच्चों को बताइये कि उसमें कौन-कौन सी बात का होना आवश्यक है। जैसे, किसी खोई हुई चीज़ की घोषणा करते समय यह बताना आवश्यक है कि उसका रङ्ग-रूप कैसा था और वह कहां और कब खो गई। इसी प्रकार प्रदर्शनी, जलसे या बुलावा देने की सूचना में तारीख, समय और स्थान को स्पष्ट बता देना चाहिये। किसी चीज़ के सम्बन्ध में सूचना देते समय कोई ऐसी बात नहीं छोड़नी चाहिये, जिस से भूल की संभावना हो। जैसे, किसी स्थान का मार्ग बताते समय वे सारी बातें साफ़ साफ़ बता देनी चाहियें, जिन से वहां पहुँचने में आसानी हो। यदि मार्ग में किसी मोड़ से और मार्ग निकलता हो तो यह बताना भी आवश्यक होगा कि उस मोड़ पर पहुँच कर कौन-से मार्ग पर चलना चाहिये ताकि ठीक मार्ग से भटक जाने का भय न रहे।

इस लिये केवल उन उचित अवसरों का प्रयोग करना ... पाठशाला के दैनिक जीवन में प्राप्त हों। किसी

आवश्यकता और अवसर के बिना केवल अभ्यास के लिये इस प्रकार का काम कराना व्यर्थ है।

5. **भाषण देना:**—किसी दिये हुये विषय पर भाषण देने का भी अभ्यास कराना चाहिये। बाल-सभा के साप्ताहिक जलसे में इसके लिये पर्याप्त अवसर होंगे। भाषण के लिये ऐसे विषय चुनने चाहियें जो बच्चे के अनुभव, निरीक्षण या मनोरंजन से संबंधित हों। उदाहरण के लिये, यदि कोई बच्चा किसी लम्बी और मनोरंजक यात्रा से वापस आया है तो वह बाल-सभा में अपनी यात्रा का वर्णन करे। यदि कोई बच्चा अपनी फ़ुरसत के समय को किसी मनोरंजक काम में लगाता है, जैसे-फूल-पत्तियां या पत्थर इकट्ठे करना, पौदे लगाना, चिड़ियों को पालना, कागज या मिट्टी के खिलोने बनाना आदि, तो उसको उस समय में अपने इन कामों के बारे में व्याख्यान देने का अवसर देना चाहिये। यदि किसी बच्चे ने किसी ऐतिहासिक स्थान की सैर की है, कोई मेला देखा है, कोई त्यौहार मनाया है या किसी जलसे या जलूस में शामिल हुआ है तो वह अपने अनुभव सभा में दूसरे बच्चों को बताये। यदि किसी बच्चे ने किसी विशेष विषय की शिक्षा के संबंध में कोई मनोरजक और लाभदायक बात ज्ञात की है तो वह अपने साथियों को बताए।

6. **वाद-विवाद में भाग लेना:**—बड़ी श्रेणियों में बच्चों को वाद-विवाद में भी भाग लेना चाहिये। यह काम सुव्यवस्थित प्रकार का है। इसका ढंग बच्चों को बताना चाहिये कि जलसे में भाग लेनेवालों को किस प्रकार संबोधित करते हैं, किस तरह बैठते हैं। यदि किसी बात की विरोध करना हो तो कैसे करते हैं। यदि

भाषण के बीच भाषण देनेवाले को किसी आवश्यक बात के लिये रोकना हो तो किस तरह रोकते हैं।

भाषण से पहले अच्छी तैयारी और अभ्यास की आवश्यकता है। वाद-विवाद के लिये ऐसे विषय चुने जायें, जिन के पक्ष और विरोध में दोनों ओर बोलने का पर्याप्त अवसर हो, जैसे—किसान सिपाही के मुकाबले में देश के लिये अधिक लाभदायक है, पाठशाला की ओर से प्रति वर्ष तालीमी सैर का प्रबंध होना चाहिये आदि। प्रत्येक बच्चे को आज़ादी होनी चाहिये कि वह दिये हुये विषय के पक्ष या विरोध में जिस ओर चाहे बोले। परन्तु आपको इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि दोनों ओर बोलनेवालों की संख्या लगभग समान हो। इसके बाद बच्चे अपने-अपने विचार को ठीक सिद्ध करने के लिये भाषण तैयार करें। इस काम में उन्हें आपकी मदद और पथ-प्रदर्शन की आवश्यकता होगी। बच्चों को यह भी सिखाइये कि पहले बोलनेवालों के भाषण से वे बातें नोट कर लेनी चाहियें जिन से स्वयं बोलने में मदद मिले और अपने भाषण में कुछ नयापन भी पैदा हो जाय।

विचारों को लिखित रूप में प्रकट करना:—बेसिक पाठशाला की पहली चार-पांच श्रेणियों में मौखिक काम को अधिक समय दिया जायगा और लिखित काम थोड़ा होगा। परन्तु ऊँची श्रेणियों में बच्चों को लिखित रूप में अपने विचारों को प्रकट करने के अधिक अवसर दिये जायेंगे। परन्तु यहां भी मौखिक काम किसी-न किसी रूप में चलता होगा। प्रत्येक श्रेणी में दोनों प्रकार का काम कराने से अच्छे परिणाम निकलेंगे।

हम मौखिक और लिखित दोनों कामों में अपनी शब्दावली से काम लेते हैं। आरंभ में बच्चे के पास केवल उन शब्दों का कोष

होता है जिन्हें वह बोलता है। परन्तु जब वह पढ़ना आरंभ करता है तो धीरे-धीरे उस के पास पढ़ाई के शब्दों का भी कोष हो जाता है और लिखाई का काम आरंभ करते समय लिखाई की शब्दावली बढ़ने लगती है। शब्दों के इन तीन प्रकार के कोषों में अन्तर होता है। पढ़ने की योग्यता ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है पढ़ाई की शब्दावली भी बढ़ती जाती है और कुछ समय बाद वह अन्य दोनों प्रकार की शब्दावली से बढ़ जाती है। इसके बाद दूसरा नंबर *लिखाई की शब्दावली का होता है* और *भाषण-शब्दावली* सब से कम होती है। अध्यापक के नाते आपका काम यह है कि आप भाषण और लिखाई का इतना अभ्यास करायें कि तीनों प्रकार की शब्दावलियों में कम से कम अंतर रह जाय अर्थात् बच्चे पढ़ने में जितने शब्द समझते हैं वे इन को अपनी लिखाई और भाषण में प्रयोग करने लग जायें। परन्तु यहां यह बात याद रखनी चाहिये कि शब्दों की सूची रटाना लाभदायक नहीं है। शब्द सिखलाने का उचित ढंग यह है कि बच्चे उनको अधिक से अधिक बोलें और लिखें।

लिखित रचना के रूप:—1. पाठ्य-पुस्तक के शब्दों और मुहावरों का वाक्यों में प्रयोग करना।

2. *किसी चित्र के संबंध में वाक्य लिखना।*
3. पत्र लिखना।
4. उद्योग का रिकार्ड रखना और रिपोर्ट लिखना।
5. संक्षिप्त नोट या खाका तैयार करना।
6. किसी फार्म को भरना—जैसे मनी-आर्डर फार्म।
7. घोषणा या विज्ञापन लिखना।
8. प्रस्ताव लिखना।

9. श्रेणी या पाठशाला की पत्रिका निकालना।

1. पाठ्य पुस्तक के शब्दों और मुहावरों का वाक्यों में प्रयोग करना:—पाठ्य पुस्तक में जो नये शब्द या मुहावरे आयें, उनको पहले मौखिक वाक्यों में प्रयोग कराइये। इस बात का ध्यान रखिये कि बच्चे अपने वाक्य खुद बनायें, पुस्तक के वाक्य थोड़े-बहुत परिवर्तन करके न दुहरायें, जैसे कि प्रायः होता है।

इस संबंध में नाम (संज्ञा) और काम (क्रिया) वाले शब्दों की अलग अलग सूची बनाना लाभदायक सिद्ध होगा। बच्चों को बताइये कि वे इन दोनों सूचियों में उचित शब्द चुनकर उनको जोड़ें और वाक्य बनायें।

शब्दों का प्रयोग कराने का एक ढंग यह भी है कि अधूरे वाक्य दिये जायें और उनके रिक्त स्थानों को उचित शब्दों द्वारा भरा जाय। आरंभ में सुगमता के लिये शब्दों की एक सूची दी जाय, जिस में से बच्चे विशेष शब्द चुनकर रिक्त स्थानों को पूरा करें, जैसे "हम—पाठशाला—लेकर—" एक अधूरा वाक्य है। इसके खाली स्थानों को भरने के लिये शब्दों की यह सूची दी जा सकती है:—गुलेल, घोड़ा, जाते हैं, चलते हैं, प्रतिदिन, पुस्तकें, अपनी, तुम्हारी। या ऐसा किया जाये कि शब्दों की दो सूचियां दी जायें, एक वाक्यों के आरंभ के शब्दों की और दूसरी वाक्यों के अंतिम शब्दों की। बच्चे दोनों सूचियों में से उचित भाग जोड़कर वाक्य बनायें। जैसे एक सूची में ये शब्द हों:—तोता, कौवा, चिड़िया, और दूसरी सूची में:—गाती है, टैं-टैं करता है, काला होता है। इस प्रकार का

कुछ अभ्यास होने के बाद वाक्यों के रिक्त स्थानों को बिना शब्द दिये भराया जाय।

2. किसी चित्र-सम्बन्धी वाक्य लिखना :—इस के लिए ऐसी चीजों के चित्र प्रयोग कीजिए जिनसे बच्चे भली प्रकार परिचित हों। चित्र अच्छे, रंगदार और साफ हों और अच्छा हो कि उनमें किसी प्रकारकी गति दिखाई गई हो, जैसे—घोड़े दौड़ रहे हों, बुढ़िया चर्खा कात रही हो, बच्चे खेल रहे हों, किसान हल जोत रहा हो या फसल काट रहा हो, बिल्ली चूहे को पकड़ रही हो आदि। जिस चित्र में कोई चीज ठहरी हुई दिखाई गई हो, वह लेख रचना के लिए योग्य नहीं, क्योंकि इस में बच्चों की कल्पना को काम में लाने का अधिक अवसर नहीं होता। तीसरी-चौथी श्रेणी में ऐसे चित्र प्रयोग किए जा सकते हैं, जिन में कोई कहानी पेश की गई हो।

चित्र के बारे में आप पहले ही कुछ ऐसे प्रश्न सोच लीजिये जिन से उस के विशेष भागों पर प्रकाश पड़ता हो और उन प्रश्नों के उत्तर बच्चों से लिखवाइये।

3. पत्र लिखना—लिखित रचना का जो रूप सबसे अधिक काम में आता है, वह पत्र लिखना है। इसके लिए जहांतक हो सके, ऐसे अवसरों को प्रयोग करना चाहिए जिन पर पत्र लिखने की आवश्यकता प्रतीत होती है। पाठशालाओं में कल्पित पत्र लिखाने का आम रिवाज है। यह ठीक नहीं है, क्योंकि बच्चों को कल्पित पत्र लिखने में दिलचस्पी नहीं होती। इन को वे किसी भाव या इच्छा के बिना लिखते हैं। वे पत्र का रूप तो नकल कर लेते हैं परन्तु उस के असल भाव को नहीं समझते। पत्र के साथ न तो उनकी सोच-समझ और उरज का सम्बन्ध होता है और न उसमें उनके विचार और भावना प्रकट होते हैं।

यदि किसी काम के करने में पत्र लिखने की आवश्यकता प्रतीत हो, तो पत्र लिखने का काम पहली श्रेणी से ही आरम्भ किया जा सकता है। उदाहरण के लिये, यदि कताई के लिये बच्चों को तकलियों की आवश्यकता है या इनकी श्रेणी के लिये किसी ने कोई भेंट भेजी है या जलसे में शामिल होने के लिये बुलावा दिया है या तालीमी प्रदर्शनी या खेलों का मुकाबला देखने के लिये बुलाया है, तो सम्बन्धित सज्जन या संस्था को पत्र लिखने की आवश्यकता होगी। इस श्रेणी में बच्चे स्वयं तो पत्र लिख नहीं सकते। इस लिये उन्हें कहा जा सकता है कि वे अपने पत्र की इबारत बोलते जायें और अध्यापक उसे तख्ते पर लिखता जाय। जब वे पूरा पत्र बोल लें तो अध्यापक उसको पढ़ कर सुना दे और बच्चों से पूछे कि उस को और अच्छा कैसे बनाया जा सकता है। आवश्यक शुद्धि के बाद अध्यापक उसको कागज पर लिख कर जहाँ भेजना हो, भेज दे और उसकी नकल श्रेणी के बोर्ड पर लगा दे ताकि बच्चे पत्र के रूप से परिचित हो जायें कि उस में पहले उस स्थान का नाम लिखते हैं जहां से पत्र भेजा जाता है और उस के नीचे तारीख लिखी जाती है। फिर सम्बोधन-शब्द और उसके उपरांत वास्तव पत्र आरम्भ होता है। पत्र समाप्त होने पर भेजने वाले के हस्ताक्षर होते हैं और पत्र के ऊपर जिस को पत्र लिखा गया है, उस का पूरा पता लिखा जाता है। यदि बच्चे खुद लिख सकते हों तो उन से पत्र की नकल करानी चाहिये, और जिस का पत्र सब से साफ, सुन्दर और नियमानुसार हो उसे भेज देना चाहिये।

जैसा कि ऊपर लिखा गया है, प्रत्येक श्रेणी में पत्र किसी आवश्यकता को पूरा करने के लिये ही लिखना चाहिये। बेसिक पाठशालाओं में ऐसे अवसरों की कमी नहीं है। दस्तकारी या सामग्री

खरीदना, तैयार किये हुये सामान को बेचना, जलसे और प्रदर्शनियों में शामिल होने के लिये निमंत्रण पत्र लिखना, रोगी साथियों का हाल पूछना, गांव की संस्थाओं से ज्ञान प्राप्त करने के लिये पत्र लिखना आदि ऐसे बहुत से अवसर हैं जब पत्र लिखने की आवश्यकता प्रतीत होती है, और इन से पूरा-पूरा लाभ प्राप्त करना चाहिये।

पत्र लिखने से पहले बातचीत द्वारा निर्णय कर लेना चाहिये कि उस में क्या लिखना है, किस बात को पहले लिखना और किस को पीछे, और पत्र को समाप्त कैसे करना चाहिये। इस बात का ध्यान रखिये कि पत्र में बच्चे अपने विचार प्रकट करें और अपनी ही भाषा में लिखें, किसी दूसरे की नकल न करें। बच्चों को बताइये कि पत्र लिखने के लिये इन बातों की ओर ध्यान देना आवश्यक है :—

1. क्या मैंने वे सब बातें लिख दी हैं जो आवश्यक हैं ?

2. क्या हमारे प्रश्नों का वही उद्देश्य है जो हम ज्ञात करना चाहते हैं ?

3. क्या पत्र भली प्रकार लिखा गया है और उसको ठीक तरह समाप्त किया गया है ?

यदि किसी बच्चे ने ध्यान न देते हुये गंदा पत्र लिखा है या उसे गंदा कर दिया है तो पत्र फिर लिखना चाहिये। अच्छे लिखे हुये पत्र नमूने के तौर पर सब को दिखाइये और उन्हें श्रेणी के बोर्ड पर लगाइये।

यदि बच्चे अपने किसी सम्बन्धी या मित्र को स्वयं पत्र लिखना चाहें तो उस में अध्यापक को मदद करनी चाहिये परन्तु इस अवस्था में ध्यान रखना चाहिये कि बच्चों को यह सन्देह न हो जाय कि आप उस की पारिवारिक दशा जानना चाहते हैं।

4. दस्तकारी के काम का रिकार्ड रखना और रिपो लिखना :—बच्चे जो अनुभव और ज्ञान प्रति-दिन प्राप्त क हैं, उनका रिकार्ड रखना और अपने काम की रिपोर्ट लिखना उन के लिये लाभदायक अभ्यास है। इस सम्बन्ध में यदि आप बच्चों उनके काम की एक वार्षिक पुस्तक तैयार करायें तो बड़ा अच्छा होगा इसमें बच्चे अपने काम की रिपोर्ट लिखें, उद्योग का रिका अंकित करें, सामाजिक शिक्षा और साधारण विज्ञान सम्बन्धी ज बातें सीखी हैं, स्वास्थ्य और सफ़ाई के जो प्रोजक्ट चलाये बाल-सभा के लिये जो काम किया है उस के बारे में लेख लिखें।

इस काम से आनेवाली श्रेणियों को भी लाभ पहुँचेगा वे इस के प्रकाश में उन दोषों से बच जायेंगी, जो पिछले वर्ष हु थे। इसके अतिरिक्त ये पुस्तक बच्चों के पढ़ने के काम आयेंगी।

5. संक्षिप्त नोट या खाका तैयार करना:-यह काम तीसरी श्रेणी से आरम्भ किया जा सकता है। बच्चों को बताइये कि किसी इबारत में से विशेष बातें लेकर उसका संक्षेप कैसे तैयार करते हैं। आरम्भ में अच्छा होगा कि आप दी हुई इबारत के बारे में एक-दो प्रश्न बना दें और बच्चे उनके प्रकाश में संक्षेप लिखें। कुछ अभ्यास ऐसे भी कराने चाहियें कि किसी कविता या पैरे को दे कर बच्चों से उसका विषय या शीर्षक लिखाया जाय।

बुनियादी पाठशालाओं की अंतिम एक-दो श्रेणियों में बच्चों को यह भी सिखाना चाहिये कि किसी पुस्तक या लेख का हवाला किस प्रकार देते हैं। मान लीजिये कि किसी बच्चे ने भारत सरकार की प्रकाशित पुस्तक "ज्ञान सरोवर" के पहले लेख को संक्षिप्त किया है या अपने किसी लेख में उसका हवाला दिया है तो उसे इस प्रकार प्रकट करना चाहिये :—

"ज्ञान सरोवर", शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार दिल्ली १९५५, पहला लेख, पृ० १-१५ अर्थात् हवाले में ये चीजें लिखनी चाहिये :—

1. लेखक नाम (यदि उस पुस्तक पर किसी लेखक का नाम दिया हुआ हो)।

2. पुस्तक का नाम।

3. प्रकाशक का नाम और पता।

4. पुस्तक छपने की तारीख।

5. पृष्ठ, जिनका हवाला दिया गया है।

6. **किसी फार्म को भरना** :—हमें अपने दैनिक जीवन में कई प्रकार के फार्म भरने पड़ते हैं, जैसे-मनी आर्डर, पोस्टल सर्टीफिकेट, वी. पी. पी., बैंक, लायब्रेरी और तार का फार्म आदि। यद्यपि इन फार्मों का भरना कठिन नहीं है, परन्तु ज्ञान और अभ्यास न होने के कारण कभी-कभी इस सम्बन्ध में परेशानी होती है। इस लिये पाठशाला में इसका अभ्यास होना चाहिये।

पहली दो श्रेणियों में बच्चों को अपने बारे में नाम, पता और आयु आदि के खाने भरना सिखाना चाहिये।

1. विद्यार्थी का नाम.........पिता का नाम.........अध्यापक का नाम.........

2. पता——-पाठशाला का पता.........नाम...... स्थान ....डाकघर.........जिला......घर का पता......अपना नाम ....स्थान......डाकघर......जिला......

3. आयु......वर्ष......श्रेणी......

4. तारीख......मास.........सन्.........

अगली श्रेणियों में अपना कद और वजन दर्ज करना, मनी

आर्डर और वी. पी. पी. का फार्म भरना, रसीद लिखना आदि सिखाना चाहिये।

इस सम्बन्ध में आपको तख्ते पर फार्म का नमूना पेश करना चाहिये और बच्चों की मदद से उन्हे भरना और फिर बच्चों से फार्म नकल करवाके भराना चाहिये।

7. घोषणा या विज्ञापन लिखना:—सूचना और घोषणा के बारे में, जो बातें विचार को मौखिक ढंग से प्रकट करनेके संबंध में बताई जा चुकी हैं, उनका लिखित काम में भी ध्यान रखना चाहिये।

आरंभ की दो श्रेणियों में यह काम लेबल लगाने तक सीमित रहेगा। उदाहरण के लिये, बच्चे श्रेणी को सजाते समय उसकी भिन्न-भिन्न चीजों के नाम अलग-अलग पर्चियों पर लिख कर स्थानों पर लगायेंगे। इन में आवश्यकता के समय अध्यापक उनकी उचित मदद करेगा।

बड़ी श्रेणियों में ये काम करवाये जा सकते हैं—खेल और व्यायाम के प्रोग्राम की घोषणा, श्रेणी और पाठशाला के जलसों और दूसरी क्रियाओं की सूचना, जो नई पुस्तकें पुस्तकालय में आई हों, उनकी पोस्टरों द्वारा सूचना, स्वास्थ्यवर्धक आदतों के चार्ट या पोस्टर, मानीटर और श्रेणी के दूसरे अधिकारियों के कर्तव्यों का चार्ट, ड्रामा, प्रदर्शनी आदि का विज्ञापन, खोई और मिली हुई चीजों की घोषणा, "आवश्यकता है" का विज्ञापन। यदि किसी प्रोजेक्ट के संबंध में किसी विशेष प्रकार की मदद की आवश्यकता हो (जैसे ड्रामे योग्य और अच्छे गाने वाले की और अपनी श्रेणी में कोई न मिलता हो) तो पाठशाला में इसका विज्ञापन निकाल कर

पता किया जा सकता है कि इस काम में कौन मदद करने के लिये तैयार है।

घोषणा और विज्ञापन लिखने में बच्चों का ध्यान इस ओर दिलाइये कि वे कम से कम शब्दों में अपनी बात सफ़ाई से बयान करने का यत्न करें।

8. **लेख लिखना**:– लेख लिखने का काम तीसरी श्रेणी से आरंभ किया जा सकता है। लेख के लिये ऐसे विषय देने चाहियें जिन से बच्चे भली प्रकार परिचित हों। प्रायः पाठशालाओं में इस संबंध में बड़ी बेपरवाही की जाती है। कभी-कभी बिलकुल विचारात्मक और गूढ़ विषयों पर लेख लिखाये जाते हैं, जैसे—ईमानदारी, सचाई, हिम्मत आदि। बाज़ार में निबंध-मालाया लेख-रचना प्रकार की जो पुस्तकें मिलती हैं उन में इसी प्रकार के लेख दिये होते हैं। बहुत बच्चे इन पुस्तकों से रट कर लेख लिखते या नकल कर देते हैं। सच पूछिये तो इसमें उनका कोई दोष नहीं है क्यों कि जिन विषयों पर उनसे लेख लिखवाये जाते हैं, उनके संबंध में उन्हें कोई ज्ञान या अनुभव नहीं होता। लेख का उद्देश्य यह होना चाहिये कि बच्चा जिन चीजों को भली प्रकार जानता, समझता और अनुभव करता है, उनके संबंध में अपने विचार और भावनायें सुन्दरता के साथ प्रकट करे ताकि पढ़नेवाला उस से आनंद प्राप्त कर सके।

बच्चों को बताइये कि किसी लेख को लिखने से पहले आवश्यक है कि इसके संबंध में जो कुछ वे जानते हों, उसे अलग काग़ज़ पर क्रमवार लिख लें, उसका एक खाका तैयार कर लें कि इसमें कौन कौन-सी बातें अवश्य लिखी जायेंगी और उनका क्रम क्या होगा। इन बातों का निर्णय श्रेणी में काफी विचार के बाद करना चाहिये।

इसके बाद बच्चे निर्णय किये हुए संकेतों के प्रकाश में लेख लिखेंगे।

लेख लिखते समय बच्चे को यह अनुभव करना चाहिये कि वह किसी को संबोधित कर रहा है, और सुननेवाला लेख की अच्छाई या बुराई को परख रहा है। इस प्रकार लेख में एक जान-सी पड़ जायगी।

लेख लिखने के लिये इस प्रकार के विषय होने चाहियेः—

(i) उद्योग और दस्तकारी-संबंधी क्रियायें, गांवके भिन्न-भिन्न व्यवसाय।

(ii) बाजार के दृश्य, सब्जी और फल की दुकान, परचून की दुकान, बिसाती की दुकान।

(iii) मेले के दृश्य, खेल-तमाशे, खिलोनों की दुकान, मिठाई की दुकान।

(iv) सैर और मनोरंजन, ऐतिहासिक स्थान अथवा इमारतों का वर्णन, प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन।

(v) शौकिया काम, फुरसत के समय को गुजारने के साधन।

(vi) त्योहार—धार्मिक और स्थानीय।

(vii) महापुरुषों के दिन मनाने के जलसे।

(viii) इर्द-गिर्द की चीजें, संस्थायें, सिनेमाघर, बिजली-घर, हस्पताल, डाकखाना, रेलवे स्टेशन आदि।

नई तालीम में लेख लिखने के संबंध में सृजनात्मक रचना का प्रायः वर्णन आया है। इस काम में बड़ी उपज, सोच-समझ और अभ्यास की आवश्यकता है। परन्तु यह नहीं समझना चाहिये कि यह छोटे बच्चों की शक्ति से बाहर है। कई बच्चों में छोटी आयु में ही असाधारण योग्यता की झलक दिखाई देने लग पड़ती है। कई छोटे बच्चे अपने आप नई-नई कहानियां बना लेते हैं, इनमें

लिखते हैं, कवितायें लिखते हैं, अपनी डायरी बड़े मनोरंजक ढंग से लिखते है और लेख-रचना करते हैं और उनकी रचना में अछूता-पन पाया जाता है। यदि कोई बच्चा अपनी श्रेणी में इस प्रकार की चीज़ लिखे तो उसे सब बच्चों को सुनाइये और श्रेणी के बोर्ड पर उसे लगा दीजिये ताकि उस बच्चे का साहस बढ़े और दूसरे बच्चों में भी इस प्रकार की चीजें लिखने का शौक उपजे।

लेख—रचना के संबंध में कहानी लिखना भी उपयोगी सिद्ध होगा। इसका ढंग यह हो सकता है कि कहानी का एक भाग बच्चों को बता दिया जाय, और शेष कहानी उनसे पूर्ण कराई जाय। शुरू में पहला और अंतिम भाग बताया जाय और मध्य भाग बच्चों से पूर्ण कराया जाय। इस तरह जो कहानियां अच्छी लिखी जायें, उनको पुस्तक के रूप में एक जगह कर दिया जाये ताकि वे अन्य बच्चों की पढ़ाई के प्रयोग में लाई जा सकें।

9. श्रेणी और पाठशाला का मासिक पत्र निकालना—लिखित रचना का यह एक मनोरंजक रूप है। कई अच्छी पाठशालाओं में बच्चे साप्ताहिक या मासिक पत्र निकालते हैं। पत्र किसी की निगरानी और नेतृत्व में तैयार किया जाता है परन्तु सारा काम बच्चे ही करते हैं। वे अपने पत्र का संपादक स्वयं ही चुनते हैं, स्वयं ही लेख लिखते हैं। जो बच्चे सुन्दर लिखना जानते हैं, वे पत्र के लिये इन लेखों को नकल करते हैं। जो कला में अच्छे होते हैं, वे डिज़ाइन और चित्रों से उसे सुन्दर बनाते हैं।

इस प्रकार पत्र के कई रूप हो सकते हैं। पत्र को किसी फाइल में रखा जा सकता है या इसकी जिल्द बंधवा कर पुस्तक के रूप में पुस्तकालय में रखी जा सकती है, ताकि बच्चे वहां से कर पढ़ सकें

इसके बाद बच्चे निर्णय किये हुए संकेतों के प्रकाश में लेख लिखेंगे।

लेख लिखते समय बच्चे को यह अनुभव करना चाहिये कि वह किसी को संबोधित कर रहा है, और सुननेवाला लेख की अच्छाई या बुराई को परख रहा है। इस प्रकार लेख में एक जान-सी पड़ जायगी।

लेख लिखने के लिये इस प्रकार के विषय होने चाहियेः—

(i) उद्योग और दस्तकारी-संबंधी क्रियायें, गांवके भिन्न-भिन्न व्यवसाय।

(ii) बाजार के दृश्य, सब्जी और फल की दुकान, परचून की दुकान, बिसाती की दुकान।

(iii) मेले के दृश्य, खेल-तमाशे, खिलौनों की दुकान, मिठाई की दुकान।

(iv) सैर और मनोरंजन, ऐतिहासिक स्थान अथवा इमारतों का वर्णन, प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन।

(v) शौकिया काम, फुरसत के समय को गुजारने के साधन।

(vi) त्यौहार—धार्मिक और स्थानीय।

(vii) महापुरुषों के दिन मनाने के जलसे।

(viii) इर्द-गिर्द की चीजें, संस्थायें, सिनेमाघर, बिजली-घर, हस्पताल, डाकखाना, रेलवे स्टेशन आदि।

नई तालीम में लेख लिखने के संबंध में सृजनात्मक रचना का प्रायः वर्णन आया है। इस काम में बड़ी उपज, सोच-समझ और अभ्यास की आवश्यकता है। परन्तु यह नहीं समझना चाहिये कि यह छोटे बच्चों की शक्ति से बाहर है। कई बच्चों में छोटी आयु में ही असाधारण योग्यता की झलक दिखाई देने लग पड़ती है। कई छोटे बच्चे अपने आप नई-नई कहानियां बना लेते हैं, इनमें

लिखते हैं, कवितायें लिखते हैं, अपनी डायरी बड़े मनोरंजक ढंग से लिखते है और लेख-रचना करते हैं और उनकी रचना में अछूता-पन पाया जाता है। यदि कोई बच्चा अपनी श्रेणी में इस प्रकार की चीज लिखे तो उसे सब बच्चों को सुनाइये और श्रेणी के बोर्ड पर उसे लगा दीजिये ताकि उस बच्चे का साहस बढ़े और दूसरे बच्चों में भी इस प्रकार की चीजें लिखने का शौक़ उपजे।

लेख—रचना के संबंध में कहानी लिखना भी उपयोगी सिद्ध होगा। इसका ढंग यह हो सकता है कि कहानी का एक भाग बच्चों को बता दिया जाय, और शेष कहानी उनसे पूर्ण कराई जाय। शुरू में पहला और अंतिम भाग बताया जाय और मध्य भाग बच्चों से पूर्ण कराया जाय। इस तरह जो कहानियां अच्छी लिखी जायें, उनको पुस्तक के रूप में एक जगह कर दिया जाये ताकि वे अन्य बच्चों की पढ़ाई के प्रयोग में लाई जा सकें।

9. श्रेणी और पाठशाला का मासिक पत्र निकालना—

लिखित रचना का यह एक मनोरंजक रूप है। कई अच्छी पाठशालाओं में बच्चे साप्ताहिक या मासिक पत्र निकालते हैं। पत्र किसी की निगरानी और नेतृत्व में तैयार किया जाता है परन्तु सारा काम बच्चे ही करते हैं। वे अपने पत्र का संपादक स्वयं ही चुनते हैं, स्वयं ही लेख लिखते हैं। जो बच्चे सुन्दर लिखना जानते हैं, वे पत्र के लिये इन लेखों को नकल करते हैं। जो कला में अच्छे होते हैं, वे डिज़ाइन और चित्रों से उसे सुन्दर बनाते हैं।

इस प्रकार पत्र के कई रूप हो सकते हैं। पत्र को किसी फाइल में रखा जा सकता [illegible] कर पुस्तक के रूप में पुस्तकालय में रखी [illegible] वहां से [illegible]

या पत्र के लेखों को एक बोर्ड पर लगाकर ऐसे स्थान पर रखा जा सकता है, जहां उससे सारे बच्चे लाभ उठा सकें।

निबंध लिखने की जांच और शुद्धि:—यह काम ऐसा है जिसमें मेहनत और धैर्य की आवश्यकता है। आरंभिक श्रेणियों में विशेष तौर पर अध्यापक को इस काम में बड़ी कठिनाई होती है क्योंकि वहां केवल इतना ही पर्याप्त नहीं कि अध्यापक बच्चों की अशुद्धियों पर निशान लगा दे, अपितु उसको इनकी शुद्धि भी करनी पड़ती है। परन्तु यह काम है बहुत आवश्यक, नहीं तो बच्चे अपनी रचना के दोषों को दूर नहीं कर सकेंगे।

बेसिक पाठशाला की अंतिम श्रेणियों में इस काम में किसी सीमा तक बच्चों की मदद ली जा सकती है। अध्यापक कुछ समय के बाद इनके लेख इनको ही वापस कर दे और प्रत्येक बच्चा अपने अपने लेख को जांच करके उसके दोषों और कमियों का पता लगाये परन्तु यहां भी अध्यापक को बच्चों के लिखित काम को बड़ी सीमा तक स्वयं देखना और उसका सुधार करना पड़ेगा।

इस बात की कोशिश करनी चाहिये कि जहां तक हो सके, बच्चे लिखित काम में ग़लतियां न करें। इस बात पर ज़ोर दीजिये कि यदि लिखते समय किसी बच्चे को किसी शब्द की लिखावट या किसी वाक्य की बनावट के बारे में संदेह हो जाय तो वह शीघ्र ही आप से पूछ ले। इतनी सावधानी करते हुए भी कुछ न कुछ ग़लतियां अवश्य रह जायेंगी। इस लिये आपको प्रत्येक लिखित काम को बड़े ध्यान से परखना पड़ेगा। कई अध्यापक यह काम भली प्रकार नहीं करते। सरसरी तौर पर कुछ भाग जांच लेते हैं और शेष छोड़ देते हैं। जब बच्चों को पता लग जाता है कि अध्यापक उनके काम

को महत्ता नहीं देता तो वे भी लापरवाही से काम करने लग जाते हैं।

जब आप बच्चों के लिखित काम की जांच करके शुद्धि कर लें, तो बच्चों से काफी अभ्यास कराइये ताकि वे गलतियां दुबारा न हों। कई बार देखा गया है कि अध्यापक तो गलतियों को शुद्ध कर देता है, परन्तु बच्चे उसका अभ्यास नहीं करते। इस प्रकार की शुद्धि का कोई लाभ नहीं होता। आपका कर्तव्य बच्चों को अपनी अपनी जिम्मेवारी को सफलता के साथ उठाने में मदद देना है। इस लिये अध्यापक को अपने समय और आराम का ध्यान रखते हुए, बच्चों से उतना ही काम कराना चाहिये, जितना कि वे भली भांति जांचकर ठीक कर सकें।

गणित

उद्देश्य:—हमारे दैनिक जीवन में गणित की बड़ी आवश्यकता पड़ती है। प्रत्येक मनुष्य को कुछ न कुछ क्रय-विक्रय और लेने देने का काम करना पड़ता है। इस काम को भली भांति करने के लिये गणित जानना चाहिये। इस लिये गणित शिक्षा में यह उद्देश्य सदैव सामने रखना चाहिये कि बेसिक पाठशालाओं में गणित शिक्षा से बच्चे में यह योग्यता पैदा हो जानी चाहिये कि वह उद्योग, पाठशाला और घरेलू जीवन में पैदा होनेवाले प्रश्नों को शीघ्र हल कर सके।

विधि:—कोई चीज सिखाने का पहली शर्त यह है कि सीखने वाला उसकी आवश्यकता अनुभव करे। बेसिक पाठशाला में ऐसे बहुत से अवसर हैं, जहां गणित जानने की आवश्यकता पड़ती है। जब बच्चा सत कातता है तो उसको यह मालूम करने की जरूरत

होती है कि उसने कुल कितने तार काते। यहां गिनती सिखाने का अवसर है। यह जानने के लिये कि आज और कल दो दिनों में कितना सूत काता है, जोड़ सीखने की आवश्यकता अनुभव होती है।

कई लोग गणित-शिक्षा में इस बात पर जोर देते हैं कि प्रत्येक क्रिया का बच्चे को कारण मालूम होना चाहिये परन्तु आरंभिक श्रेणियों में तर्क पर इतना जोर देना उचित नहीं है। बच्चों की तर्क-शक्ति धीरे धीरे बढ़ती है। इस लिये शुरु में उन्हें विधि बता कर उस का अभ्यास करना चाहिये। हां, उस विधि की शुद्धि को क्रियात्मक रूप में जांचने के लिये बच्चों को अवसर देना चाहिये। जैसे, तारों का जोड़ करते समय हासिल लगने का ढंग बता देना चाहिये और इस प्रकार जो उत्तर आये, उसको जांच तार गिनते समय करवाई जा सकती है। फिर जब वे इस प्रकार के अन्य प्रश्न हल करेंगे, और प्रत्येक का उत्तर ठीक निकलेगा तो वे हासिल लगने का कारण मालूम किये बिना उस विधि के ठीक होने का विश्वास कर लेंगे और जोड़ करना सीख जायेंगे।

परन्तु, यह आरम्भिक सीढ़ी है। बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता जाता है, तर्क में उस की दिलचस्पी बढ़ती जाती है और उसे धीरे धीरे विधि और क्रिया का कारण जानने की इच्छा होती है। इस लिये गणित-शिक्षा की विधि यह होनी चाहिए कि शुरु में तर्क के बिना क्रियात्मक ढंग से विधि और सिद्धांत सिखाए जायें परन्तु आगे चलकर इनके कारण भी बताये जायें।

अभ्यास कार्यः—गणित में लगभग प्रत्येक काम में इतना अभ्यास कराया जाय कि यह बिलकुल सरल हो जाय अथवा वह एक आदत बन जाय कि इस में दिमाग पर जोर न डालना पड़े। उदाहरण के लिये $5 \times 7 = 35$, इस प्रकार यदि हो कि इधर बच्चे के

मन में 5×7 आये और फौरन उस का उत्तर 35 दे दे। कई लोगों का विचार है कि आदत से मानसिक उन्नति रुक जाती है, परन्तु यह ठीक नहीं। प्रत्येक नई समस्या को सोचते समय आदत काम आती है, उससे मानसिक शक्ति बचती है, जिसे नई चीज़ों में लगाया जा सकता है।

बच्चा प्रत्येक बात को अपने अनुभव द्वारा सोचता है और जब यह अनुभव बार बार दुहरा या जाता है और उसका परिणाम संतोषजनक होता है, तो यह अनुभव पक्का हो जाता है। गणित में अभ्यास द्वारा भिन्न भिन्न अनुभव पक्के किये जाते हैं। गणित के प्रारंभिक नियमों में जो भिन्न भिन्न जोड़ (Bonds) हैं, उन्हें पक्का करना गणित की शिक्षा की जड़ है। जोड़, बाकी और गुणा के पहाड़े बच्चे को अच्छी तरह याद हो जाने चाहिये, नहीं तो बच्चा गणित में उन्नति नहीं कर सकेगा।

अभ्यास के संबंध में इन बातों का ध्यान रखिये:—

1. उस समय तक किसी प्रारंभिक नियम का कोई नया जोड़ (Bond) न सिखाया जाय, जब तक कि उसके पहले का जोड़ काफी पक्का न हो जाय क्योंकि ऐसा करने से डर है कि बच्चा पहला जोड़ शीघ्र ही भूल जायगा। इसी लिये दो अलग-अलग जोड़ एक ही समय आरंभ नहीं करने चाहियें। उदाहरण के लिये, यदि गुणा के पहाड़े सिखाने हैं और पांच का पहाड़ा आरंभ किया जा रहा है, तो पहले 5×1=5 का जोड़ भली प्रकार समझाना और याद कराना चाहिये और फिर 5×2 को जोड़ लेना चाहिये।

2. इस काम में कभी-कभी परिवर्तन करते रहना चाहिये, जैसे जमा के पहाड़े सिखाते समय जब बच्चे 1, 2, 3, 4, तक के पहाड़े सीख जावें, तो उन्हें सुगम जोड़ों के प्रश्न हल करने सिखावें

जायें जो सीखे हुए पहाड़ों की मदद से हल किये जा सकते हों। इस प्रकार का थोड़ा-सा अभ्यास करने के बाद, उससे अगले पहाड़े शुरु किये जायें।

3. अभ्यास में स्थूल प्रकार का तालीमी सामान प्रयोग में लाया जाय। इस सामान को शुरु में रुचि पैदा करने के लिये प्रयोग किया जाय। जैसे जोड़ के पहाड़े सिखाने में उद्योग की चीजें, पूनियां या बीज पहले दिमाग को पहाड़े सीखने के लिये तैयार करेंगे और बाद में उत्तर की जांच करने में मदद देंगे।

यहां यह भी याद रखना चाहिये कि स्थूल वस्तु का प्रयोग आवश्यकता से अधिक न हो। कई बच्चों को थोड़े समय के बाद स्थूल वस्तुओं का सहारा लेने की आवश्यकता नहीं रहती, और कई बच्चे बहुत समय तक इनके बिना काम नहीं कर सकते। इसलिये अध्यापक को व्यक्तिगत आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए स्थूल वस्तुओं का प्रयोग कराना चाहिये।

कई बार देखा गया है कि अध्यापक जोड़ और घटाना सिखाने में स्थूल वस्तुओं का प्रयोग न करके बच्चों को अंगुलियों की मदद लेना सिखाते हैं। यह तरीका ठीक नहीं है, क्योंकि इस से अंगुलियों द्वारा जोड़ने और घटाने की आदत पड़ जाती है, और यह आदत सातवीं-आठवीं श्रेणी तक नहीं छूटती। इसी कारण से बच्चे जोड़ और घटाने के पहाड़े याद नहीं करते और उनकी जोड़ने और घटाने की गति मंद रहती है। परन्तु यदि अंगुलियों की जगह चीजों की मदद से जोड़ने और घटाने का अभ्यास कराया जाय तो कुछ समय बाद, इन क्रियाओं में चीजों की मदद प्राप्त करने की आदत अपने आप ही छूट जाती है, क्योंकि हरेक समय पर इसके लिये चीजें मौजूद नहीं होतीं। इसलिये

बच्चे अपनी आवश्यकता को अनुभव करके पहाड़े याद कर लेते हैं और उनकी मदद से प्रश्न हल करने में उन्हें बड़ी सुगमता होती है। इस लिये इस बात का ध्यान रखिये कि बच्चे अगुलियों पर जोड़ना या घटाना न सीखें।

4. जब तक बच्चे किसी विधि या क्रिया को अच्छी प्रकार सीख न लें अर्थात् उस को ठीक न कर सकें, और उसकी शुद्धि की जाँच-पड़ताल करने के योग्य न हो जायें, उस समय तक उस विधि या क्रिया के तर्क या कारण को पेश करने या समझाने की कोशिश नहीं करनी चाहिये।

5. जब कोई नई क्रिया या तरीका सिखाइये तो आरम्भ में उसके अभ्यास के लिये पर्याप्त समय दीजिये। फिर कुछ समय के बाद उस विधि को दुहराने का अवसर दीजिये। परन्तु इस बार इतना समय देने की आवश्यकता नहीं, जितना कि पहली बार दिया था। ऐसे ही कुछ समय के बाद उसको फिर दुहरवाइये और इस बार और कम समय दीजिये। इस प्रकार इस काम को कराते जाइये। इस का फल यह होगा कि बच्चा सीखी हुई चीज को कभी नहीं भूलेगा, और आवश्यकता पड़ने पर उसे प्रयोग कर सकेगा। परन्तु *यहां यह याद रखना चाहिये कि किसी चीज का अभ्यास* आवश्यकता से अधिक न कराया जाय, नहीं तो भय है कि बच्चे उस से उकता जायेंगे।

6. अभ्यास के काम को मनोरंजक बनाने के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार के खेलों की मदद लेनी चाहिये।

गणित सीखने की रुचि पैदा करना।—बच्चा यदि यह अनुभव करे कि वह किसी काम में उन्नति कर रहा है, तो वह

उसे शौक से सीखता है। इसके लिये आवश्यक है कि आप गणि के काम को कई भागों में इस प्रकार बांट दें कि प्रत्येक भाग प वह सफलता की खुशी अनुभव कर सके। पहली मंज़िल सुगम होनी चाहिये, दूसरी पहली से थोड़ी कठिन और तीसरी और कठिन इसी तरह पग पग काम कठिन होता जाय। बच्चे को बड़ी खुशी होती है जब उस के सारे प्रश्न ठीक निकलें। वह अपनी कापी पर ठीक का निशान (✓) देख कर उछल पड़ता है। जहां तक हो सके उसे ऐसा प्रश्न न दीजिये जो उस की योग्यता से बाहर हो परन्तु ऐसा प्रश्न भी न दीजिये जो बिना किसी यत्न के आसानी से ही निकाल ले। प्रश्न ऐसे होने चाहियें जिन्हें निकालने में उसे पूरी योग्यता से काम करना पड़े। बच्चे को अपनी योग्यता के अनुसार आगे बढ़ने का अवसर देना चाहिये। न तो उसे अपने कमजोर साथियों के स्तर पर काम करने के लिये मजबूर करना चाहिये और न ही उसे जबरदस्ती अधिक होशियार बच्चों के साथ घसीटने की कोशिश करनी चाहिये। इसके अतिरिक्त यह भी बात याद रखनी चाहिये कि बच्चे की छोटी से छोटी सफलता की भी प्रशंसा की जाय और अच्छे से अच्छा काम करने के लिये उसे प्रोत्साहित किया जाय। बच्चों के काम का रिकार्ड रखना और उनकी उन्नति को ग्राफों या चित्रों द्वारा प्रकट करना, परिश्रमी बच्चे को शाबाश देना, यत्न करने वाले का साहस बढ़ाना, बेपरवाह बच्चे को समय पर झिड़कना, कभी कभी बच्चों को टोलियों में बांट कर उन का मुकाबला कराना, जांच-पड़ताल करते रहना, अच्छे काम को नमूने के तौर पर पेश करना आदि ऐसी बातें हैं जिन से बच्चे की गणित में दिलचस्पी और उन्नति जारी रखी जा सकती है।

व्यक्तिगत काम :—गणित में विशेष तौर पर बच्चों की

सीखने की गति में बड़ा अंतर होता है। इस लिये यह आवश्यक होगा कि होशियार और तीखे बच्चों को कठिन और साधारण और कमज़ोर बच्चों को आसान प्रश्न दिए जाएँ। परन्तु नया काम सारी श्रेणी को एक साथ कराया जा सकता है। तीखे बच्चे नेता के रूप के अपने साथियों को नई चीज़ समझाने में मदद दे सकते हैं।

व्यक्तिगत ध्यान देने के लिये श्रेणी को तीन भागों में बांट देना उचित होगा। पहले भाग में चोटी के बच्चे, दूसरे में मध्य दर्जे के और तीसरे में कमज़ोर बच्चे रखे जायें। सारी श्रेणी को एक साथ पाठ पढ़ाने के बाद इसका अभ्यास इस प्रकार कराया जाये कि पहली टोली अपना काम स्वयं करेगी और उसके काम की जांच-पड़ताल या तो अध्यापक श्रेणी से बाहर खाली समय में करेगा या प्रत्येक बच्चा आप ही अपने काम की जांच पुस्तक में दिये हुये उत्तरों से मुकाबला करके कर लेगा या यह काम उन बच्चों को सौंपा जायगा जो दिये हुये काम को सब से पहले कर लेंगे। ऐसा भी हो सकता है कि इस टोली के बच्चों के जोड़े बना दिये जांय और प्रत्येक जोड़े के बच्चे एक दूसरे के काम की पड़ताल कर लें। शुरु-शुरु में कभी कभी किसी प्रश्न को हल करने के लिये अध्यापक उन की मदद करेगा, आगे चल कर उन्हें ऐसे कठिन प्रश्न दिये जा सकते हैं, जो दूसरे बच्चों से नहीं कराये जायेंगे, और जिन्हें वे स्वयं ही हल करेंगे और जहाँ आवश्यकता होगी अध्यापक से मदद ले लेंगे। दूसरी टोली पर अध्यापक को विशेष ध्यान देना पड़ेगा। उसे इन के काम को देखना होगा और प्रायः इन की मदद करनी पड़ेगी। तब कहीं जाकर वे बच्चे इस योग्य हो सकेंगे कि गणित की क्रियाओं को ठीक ठीक और तेज़ी से कर सकें। तीसरी टोली के बच्चों को किसी भी अवस्था में अपने

आर पर नहीं छोड़ा जा सकता। उन्हें पग-पग पर मदद की आवश्यकता होगी। इसलिये अध्यापक को अपना समय दूसरी और तीसरी टोली में बराबर बांटना पड़ेगा। वैसे तो यह हो सकता है कि एक टोली को एक दिन अधिक समय दिया जाय और दूसरे दिन दूसरी टोली को। कभी कभी ऐसा भी कराया जा सकता है कि कुछ कमजोर बच्चे बारी बारी बोर्ड पर काम करें और पहले भाग के सीखे बच्चे बारी बारी उनकी मदद करें। अध्यापक कमजोर बच्चों के काम की पड़ताल कराने के लिये भी इन सीखे बच्चों की मदद ले सकता है।

मौखिक गणित :—मौखिक गणित लिखित गणित से अधिक महत्व रखता है। जीवन में हमें अधिकतर मौखिक गणित की ही आवश्यकता पड़ती है। जब हम बाजार में कोई सौदा खरीदते हैं या कोई छोटा-मोटा लेन-देन करते हैं, तो हमें मौखिक हिसाब-किताब करना पड़ता है। हर समय हमारे पास कागज पेन्सिल नहीं होती और यदि हो तो उतना समय कहां कि लिख कर हिसाब किया जाय। मौखिक गणित में सारी क्रियायें दिमाग में करनी पड़ती हैं। इसलिये यह काम बड़ा कठिन है। इसके लिये बहुत से अभ्यास की आवश्यकता है। प्रत्येक पाठ के शुरू में पांच सात मिनट तक रोजाना इसका अभ्यास होना चाहिये।

लिखित गणित में यह बात अधिक महत्वशाली है कि प्रश्न ठीक निकाला जाय, चाहे समय अधिक ही लगे। परन्तु मौखिक गणित में गति की ओर शुरू से ही अधिक ध्यान देना चाहिये। गति में तेजी पैदा करने के लिये श्रेणी को दिये हुये समय में प्रश्न हल करने का अभ्यास कराना चाहिये। प्रश्न बोर्ड पर लिखा या जबानी बोला जा सकता है। बच्चों को कहा जाय कि वे एक दम

दो मिंट में उसे ज़ुबानी हल करके उसका उत्तर अपनी-अपनी स्लेट या कापी पर लिख दें। जो बच्चे दिये हुये समय में ठीक उत्तर न बता सकें उन्हें अभ्यास के लिये अधिक अवसर दिये जायें।

गणित की समस्यायें या इबारती प्रश्न —गणित में किस प्रकार की समस्यायें बच्चों के सामने रखनी चाहियें ? जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है समस्यायें ऐसी होनी चाहियें जिन का दैनिक जीवन के साथ सम्बन्ध हो। केवल ख़याली और बुद्धि को तेज़ करने वाली समस्यायें देना ठीक नहीं जिन से गणित की पुस्तकें भरी पड़ी हैं। बेसिक पाठशालाओं में गणित के ऐसे प्रश्नों की कमी नहीं है, जो बच्चों के लिये सार्थक हों। उद्योग, जलसों और सैरों का प्रबन्ध करने में बहुत-सी हिसाबी समस्यायें पेश आती हैं, जिन में गणित के कई प्रकार के नियमों का अभ्यास कराया जा सकता है। उद्योग के व्यक्तिगत और सामूहिक रिकार्ड, औज़ारों और कच्चे माल की क़ीमत और भार, पाठशाला के सामान को इकट्ठा करना, जलसों और सैरों के लिये आवश्यक सामग्री की ख़रीद, बच्चों के व्यक्तिगत वज़न, क़द और हाज़री के रिकार्ड आदि ऐसी चीज़ें हैं जिन से गणित की अनगिनत समस्यायें सम्बन्धित हैं। ऐसे ही घर में प्रयोग में आनेवाली चीज़ों का दिये हुये भाव के अनुसार मूल्य निकालना, सौदा ख़रीदते समय ठीक क़ीमत देना और शेष रेज़गारी वापस लेना, घर का हिसाब रखना, मज़दूरी निकालना आदि भी सच्ची हिसाबी समस्यायें हैं जिनको हल कराया जा सकता है।

अभ्यास के लिये जो समस्यायें हल करने को दी जायें उन में भी दिलचस्पी के नियमों का ध्यान रखा जाय। कई प्रश्न काम

करते हुए पैदा होते हैं। जैसे बच्चा यह जानना चाहता है कि पिछले सप्ताह में उस ने कुल कितने तार काते थे। जब वह कोई चीज़ खरीदता है तो उसके मूल्य का हिसाब लगा कर रुपये देता है और दुकानदार से शेष रेजगारी वापस लेते समय मालूम करता है कि ठीक रेज़गारी वापस दी गई है या नहीं। कुछ समस्याएँ ऐसी होती हैं जिन्हें भविष्य की आवश्यकताओं को सामने रखते हुये हिसाब लगाना पड़ता है। जैसे बच्चा आधा घंटा कातने के बाद जानना चाहता है कि वह अब और कितने तार काते कि उसकी लट्टी पूरी हो जाय या वह प्रति मास अपने जेब खर्च में से कितने पैसे बचाया करे कि वर्ष के अन्त में 6 रुपये का फाउन्टेन पैन खरीद सके। कभी ऐसा भी होता है कि अध्यापक कोई समस्या पेश करता है—जैसे, हरि की औसत गति क्या होनी चाहिये कि वह डेढ़ घंटा प्रति दिन तकली कात कर एक सप्ताह में (जिसमें रविवार को काम नहीं होता) सूत का छः लट्टियां तैयार कर दे। कई समस्यायें ऐसी होती हैं जिनमें कई बातें तो अनुभव और निरीक्षण से सम्बन्धित होती हैं और कुछ खयाली होती हैं। दुर्भाग्यवश पाठशालाओं में अब तक अंतिम प्रकार की (खयाली) समस्यायों का ही रिवाज है। आप को चाहिये कि जहां तक हो सके, बच्चों से पहले तीन प्रकार की समस्याएँ ही हल कराएँ क्योंकि इन समस्यायों की नींव बच्चों के अनुभवों पर होती है।

समस्याएँ हल करने के सम्बन्ध में बच्चों को इन बातों की शिक्षा देनी चाहिये :—

1. समस्या को ध्यान से सुनना या पढ़ना।

2. यह जानना कि क्या ज्ञात करना है और क्या दिया हुआ है।

3. दी हुई चीज़ों की मदद से उस चीज को निकालना जिस को मालूम करना है।

4. जांच-पड़ताल करना कि उत्तर ठीक निकला है या नहीं।

आरम्भिक श्रेणियों में इस बात पर ज़ोर नहीं देना चाहिये कि बच्चे एक ही बताये हुए तरीके से उत्तर निकालें। शुरु में उन्हें इस की भी आज्ञा होनी चाहिए कि समस्या हल करने के लिए स्थूल वस्तुओं की मदद ले सकें।

एक यह बात भी याद रखनी चाहिए कि समस्या की भाषा सीधी-सादी हो जिसे बच्चे आसानी से समझ सकें। शुरु-शुरु में यह निश्चय कर लेना चाहिए कि क्या उन शब्दों के अर्थ बच्चे समझते हैं जो गणित की समस्याओं में प्राय. प्रयोग किये जाते, जैसे :—कम, अधिक, बड़ा, छोटा, सारा, कुल, भाग, योगफल, अन्तर, शेष, बचना, जोड़ना, घटाना, गुणा आदि।

गणित के काम की जांच और शुद्धि:—आप को केवल इस बात से संतोष नहीं हो जाना चाहिए कि बच्चे सोच-समझ कर प्रश्न निकालने की कोशिश करते हैं। उत्तर ठीक निकालना उतना ही आवश्यक है, जितना ठीक ढंग को बरतना। जब तक उत्तर ठीक न निकले, विधि का कोई विशेष महत्त्व नहीं। प्रायः इस सम्बन्ध में यह भूल है कि यदि प्रश्न की विधि ठीक है अर्थात् उसके अलग-अलग पगों में तर्क की दृष्टि से तालमेल है, परन्तु उसका उत्तर कहीं गुणा, भाग आदि में गलती हो जाने के कारण ठीक नहीं निकल सका, तो कोई चिंता नहीं। यह विचार ठीक नहीं। यदि किसी से बाज़ार में सौदा खरीदते समय या अपनी कोई चीज़ बेचते समय इस प्रकार की भूल हो जाय तो उस का फल उसको भोगना पड़ेगा।

गणित के काम में सफ़ाई और समय की भी आवश्यकता

है। इस बात पर जोर दीजिए कि बच्चे जो काम करें, उसको ठीक ढंग से करें। समुचित हाशिया छोड़ा जाय। हाशिये में ऊपर मिति लिखी जाय। प्रश्न की क्रिया साफ-साफ और सुव्यवस्थित हो। बेढंगे, मैले और कटे-फटे काम को कभी स्वीकार नहीं करना चाहिए।

जो काम भी बच्चा करे, उसको शीघ्र ही जांचिए ताकि वह उसके फल से परिचित हो सके और यदि कोई भूल हो गई हो तो उसको आसानी से ही समझ सके। क्योंकि उस समय उसके मन में पूरी क्रिया ताज़ा होगी जिस के द्वारा उसने प्रश्न हल किया है।

अच्छा होगा यदि बच्चा अपने प्रश्न की आप ही पड़ताल करे। आप प्रश्न का उत्तर बता दीजिए या बोर्ड पर लिख दीजिए और बच्चों से कहिए कि वे इस से तुलना करके देख लें कि उन का उत्तर ठीक है या नहीं। हो सकता है कि इस प्रकार कोई बच्चा बेईमानी कर ले, परन्तु ऐसा कर लेने वाले बच्चे बहुत कम होंगे और उनका पता आसानी से लगाया जा सकता है। आप को श्रेणी में घूम फिर कर देख लेना चाहिए कि बच्चों की अपनी जांच ठीक है या नहीं और एक सप्ताह में एक बार सब की कापियां नियम से देखनी चाहियें, चाहे इस के लिये आप को पाठशाला के समय के अतिरिक्त अपना निजी समय भी क्यों न देना पड़े। इस समय उन बच्चों का काम विशेष ध्यान से देखिये जो लापरवाही करते हैं या धोखा देने का प्रयत्न करते हैं।

आप यह भी कर सकते हैं कि श्रेणी को तीन भागों में बांट दें और प्रत्येक वर्ग के काम को बारी-बारी देखें और पड़ताल के काम में उन तेज़ बच्चों की मदद लें जो अपना काम शीघ्र ही

समाप्त कर चुके हों या कभी कभी आप यह भी कर सकते हैं कि बच्चों की कापियां आपस में बदलवा दें और वे एक-दूसरे की कापियां जांच लें।

जिस बच्चे का प्रश्न ग़लत हो उस से उस प्रश्न को उसी समय निकलवाइये। शुद्धि कराने का इस से अच्छा और कोई ढंग नहीं है कि बच्चा आप अपनी शुद्धि करे। कई अध्यापक शुद्धि के लिये प्रश्न को तख्ते पर हल कर देते हैं और बच्चे उसको उसी तरह अपनी कापियों में नक़ल कर लेते हैं। परन्तु हो सकता है कि इस तरह प्रश्न ग़लत निकालने वाले को कोई लाभ न हो, चाहे अध्यापक ने उसे अच्छे ढंग से ही क्यों न समझा दिया हो क्यों कि बहुत बार देखा गया है कि गणित की ग़लतियां बेपरवाही के कारण होती हैं। बेपरवाही का इलाज तर्क नहीं हो सकता। इसका ठीक इलाज यह है कि भूल करने वाले से अधिक ध्यान से काम कराया जाय, वह आप अपनी भूल को खुद ढूंढे और ठीक करे।

परन्तु यदि अभ्यास के काम में किसी बच्चे ने कोई बुनियादी भूल की है तो उसको पूरा काम शुरु से सिखाने की आवश्यकता होगी ताकि वह फिर उस नियम को भली प्रकार समझ ले और दुबारा ऐसी भूल न करे। गणित की समस्यायों का हल करने में जो भूलें होती हैं, उनका ठीक ठीक पता कर लेना चाहिये कि वे नियम न जानने के कारण हुई हैं या लापरवाही के कारण। ऐसी भूलों को ठीक करने में अध्यापक तेज़ बच्चों की मदद ले सकता है।

सामाजिक विज्ञान :— सामाजिक शिक्षा से बच्चों को अपने सामाजिक जीवन को समझने में मदद मिलनी चाहिये और उनमें ऐसी योग्यता और लगन पैदा हो जानी चाहिये कि वे अपने समाज को अच्छा बनाने का यत्न कर सकें, अपने कर्तव्यों को पूरा

करें और अपने अधिकारों को ठीक तरह बरतें। उनमें ऐसे मुझाव और शौक पैदा किये जायें कि वे सामाजिक अन्याय और बुराइयों को मिटाने के कार्य में भाग ले सकें।

सामाजिक शिक्षा के दो भाग हैं।

1. सैद्धांतिक भाग और 2. क्रियात्मक भाग सैद्धांतिक भाग का उद्देश्य यह है कि बच्चे को सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों से परिचित करवाया जाय। वह आज के जीवन को इस निगाह से देखे कि यह सैकड़ों वर्षों के मानवीय परिश्रम और प्रयत्नों का फल है, मानव जीवन का रंग रूप निखारने के लिये किस किस प्रकार की कठनाइयों का सामना करना पड़ा है और कैसे कैसे बलिदान देने पड़े हैं। इतिहास का अध्ययन इसी दृष्टि से करवाना चाहिये, क्योंकि जब इसको एक अलग विषय के रूप में पढ़ाया जाता है तो उस को सामाजिक विज्ञान का रूप नहीं दिया जा सकता। दुर्भाग्यवश आज जिसे बेसिक पाठशाला कहते हैं, उसमें सामाजिक विज्ञान को इतिहास, भूगोल और नागरिकता का समूह समझा जाता है और इन तीनों विषयों की पुराने ढंग से अलग-अलग शिक्षा होती है। इतिहास में पुराने बादशाहों, राजाओं, योद्धाओं, धार्मिक नेताओं आदि की कहानियां और कारनामे बताये गये हैं और उनसे सामाजिक जीवन को समझने में मदद नहीं मिलती है।

सामाजिक विज्ञान से जहां मनुष्य के भूत काल और वर्तमान काल को समझने में मदद मिलनी चाहिये, वहां उस से यह दृष्टि भी पैदा होनी चाहिये कि मनुष्य ने कैसे प्रकृति पर काबू पाकर इस भूमि को रहने के योग्य बनाया है और वह किस तरह और उन्नति करने, जीवन को कायम रखने और उन्नति करने के मार्ग और

साधन पैदा करता रहता है। यह सामाजिक विज्ञान का यह पक्ष है जिसको भूगोल कहते हैं।

इस के अतिरिक्त सामाजिक शिक्षा द्वारा बच्चों को वर्तमान जीवन की आवश्यकताओं से भी परिचित कराया जाना चाहिये कि वे जिस समाज में रहते हैं, उसका क्या रूप है और उसमें उनके क्या कर्तव्य और क्या अधिकार हैं। इन चीजों का केवल जानना ही काफी नहीं है, उन को ठीक प्रकार से बरतने की योग्यता भी बच्चों में पैदा होनी चाहिये।

विधिः—प्रारम्भिक श्रेणियों के पाठ्यक्रम में पुराने समय की कई कहानियां और वर्तमान समय के भिन्न-भिन्न देशों के जीवन का वर्णन शामिल है। इन को अधिक से अधिक ठोस रूप में पेश करना चाहिये। इसके लिये चित्र, माडल आदि का प्रयोग आवश्यक होगा और आज की परिस्थितियों से इनको संबधित करना होगा। जहां तक हो सके इन को ड्रामे के रूप में पेश करना चाहिये।

इन कहानियों द्वारा बच्चे में सामाजिक चेतना और आध्यात्मिक गुण पैदा करने का यत्न करना चाहिये। एस्कीमो और रैड इंडियन, अफरीका के बौने और बद्दू आदि के जीवन की बच्चे के घरेलू जीवन से तुलना करवा कर इस बात का अनुभव कराया जा सकता है कि इन का जीवन इतना भिन्न क्यों है। इस प्रकार के विषयों का सामाजिक पक्ष उजागर करने के लिये आजकल के समाचारपत्रों की भी मदद प्राप्त की जा सकती है। उदाहरण के लिये अरब और अफरीका की वर्तमान अवस्था का वर्णन किया जा सकता है, और उसको अपने देश के स्वतन्त्रता-आन्दोलन का हवाला दे कर समझाया जा सकता है। इसी तरह आदि मानव के

जीवन के अध्ययन में बच्चे को अनुभव कराया जाय कि जब मनुष्य के पास न रहने के लिये मकान था और न शरीर को ढांपने के लिये कपड़ा, न उस के पास यन्त्र थे और न खेत आदि, जब एक स्थान से दूसरे स्थान तक आने-जाने के लिये साधन नहीं थे, जब वह यह भी नहीं जानता था कि आग क्या वस्तु है, तो उस का जीवन कितना कठिन था। इसकी तुलना जब वह अपने वर्तमान जीवन से करता है तो उसे अनुभव कराना चाहिये कि मनुष्य के परिश्रम में कितनी शक्ति है कि इस के द्वारा जीवन का चित्र ही बदल गया है। इस तरह बच्चे के मन में मनुष्य के परिश्रम का आदर पैदा होगा और वह उसकी शक्ति पर भरोसा करना सीखेगा।

बड़ी श्रेणियों में सामाजिक विज्ञान की शिक्षा में निकट के ऐतिहासिक स्थानों की सैर, इमारतों की तसवीरें, सिक्के आदि बड़े लाभकारी सिद्ध होंगे। विभिन्न देशों की दशा का वर्णन करते हुये माडल, तस्वीरें, चित्र आदि के अतिरिक्त दैनिक समाचार पत्र एक अच्छा साधन बन सकते हैं और इर्द-गिर्द की सैर करवाते समय सामाजिक संस्थाओं का निरीक्षण भी कराया जा सकता है।

सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम का जो क्रियात्मक भाग है, उसकी शिक्षा का वर्णन अगले अध्याय में विस्तार से दिया गया है।

कला और ड्राइंग का उद्देश्य:—कला की शिक्षा का उद्देश्य यह है कि बच्चे रेखा और रंग द्वारा अपने विचारों और अनुभवों को प्रकट कर सकें। कई चीजें ऐसी हैं जिनका वर्णन बोल कर या लिखकर इतना प्रभावशाली नहीं होता जितना कि चित्र द्वारा

होता है। इसके अतिरिक्त कला बच्चों की सृजनात्मक शक्ति को काम में लाने का एक बहुत अच्छा साधन है।

विधि :—कला के काम में सब से आवश्यक चीज़ यह है कि इस में बच्चों को काम करने की पूरी आज़ादी है। रूप और रंग दोनों के सम्बन्ध में उन्हें अनुभव प्राप्त करने के अवसर देने चाहियें। आप देखेंगे कि कुछ समय काम करने के बाद बच्चे को अपने काम से संतोष नहीं होता, यदि वह समझता है कि उस में कोई कमी रह गई है। उदाहरण के लिये, यदि वह बार बार यत्न करने के बाद भी मनुष्य का चेहरा ठीक नहीं बना सकता तो वह एक प्रकार की अशांति और चुभन अनुभव करने लगता है और आप अध्यापक से इसके सम्बन्ध में मदद लेना चाहता है। ऐसी अवस्था में उसको ठीक शक्ल बनाने का ढंग बताना उचित होगा।

बच्चों के काम की शुद्धि में बड़ी सावधानी की आवश्यकता है। कई बार अध्यापक बच्चे की बनाई हुई तस्वीर को आप ठीक कर देता है और उसको इतना अधिक बदल देता है कि फिर बच्चा उसको अपनी तस्वीर नहीं समझता और इस का परिणाम यह निकलता है कि बच्चा आत्मविश्वास खो बैठता है। इस लिए अध्यापक को चाहिए कि वह बच्चों को खुद अपनी तस्वीर ठीक करने का ढग बताए, उन्हें उस चीज़ को ध्यान से देखने पर ज़ोर दे जिसकी तस्वीर उन्होंने बनाने की कोशिश की है और अपनी बनाई हुई तस्वीर की उस चीज़ से तुलना करवाए। गलती मालूम हो जाने पर वे आप अपनी तस्वीर को ठीक कर लेंगे। यदि वे अपनी गलती को आप ठीक न कर सकें और वह गलती सभी या अधिकतर बच्चों ने की हो तो अध्यापक को तख्ते पर ठीक

शक्ल बना कर समझा देना चाहिए। यदि वह गलती आम न है, एक बच्चे या थोड़े-से बच्चों ने की है तो उसे सम्बन्धित बच की कापी के एक कोने में ठीक शक्ल बना कर ठीक कर दे चाहिए। बच्चे की तस्वीर में शिक्षक को कोई अदला-बदली नह करनी चाहिए।

इस बात का भी ध्यान रखिये कि बच्चों के काम में कुछ नयापन पैदा होता रहे। वे रोजाना एक ही चीज़ न बनायें। देखने में आया है कि कई बच्चे सदैव एक ही चीज़ का चित्र बनाते हैं जैसे जब उन्हें वृक्ष बनाना होगा तो वे एक ही वृक्ष जैसे खजूर क चित्र बनाते हैं या जब वे किसी प्राकृतिक दृश्य का चित्र बनाते है तो उनके चित्र में हमेशा एक नदी, चांद और घास आदि होती है। इसका कारण यह है कि अध्यापक ने यही एक चीज़ व्यवस्थित ढंग से सिखाई है और बच्चों को अपने आप निरीक्षण करने और अपनी सोच-समझ से काम लेने के लिये नहीं उभारा। स्पष्ट है कि बच्चे इस प्रकार आत्म-विश्वास खो बैठते हैं और जब तक उनको दूसरी चीज़ न सिखलाई जाय वे कुछ नहीं कर सकते। इस लिये यह बहुत आवश्यक है कि आप बच्चों को अपनी पसन्द की चीज़ें बनाने दें, उन की तस्वीरों को उनके ही दृष्टिकोण से परखें और सराहें कि जो कुछ वे दिखाना चाहते हैं उस में उनको कितनी सफलता हुई है। इस प्रकार आप उन को अंगुली पकड़ कर मार्ग दिखाने की जगह अपनी मंज़िल की खुद खोज करने और उस तक पहुँचने के के योग्य बनायेंगे।

बच्चों की सामाजिक और नैतिक शिक्षा

वैसे तो बच्चा जो कुछ सीखता और अनुभव करता है, उस सभी से उसे कुछ न कुछ सामाजिक और नैतिक शिक्षा मिलती है परन्तु सामाजिक विज्ञान की शिक्षा में इसके विशेष अवसर हैं, जैसा कि बेसिक शिक्षा की प्रणाली में इस विषय के उद्देश्य वर्णन करते हुए बताया गया है।

(1) बच्चे को प्रायः मनुष्यों और विशेष-कर भारतवासियों की उन्नति से दिलचस्पी हो जाय।

(2) वह अपने इर्द-गिर्द की सामाजिक और देशीय परिस्थितियों को भली प्रकार समझ सके और उसके मन में इन को अच्छा बनाने की लगन पैदा हो।

(3) उसके मन में मातृभूमि का प्रेम हो, वह भारत के भूत काल का आदर करे और भविष्य के बारे में यह भरोसा रखे कि यह संयुक्त समाज का घर होगा जिसकी नींव प्रेम, सचाई और न्याय पर होगी।

(4) वह नागरिकता के अधिकारों और कर्तव्यों से परिचित हो जाय।

(5) उसमें वे निजी और सामाजिक गुण पैदा हो जायें जिनसे मनुष्य अपने साथियों के विश्वास का पात्र बन जाता है।

(6) सब के दिलों में एक दूसरे के धर्म का और संसार के सब धर्मों का आदर पैदा हो जाय।

इस शिक्षा के क्रियात्मक पक्ष को सामने रखते हुए, बेसिक *शिक्षा-प्रणाली में सुझाया गया है कि पाठशाला में स्वराज्य की ऐसी संस्थायें स्थापित करनी चाहियें और पाठशाला का प्रबन्ध इस तरह सामूहिक ढंग से बच्चों के हाथ में होना चाहिये कि उनको अपने अधिकारों और कर्तव्यों के विभाजन और पारस्परिक उत्तरदायित्व* का अनुभव हो जाये।

नैतिक शिक्षा:—मनुष्य का आचरण और उसकी नैतिकता बहुत बड़ी वस्तु है। वह मनुष्य के पूरे जीवन को घेरे हुए है—चेतन जीवन को भी और अचेत जीवन को भी, इसलिये उस समय तक नैतिक शिक्षा नहीं दी जा सकती जब तक कि मनुष्य की सारी मानसिक और क्रियात्मक शक्तियों को इस प्रकार उभारा और संवारा न जाय कि वे ऊंचे से ऊंचा उद्देश्य प्राप्त करने के लिये प्रयोग की जा सकें और वे जीवन में हर जगह और हर समय पथ-प्रदर्शन कर सकें और कभी भी सीधे और सच्चे मार्ग से भटकने न दें। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि नैतिक शिक्षा का काम कितना उलझा हुआ और कठिन है। इसके लिये बड़ी सूझ बूझ से काम लेना पड़ेगा और पाठशाला के भीतर और बाहर प्रत्येक अवसर से लाभ उठाने की आवश्यकता होगी।

नैतिकता का अर्थ:—नैतिक शिक्षा के साधनों और विधियों पर वाद-विवाद करने से पहले इस बात को साफ तौर पर समझ

लेना चाहिये कि नैतिकता क्या वस्तु है। विभिन्न लोग नैतिकता का अर्थ अलग-अलग समझते है। जब लोग यह कहते हैं कि अमुक मनुष्य का नैतिक जीवन अच्छा है तो प्रायः उनका भाव यह होता है कि उसकी बातचीत और व्यवहार में भल-मनसाहत और शिष्टता पाई जाती है और यह सभ्य लोगों में उठ-बैठ सकता है। अर्थात् उनके लिये नैतिकता केवल मनुष्य की बाहरी चाल-ढाल और व्यवहार तक ही सीमित है। यह नैतिकता का अधूरा अर्थ है। इस प्रकार का आचरण तो बिलकुल दिखावे का और झूठा भी हो सकता है और उसको घटिया से घटिया मनुष्य भी दिखा सकता है। ऐसे ही हमारे देश में नैतिकता का एक और अशुद्ध विचार मौजूद है। नैतिकता का अर्थ यह समझा जाता है कि मनुष्य के यौन (sexual) सम्बन्ध पवित्र हों और बस।

इस में कोई संदेह नहीं कि अच्छे आचरण के लिये लिंग-पवित्रता एक आवश्यक वस्तु है परन्तु आचरण के लिये केवल यही चीज़ पर्याप्त नहीं। नैतिकता का सच्चा अर्थ यह है कि मनुष्य के भाव, अनुभव, कल्पनायें और विचार, कहना और करना, सब चीज़ें शुद्ध और पवित्र हों और उनका परस्पर गहरा और पक्का संबंध हो। इसका अर्थ यह है कि किसी मनुष्य का नैतिक जीवन अच्छा होने के लिये आवश्यक है कि वह जो कुछ सोचता और अनुभव करता है, और जो कुछ कहता है, उसका प्रभाव उस पर और दूसरों पर भी अच्छा होना चाहिये, और वह जो कुछ सोचे, वही अनुभव करे, वही कहे और करे भी। उसके विचार, अनुभव, कथन और कर्म में कोई अन्तर या टकराव नहीं होना चाहिये।

यह स्पष्ट है कि इस आदर्श को प्राप्त करने के लिये नैतिक शिक्षा का पहला पग यह होगा कि बच्चे के स्वार्थ को घटाकर उसका

ध्यान सामूहिक आवश्यकताओं की ओर लगाया जाय । उसको सामाजिक लाभ के लिये सोचने और करने की प्रेरणा दी जाय, उसे इस बात का अनुभव कराया जाय कि जहां एक ओर उसे सामाजिक संस्थाओं, जैसे घर, बिरादरी, पाठशाला आदि से लाभ प्राप्त करने का अधिकार है, वहां दूसरी ओर उस के कुछ कर्तव्य और जिम्मेवारियां भी हैं । उदाहरण के लिये, वह खेलना और कुछ बनाना चाहता है। उसको अधिकार है कि वह पाठशाला के खेल और उद्योग के सामान को प्रयोग में लाये । परन्तु उसके साथ-साथ उसका यह कर्तव्य और जिम्मेवारी भी है कि वह इस सामान का अच्छे ढंग से उपयोग करे, उसको ज़रा भी बिगड़ने न दे, और दूसरों को भी अपनी दिलचस्पियों में शामिल करे, उनके साथ मिल कर अपने शौक को पूरा करे, और दूसरों के काम में रुकावट न डाले । पाठशाला में बच्चे को हर समय क्रियात्मक ढंग से यह बात सिखलानी चाहिये कि प्रत्येक अधिकार के साथ कोई न कोई कर्तव्य भी जुड़ा होता है। प्रायः बच्चा अपने साथियों और बड़ों को प्रसन्न रखना चाहता है और उन की नाराजगी को बुरा समझता है । वह चाहता है कि दूसरे उसे अच्छा समझें और उसकी प्रशंसा करें । इसलिये आशा है कि यदि आप हुशियारी, सूझ-बूझ और धैर्य से काम लेंगे तो बच्चा धीरे धीरे स्वार्थ को त्याग कर नैतिक गुण और सद्व्यवहार अपनायेगा और अपने आचरण को इस कसौटी पर परखने लगेगा कि लोग उस के बारे में क्या सोचेंगे ।

जब बच्चा बालकाल की सीमा से निकल कर जवानी की सीमा में पांव रखता है, अर्थात् वह ग्यारह-बारह साल का हो जाता है तो वह न केवल शारीरिक और मानसिक तौर पर पक्का होता है अपितु वह नैतिक तौर पर भी अपने पांव पर खड़ा

होना सीखता है। अब वह अपने प्रत्येक काम को इस कसौटी पर नहीं परखता कि उससे उसे सुख और प्रसन्नता होगी और न ही वह इस बात की चिंता करता है कि यदि उसने अमुक काम किया तो लोग क्या कहेंगे। वह इस समय जीवन की उस मन्ज़िल से गुज़रता है जो उसका आदर्श निश्चित करने का समय है। वह अपना पथ-प्रदर्शन स्वयं करना चाहता है। वह कुछ ऐसे सिद्धांत और नियम स्थापित करना चाहता है जिन की सहायता से भले और बुरे का निर्णय आप कर सके। आदर्श की नींव इन ही नियमों और सिद्धांतों पर होती है। इसी आदर्श की कसौटी पर वह अपने काम की जांच करता है। नैतिक शिक्षा की यह दूसरी मन्ज़िल है।

कई लोग नैतिक शिक्षा की इस मंज़िल तक नहीं पहुँचते। वे ज्यादा से ज्यादा उस सीढ़ी पर आ कर अटक जाते हैं जहां मनुष्य अपने प्रत्येक काम को केवल इस दृष्टि से जांचता है कि दूसरे लोग उस के बारे में क्या राय कायम करेंगे अर्थात् उनकी कसौटी प्रचलित नैतिकता होती है। इस प्रकार के लोग लकीर के फ़क़ीर होते हैं, और वे वर्तमान समाज के बे-बस गुलाम बन कर रह जाते हैं। वे समाज के बंधे हुये नियमों पर मशीन की तरह चलते हैं। यदि किसी समाज की नैतिक अवस्था अच्छी हो तो इसमें कोई डर नहीं कि उस के वर्तमान सिद्धांतों और नियमों की पालना की जाय। इस दशा में मनुष्य की नैतिक शिक्षा का अच्छा साधन यह ही है कि वह उस समाज के बनाये हुए नियमों के अनुसार जीवन व्यतीत करे। इस दशा में पाठशाला का काम सुगम है। वहां बच्चों को सामाजिक जीवन के नियमों से परिचित कराना चाहिये, और इनपर अमल करने के लिये अवसर देने

चाहियें। परन्तु जिस समाज में गिरावट हो, जिस की नींव सचाई और न्याय पर न हो, जहाँ लूट-मार का बाजार गर्म हो, बाहरी लीप-पोत को आन्तरिक गुणों से अच्छा समझा जाता हो, जहां नसली और साम्प्रदायिक पक्षपात का उभारना और उसको सफलता के साथ प्रयोग में लाना होशियारी और बुद्धिमानी का सबूत और उन्नति की कुंजी हो, वहां पाठशाला का काम बहुत कठिन हो जाता है। हमारे वर्तमान समाज की दशा कुछ ऐसी ही है। इस लिए इस बात की आवश्यकता है कि पाठशाला में बच्चों को समाज के अशुद्ध और असत्य मूल्यों से परिचित किया जाय और उन्हें इस योग्य बनाया जाय कि वे आवश्यकता के समय किसी सामाजिक अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठा सकें और उन में इतना साहस पैदा कर दिया जाय कि वे स्वार्थी लोगों के विरोध का सामना हंसी-खुशी से कर सकें। केवल ऐसे ही सामाजिक सुधार हो सकता है।

नैतिक शिक्षा के सम्बन्ध में सब से आवश्यक चीज यह है कि बच्चों में आत्म-प्रतिष्ठा और स्वाभिमान का भाव उभारा जाय। उन्हें आप अपना आदर करना सिखाया जाय। आत्म-प्रतिष्ठा सारे नैतिक गुणों की जड़ है। यदि बच्चे में आत्म-प्रतिष्ठा पैदा कर दी जाय तो वह किसी के डर से न कोई काम करेगा और न ही छोड़ेगा। उसे अपने आप पर भरोसा होगा। आत्म-प्रतिष्ठा बच्चे को हर वह काम करने से रोकेगी जिस से उसका नाम संकट में हो। बच्चे में आत्म-प्रतिष्ठा पैदा करने की पहली शर्त यह है कि अध्यापक स्वयं बच्चे का आदर करना सीखे। यदि पाठशाला और श्रेणी का प्रबन्ध केवल अध्यापक की आज्ञा और इच्छा पर निर्भर है और बच्चों में अनुशासन कायम रखने के लिये

बाहरी दबाव का प्रयोग किया जाता है तो बच्चों में आत्म-प्रतिष्ठा पैदा होने की बहुत कम आशा करनी चाहिये। इसलिये आवश्यक है कि बच्चों को पाठशाला और श्रेणी के प्रबन्ध में शरीक किया जाय। जिम्मेवारी उठाने के साथ ही बच्चे जिम्मेवारी का अनुभव कर सकते हैं और वे अपने ऊपर भरोसा करना सीखते हैं, और फिर वे दूसरों पर भी भरोसा कर सकते हैं।

आत्म-प्रतिष्ठा पैदा करने के सम्बन्ध में एक बात याद रखनी चाहिये कि कहीं बच्चे में अकड़ या अहंकार पैदा न हो जाय। आत्म-प्रतिष्ठा बच्चे को न केवल अपना आदर करना सिखलाती है अपितु दूसरों का आदर करना भी बताती है। परन्तु अहंकार के कारण बच्चा अपने आप को सब से बड़ा समझने लग जाता है। वह समझता है कि जो कुछ वह सोचता, कहता और करता है, वही ठीक है और इस के अतिरिक्त अन्य कोई बात ठीक हो ही नहीं सकती। वह आशा करता है कि दूसरे उसका आदर करें परन्तु वह आप दूसरों का आदर करना आवश्यक नहीं समझता। ऐसा बच्चा अपने साथियों में अच्छा नहीं समझा जाता, वह नक्कू बन जाता है। इसलिये आत्म-प्रतिष्ठा के साथ-साथ बच्चों में सहन-शीलता और मानसिक ईमानदारी भी पैदा करनी चाहिए ताकि वे दूसरों का आदर करना सीखें और अपनी भूल को खुशी-खुशी मान लिया करें। सहनशीलता पैदा करने के लिये सब समस्याओं का निष्पक्ष और न्यायपूर्वक अध्ययन करना चाहिये। हमारे देश में इसकी बड़ी आवश्यकता है, जहाँ जात-पात, धर्म और नसल की नींव पर पक्षपात और अन्याय किया जाता है। बच्चों को इस योग्य बनाना चाहिये कि वे सारे धार्मिक सम्प्रदायों के सांस्कृतिक कार्यों की सराहना कर सकें, दूसरों के धार्मिक नेताओं का आदर करना

सीखें और राष्ट्रीय लाभ के सामने अपने निजी या साम्प्रदायिक लाभ को तज सकें।

आत्म-प्रतिष्ठा के साथ-साथ बच्चों में सामाजिक भावना भी पैदा होनी चाहिये। इसके बिना नैतिकता का सामाजिक मूल्य बहुत कम रह जाता है। यह वह गुण है जो मनुष्य को हर वह काम करने से रोकता है जो समाज के लिये दुःख या हानि का कारण हो सकता है। बच्चे को पाठशाला के विभिन्न कार्य-कलापों द्वारा इस योग्य बनाना चाहिये कि वह हर उस काम में खुशी से भाग ले सके जिस से सामाजिक जीवन में सुन्दरता और अच्छाई पैदा होती है। उसकी हमदर्दियों का घेरा इतना विशाल हो कि संसार में जहां कहीं अन्याय और अत्याचार हो रहा हो, वह उसे अनुभव कर सके और पीड़ित लोगों की मदद के लिये जो कुछ कर सके, करने के लिये तैयार हो। उस की हमदर्दी इस चीज़ पर निर्भर न हो कि पीड़ित किसी विशेष देश, राष्ट्र, धर्म या रंग का है। सामाजिक शिक्षा में विशेष करके इस बात का ध्यान रखा जा सकता है कि बच्चे दूसरे देशों और राष्ट्रों की सभ्यता और संस्कृति का आदर करना सीखें और उन की वर्तमान समस्याओं का हमदर्दी से अध्ययन करें।

नैतिक शिक्षा के साधन :—पाठशाला का सारा वातावरण बच्चे के आचरण पर प्रभाव डालता है। कहावत प्रसिद्ध है—"जैसी पाठशाला वैसे बच्चे"। पाठशाला के वातावरण के जो प्रभाव बच्चे पर चेत और अचेत रूप में पड़ते रहते हैं, उन्हें दो भागों में बांटा जा सकता है। (1) पाठशाला के सामाजिक जीवन का प्रभाव जो बच्चों के पारस्परिक सम्बन्धों पर निर्भर है। (2) पाठ्यक्रम और शिक्षा-विधि का प्रभाव।

(1) पाठशाला का सामाजिक जीवन :—वैसे तो बच्चों पर सामाजिक जीवन की भिन्न-भिन्न संस्थायें, जैसे—घर, मोहल्ला आदि सदैव प्रभाव डालते रहते हैं और उनकी नैतिक शिक्षा का साधन बनते हैं, परन्तु उनमें से किसी का भी फैलाव इतना नहीं है जितना कि स्कूल का। स्कूल ही सामाजिक जीवन की वह संस्था है जहां समाज के प्रत्येक सम्प्रदाय और वर्ग के बच्चे एक जगह इकट्ठे होते हैं। शेष सब संस्थाओं में केवल एक विशेष प्रकार के लोग शामिल होते हैं। इसलिये स्कूल का सामाजिक जीवन सब से अधिक महत्वशाली है। यहां बच्चों को भिन्न सम्प्रदायों और वर्गों के बच्चों से मिलकर जो अनुभव और दिलचस्पियां प्राप्त हो सकती हैं, वे किसी अन्य जगह संभव नहीं हैं। यहां उन की समझ-बूझ और सहानुभूति का घेरा बड़ा किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त स्कूल में एक और गुण है जो दूसरी संस्थाओं में नहीं। बच्चे दूसरी संस्थाओं द्वारा जो ज्ञान और अनुभव प्राप्त करते हैं, उसमें कोई क्रम और व्यवस्था नहीं होती। परन्तु स्कूल में एक विशेष नियम और क्रम से उसे प्राप्त करने का प्रबन्ध किया जाता है। इसलिए स्कूल का प्रभाव अधिक गहरा और देर तक रहने वाला होता है।

स्कूल नैतिक शिक्षा का साधन तब ही बन सकता है जब उसका बाहर की सामाजिक संस्थाओं के साथ सम्बन्ध हो। उदाहरण के लिये, वह ग्राम-पंचायत, प्रौढ़-शिक्षा केन्द्र, ग्राम-सुधार-सभा आदि के कामों में भाग ले, और उसके साथ-साथ, आप भी बच्चों की सामाजिक शिक्षा के लिये उचित प्रबन्ध करे। इस अवस्था में बच्चों को स्कूल से प्राप्त की हुई शिक्षा को बाहर के जीवन में प्रयोग करने के अवसर मिलेंगे।

ऊपर के वाद-विवाद से यह नहीं समझना चाहिये कि स्कूल केवल बच्चों के सामजिक जीवन के साथ सम्बंध रखता है और इसपर बच्चों की व्यक्तिगत विशेषताओं को उजागर करने की कोई जिम्मेधारी नहीं है परन्तु व्यक्तिगत गुणों का पता लगाने और उन्नति देने के लिये भी सामाजिक कार्य-कलाप ही अधिक अच्छे हैं । सामूहिक कामों में प्रत्येक बच्चे को उसके झुकाव के अनुसार अधिक से अधिक उन्नति करने का अवसर दिया जा सकता है। इसके लिये आवश्यक है कि बच्चे का नेतृत्व ठीक तरह किया जाय । यह काम अध्यापक होने के नाते आपका ही है। इसलिये आप को उस मंजिल से परिचित होना चाहिये जहां किसी बच्चे को पहुँचाया जा सकता है और उन कठिनाइयों और मुश्किलों का अनुभव होना चाहिये जिन का उस को सामना करना पड़ेगा, ताकि आप आवश्यकता के समय उसकी मदद कर सकें और उसको ठीक मार्ग दिखा सकें।

यदि अध्यापक और बच्चों के बीच प्रेम और सहानुभूति का सबंध हो तो वह बच्चों पर बड़ा प्रभाव डाल सकता है। उसके आचरण की छाप बच्चों पर लग जाती है। फिर उनमें कोई काम कराने के लिये धमकी, अनुचित दबाव, लोभ आदि से काम लेने की आवश्यकता नहीं रहती, अपितु बच्चे अध्यापक की प्रसन्नता के लिये ऐसा काम भी करने के लिये तैयार हो जाते हैं जिस में उनको कोई दिलचस्पी नहीं होती। इस लिये यह आवश्यक है कि अध्यापक अपने आप में वह गुण पैदा करने का यत्न करे जो वह बच्चों में पैदा करना चाहता है। जो काम वह बच्चों से कराना चाहता है वह उसे आप करना चाहिये। जिन नैतिक सिद्धांतों का अनुभव वह बच्चों से कराना चाहता है, उन को आप भी अपनायें। यदि वह बच्चों में सहयोग की भावना पैदा करना चाहता है कि बच्चे मिल

जुल कर रहें, एक दूसरे से प्रेम का वर्ताव करें, एक दूसरे की मदद करें, तो अध्यापक को बच्चों के सामने ऐसा ही नमूना पेश करना चाहिये क्योंकि बच्चे उस की सचाई और ईमानदारी का अनुमान उसकी क्रिया से लगाते हैं; केवल उस की बातों का उनपर कुछ अधिक प्रभाव नहीं पड़ता।

(2) पाठ्यक्रम और शिक्षण-विधि का प्रभावः—पाठ्यक्रम के विषयों से सामाजिक शिक्षा तब ही हो सकती है जब कि उनकी पढ़ाई सामाजिक दृष्टिकोण से की जाय, अर्थात् बच्चों को यह अनुभव कराया जाय कि इन विषयों का अध्ययन कई ज़रूरी सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करता है। अध्यापक विभिन्न विषयों की शिक्षा में इस चीज़ का ध्यान कैसे रख सकता है, इस संबंध में नीचे कुछ संकेत दिये जाते हैं:—

सामाजिक विज्ञानः—जिस चीज़ से सामाजिक जीवन में सुगमता पैदा हो या जिससे आपस के संबंधों को अच्छा बनाने में मदद मिले, वह सामाजिक महत्व रखती है। इन चीजों को तीन भागों में बांटा जा सकता है

(1) प्रकृति और उसके नियम। इसमें भूगोल और स्वास्थ्य-रक्षा के साधन शामिल हैं।

(2) सामूहिक जीवन के सिद्धांत और तरीके। इसमें इतिहास और नागरिकता शामिल हैं।

(3) जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये सामान संग्रह करना, कच्चे माल की उपज, उससे लाभदायक सामान की तैयारी, उस सामान की बाँट। इसमें भूगोल, शिल्प और घरेलू कला शामिल हैं।

१. प्रकृति और उसके नियमः—बच्चे को जानना चाहिये कि प्रकृति की वे कौन-सी चीजें और सिद्धांत हैं जो मनुष्य के जीवन, उसके रहने-सहने के तरीकों और उसके कामों पर प्रभाव डालते हैं। भूमि का धरातल, मिट्टी की भिन्न-भिन्न किस्में, जल-वायु, पेड़-पौधे, जीव-जंतु, कीड़े-मकौड़े आदि ऐसी चीजें हैं जो मानव जीवन पर लाभदायक या हानिकारक प्रभाव डालती हैं। बच्चों को जानना चाहिये कि मनुष्य प्रकृति की लाभदायक चीज़ों से कैसे लाभ प्राप्त करता है और उसकी हानिकारक चीजों से बचने के लिए क्या क्या उपाय सोचता है।

२. सामूहिक जीवन के सिद्धांत और तरीके—सामूहिक जीवन की उन्नति कैसे हुई? मनुष्य ने अपनी बड़ी-बड़ी आवश्यकतायें जैसे—खाने, पीने, पहनने, ओढ़ने, रहने-सहने और अपने शत्रुओं से जान बचाने की आवश्यकतायें कैसे पूरी की? परिवार, ग्राम, राज्य, राष्ट्र आदि की नींव कैसे पड़ी? बच्चे को अनुभव कराइये कि मनुष्य ने आरंभिक समय में ही यह मालूम कर लिया था कि मिल-जुल कर रहने की आवश्यकता है और मिल-जुल कर काम करने से शक्ति बढ़ती है। अधिक लोग मिल कर दूर से पीने के लिये पानी ला सकते हैं, खतरनाक जानवरों का शिकार कर सकते हैं, खतरनाक जानवरों और लुटेरों का मुकाबला कर सकते हैं, नदी-नालों पर पुल और जंगलों में मार्ग बना सकते हैं आदि। वर्तमान काल में मिल कर काम करने की आवश्यकता और भी बढ़ गई है। उदाहरण के लिए, किसी के लिए अकेले यह संभव नहीं कि वह स्कूल या पुस्तकालय चला सके, किसी मनोरञ्जन का प्रबन्ध कर सके, समाचारपत्र निकाल सके, खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने का सामान

तैयार कर सके। आजकल प्रत्येक काम में बहुत-से लोगों के सहयोग की आवश्यकता अनिवार्य है।

जहां इकट्ठे रहने में बहुत सी आसानियाँ और लाभ हैं, वहां कुछ हानियाँ भी हैं। किसी स्थान की जनसंख्या बढ़ने से थोड़ी सी जगह में "जमघट" हो जाता है। सूर्य की रोशनी और वायु कम मिलती है। छूत की बीमारियों के फैलने की संभावना बढ़ जाती है। साफ और काफी भोजन प्राप्त करना कठिन हो जाता है और कभी कभी किसी आदमी के मनोरञ्जन का प्रोग्राम उसके पड़ोसियों के लिए दुख का कारण बना जाता है। परन्तु इस प्रकार के खतरों का मुकाबला करना भी संभव है यदि लोग सिर जोड़ कर इसका प्रयत्न करें। ऐसी दशा में एक दूसरे की आवश्यकता, आराम और सुख का ध्यान रखना अधिक जरूरी हो जाता है, नियम और कानून बनाने की जरूरत पड़ती है। कभी कभी ऐसा भी होता है कि ये नियम व कानून आदि केवल कुछ लोगों या एक छोटे-से वर्ग या समूह के लाभ की रक्षा करते हैं और शेष सब लोग बेबस और लाचार होते हैं। परन्तु कभी कभी इन कानूनों और नियमों से सब का भला होता है और इस प्रकार लोकतंत्र की नींव पड़ती है।

संसार के अलग-अलग देशों में सामाजिक जीवन की रक्षा और उन्नति के लिए बहुत से कानून और नियम प्रयोग करके देखे गये हैं। इनमें से कुछ ऐसे हैं जिन से समाज को नुकसान पहुँचा है और कुछ से जन-साधारण के सुख, आराम और शान्ति में वृद्धि हुई है। आज हमारे बच्चों को जिस चीज के जानने की आवश्यकता है, वह यही है कि हम अपने जीवन को खुशहाल और मालामाल करने के लिए किन कानूनों और नियमों को मानें। इस समस्या को हल करने में इस बात से बड़ी मदद मिलेगी कि हम बच्चों को परि-

चित करायें कि प्रारम्भिक समय से आज तक मनुष्य ने अपने व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन को अच्छा बनाने के लिए क्या क्या यत्न किए हैं और उनके क्या क्या परिणाम निकले हैं। बच्चों को प्रारम्भिक और वर्तमान समय के जीवन का ज्ञान इस दृष्टिकोण से कराना चाहिए।

कई लोगों का विचार है कि बेसिक स्कूल में केवल अपने देश की सभ्यता का ज्ञान कराना काफ़ी है। परन्तु यह ठीक नहीं है। दूसरे देशों और कौमों के जीवन के बारे में ज्ञान प्राप्त करना वर्तमान काल में विशेष-कर आवश्यक हो गया है, इसलिए कि इसके द्वारा अंताराष्ट्रीय मन-मुटाव और पक्षपात को मिटाने में मदद मिलेगी और संसार में शांति कायम रखने की संभावना बढ़ जायेगी। इसके अतिरिक्त आज के जीवन को समझने के लिए आवश्यक है कि उन सब कौमों का अध्ययन किया जाय जिन्होंने मानव-संस्कृति की उन्नति में भाग लिया है।

3. जीवन की आवश्यकतायें पूरी करने के लिए सामान इकट्ठा करना:—उन सब लोगों और संस्थाओं के बारे में बच्चे को आवश्यक ज्ञान प्राप्त होना चाहिए जिनसे मानव जीवन की आवश्यकतायें पूरी करने में मदद मिलती है। भोजन, कपड़ा और मकान आदि जीवन की मुख्य आवश्यकताएँ हैं। उन्हें पूरा करने के काम में बहुत-से लोग लगे हुए हैं। इन में घर के लोगों का पहला स्थान है। इस लिए यह अध्ययन घर से ही आरम्भ होना चाहिए। फिर गाँव और आस-पास के विभिन्न पेशों की बारी आ जायगी। और धीरे धीरे अध्ययन का यह सिलसिला अपने देश और दूसरे देशों तक जा पहुँचेगा।

इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे जैसे-जैसे समाज की आवश्यकताओं और उनको पूरा करने के नियमों से परिचित होते जायें, उनके मन में उन सब लोगों के लिए आदर की भावना पैदा होने चाहिए, जिनकी मेहनत के फलस्वरूप जीवन की सुगमतायें प्राप्त होती हैं।

मातृभाषा और साहित्य :–जैसे सामाजिक विज्ञान बच्चे के मन में नैतिक मूल्यों का अनुभव पैदा कर सकता है, वैसे ही मातृभाषा और साहित्य से नैतिक शिक्षा का काम लिया जा सकता है। मातृभाषा की शिक्षा में बच्चे को ऐसी कहानियां सुनाई जायें और पढ़ने के लिए दी जायँ जिनमें मनुष्य के बड़े-बड़े कारनामों का वर्णन हो। मनुष्य के आचरण के महत्वशाली गुण, जैसे शक्ति और बहादुरी, बच्चे को बहुत अपील करते हैं, इसलिए इस प्रकार की कहानियां चुननी चाहिएँ। इस से बच्चे को निजी आदर्श बनाने में बड़ी मदद मिलेगी कि वह किस प्रकार का मनुष्य बनना चाहता है।

साहित्य से मनुष्य की भावनाओं में पवित्रता पैदा होती है। इस में मनुष्य के हृदय की धड़कन सुनाई देती है और उसकी उमंगों और इच्छाओं का चित्र दिखाई देता है। साहित्य की शिक्षा से यह उद्देश्य पूरा होना चाहिए। बच्चों से राष्ट्रीय साहित्य का अध्ययन इस प्रकार कराना चाहिए कि उस से उन को अपनी संस्कृति की बड़ाई का अनुभव हो। अपनी मातृ-भाषा के साहित्य के अतिरिक्त भारत की दूसरी भाषाओं और संसार की विभिन्न भाषाओं की अच्छी अच्छी साहित्यिक रचनाओं का अध्ययन कराना चाहिए ताकि बच्चे अनुभव कर सकें कि मनुष्य ने कैसे हर जगह अपने ऊँचे विचारों और कोमल भावों से मनुष्यता को आगे बढ़ाया है। इनके अध्ययन से बच्चों को मनुष्य की एकता का अनुभव होना

चाहिए और संसार के भविष्य के बारे में यह विश्वास होना चाहिए कि संसार की कौमें एक दूसरे से मित्रता रख सकती हैं, सुख-शांति से जीवन व्यतीत कर सकती हैं और एक दूसरे की मदद द्वारा हर प्रकार की उन्नति कर सकती हैं।

साधारण विज्ञान :—विज्ञान की शिक्षा भी नैतिक और सामाजिक शिक्षा का एक ज़रूरी भाग समझी जाने लगी है क्यों कि इस के द्वारा ही हम वर्तमान सभ्यता को समझ सकते हैं, जिसकी नींव बड़ी हद तक विज्ञान और उस के प्रयोग पर कायम है और इसकी मदद से हम जल, वायु, बिजली आदि शक्तियों को अपने वस में करके उन से मनुष्य की सेवा का काम लेते हैं।

संसार में जितनी भी भौतिक उन्नति हुई, इस में सब देशों और कौमों का भाग है और उस की उन्नति विशेषज्ञों के सहयोग पर निर्भर है। इसलिये विज्ञान की शिक्षा से बच्चों को मिल-जुल कर काम करने और एक दूसरे की सहायता करने की आवश्यकता का अनुभव कराया जा सकता है। इस के अतिरिक्त विज्ञान की शिक्षा से बच्चों में सचाई की खोज की लगन पैदा की जा सकती है कि विज्ञान ने कैसे मनुष्य को अन्धविश्वास और ढकोंसलों से बचाकर अपनी समस्याओं को बुद्धि द्वारा समझने और सुलझाने की शक्ति दी है, और वैज्ञानिकों ने सचाई की खोज में कैसे-कैसे कष्ट उठाये हैं और कितनी कितनी कुर्बानियां दी हैं। हमारे देश में इस प्रकार की शिक्षा की और भी अधिक आवश्यकता है क्यों कि यहां बहुत लोग भाग्यवादी हैं, कई प्रकार के वहमों में फंसे हुवे हैं और परिवर्तन के लिये प्रयत्न करने में भरोसा नहीं रखते।

गणित :—गणित-जैसे विषय से भी सामाजिक शिक्षा का

काम लिया जा सकता है । इस के द्वारा हम उन सब सामाजिक समस्याओं को समझते हैं जो अंक के रूप में प्रकट की जाती हैं। जैसे कौमी और निजी आय और व्यय, जन-संख्या में कमी-बेशी आदि । खेती-बाड़ी, लेन-देन, व्यापार-उद्योग, वैज्ञानिक खोज और प्रति दिन के काम काज में गणित की आवश्यकता पड़ती है इसलिये इस की शिक्षा एक बड़ी सामाजिक आवश्यकता को पूरा करती है । इस के अतिरिक्त कई नैतिक गुण, जैसे ईमानदारी, सफाई आदि, जो गणित के काम में हर पग पर जरूरी हैं, बच्चों में इस विषय के द्वारा पैदा किये जा सकते हैं।

ललित कला :—कला, संगीत, नाच आदि की शिक्षा हमारे नैतिक जीवन से सीधा सम्बन्ध रखती है। इसके द्वारा हम बच्चों को सुन्दरता और बदसूरती में, अच्छे और भद्दे में, भले और बुरे में पहचान करना सिखा सकते हैं, और उन के ऊँचे और कोमल भावों को उभार सकते हैं। ललित कला द्वारा बच्चों को रहने-सहने का आर्ट भी सिखाया जा सकता है, उदाहरण के लिये स्कूल में भिन्न-भिन्न प्रकार के फूल लगाना और उन्हें फूलदानों में सजाना, त्यौहारों और जलसों के मौके पर स्कूल को सजाना, गांववालों को अपने गीत और कवितायें सुनाना, सदैव खुश-रंग, अच्छे लगने वाले और साफ सुथरे कपड़े पहनना, कमरे में तसवीरों को अच्छे ढंग से लटकाना, अपनी बनाई हुई चीजें, जैसे तसवीरें, सूत, कपड़ा, फूल-फल, रिकार्ड, डायरियां आदि उचित तरीके से रखना ऐसे काम हैं जिन से बच्चों को रहने-सहने का आर्ट सिखाया जा सकता है।

शिल्प या उद्योग:—शिल्प की शिक्षा में सामाजिक और नैतिक शिक्षा के लिये अनगिनत अवसर हैं । सामान का ढंग से प्रयोग

करना और संभाल कर रखना, मिल-जुल कर काम करना, एक दूसरे की मदद करना, अपने अपने स्थान पर बैठना और काम करना, काम से सम्बन्धित जो जिम्मेवारियां, जैसे दस्तकारी की चीजों को बांटना, इकट्ठा करना और क्रम-वार रखना आदि लागू होती हैं, उन्हें पूरा करना। इस प्रकार की अच्छी आदतें शिल्प की शिक्षा द्वारा बच्चों में पैदा की जा सकती हैं जिन का आधार उन सम्बन्धों पर है जो अध्यापक और बच्चों के बीच और बच्चों और बच्चों के बीच काम करते हुये पैदा होते हैं। किसी भी काम के विभिन्न भागों की ओर ध्यान देना और उसमें सफलता प्राप्त करने के लिये हर समय होशियार और सचेत रहना, अपनी जगह एक आवश्यक चीज है, परन्तु शिल्प में तो इसके बिना काम चल ही नहीं सकता आम किताबी तालीम में किसी विषय या उसके एक भाग की तैयारी के सम्बन्ध में मनुष्य को धोखा हो सकता है अर्थात् वह यह समझ सकता है कि उस ने दिया हुआ काम पूरा कर लिया है, चाहे वास्तव में ऐसा नहीं हो। क्योंकि इस काम में अपने आप कोई ऐसी रोक नहीं होती जिस से उस को अपनी कमजोरी का पता लग सके, और वह धोखा खाने से बच जाये। परन्तु शिल्प का काम इससे बिलकुल भिन्न है। उदाहरण के लिये, मेज बनाने में इस प्रकार के धोखे की संभावना नहीं है। इस में यदि चूलें ठीक नहीं बनीं या तख्तों को ठीक ढंग से समतल नहीं किया गया, तो इस का काम करनेवाले को शीघ्र ही पता लग जायगा, क्योंकि इन त्रुटियों के कारण या तो मेज बनेगी ही नहीं और जैसे-तैसे यदि बना भी दी जाय, तो वह बुरी लगेगी, और उसको काम में लाने में रुकावट पड़ेगी।

ऊपर के वर्णन से यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिये कि केवल कहने, सुनने और नैतिक किस्से कहानियां सुनाने और पढ़ाने

से नैतिक शिक्षा नहीं हो सकती। हर चीज़ चाहे मानसिक हो या शारीरिक, नैतिक हो या कलात्मक, केवल अमल और अभ्यास और अनुभव से सीखी जा सकती है। इस लिये नैतिक शिक्षा के लिये अधिक से अधिक तजर्बे की आवश्यकता है। इस लिये नैतिक शिक्षा के लिये अधिक से अधिक अवसर देने चाहियें। स्कूल में एक अच्छे वातावरण, एक अच्छे सामूहिक जीवन की व्यवस्था करनी चाहिये जिस में अधिकारों और कर्तव्यों का नियम विभाजन हो, जिसे बच्चे खुशी-खुशी स्वीकार करें और सामूहिक जीवन को सफल बनाने के लिये अपने कर्तव्यों को शौक और मेहनत से पूरा करें और अपने अधिकारों से उचित लाभ प्राप्त करें। इस प्रकार वे एक क्रियात्मिक जीवन द्वारा महत्वशाली नैतिक सिद्धान्त सीखेंगे। स्कूल के सामाजिक जीवन की व्यवस्था इस प्रकार करनी चाहिये कि बच्चे *क्रियात्मक रूप में उन अनुभवों को प्राप्त करें जिन पर नैतिकता का* आधार है, और उनके पढ़ने, लिखने, खेलने, कूदने के सारे कार्य-कलापों में पारस्परिक सहायता और सहयोग का वही नियम व्यवहार में लाया जाय जिस के ऊपर सामाजिक जीवन कायम है।

बच्चों की सौन्दर्य-सम्बन्धी शिक्षा:—पुरानी तालीम में जिस चीज़ की ओर शायद सब से कम ध्यान दिया जाता था, वह थी सौन्दर्य-संबधी शिक्षा। अनपढ़ और कम पढ़े-लिखे लोगों का तो कहना ही क्या, अच्छे पढ़े-लिखे लोगों में भी बहुत कम लोग ऐसे है जिन्हें सुन्दरता का ठीक भान हो, जो सुन्दर और भद्दी चीज़ों में पहचान कर सकते हों, जो अपने घर और जीवन में काम आने वाली चीज़ों का चुनाव करते समय सुन्दरता का ध्यान रखते हों। इस लिये बेसिक शिक्षा में कला पर ज़ोर दिया गया है, ताकि आने

वाली पीढ़ी की शिक्षा में सौन्दर्य-संबंधी विषयों को ठीक स्थान दिया जा सके।

बेसिक शिक्षा-प्रणाली में कला, संगीत और नाच आदि की शिक्षा का वर्णन करते हुए बताया गया है कि—

1. बच्चों को शक्लों और रंगों को पहचानने और उनमें अंतर जानने का अभ्यास कराया जाय।

2. बच्चों में शक्लों को याद रखने और उन्हें रंग और रेखा द्वारा प्रकट करने की योग्यता पैदा की जाये।

3. बच्चों को प्रकृति की सुन्दर वस्तुओं और कला के नमूनों को समझने और उनके सराहने के योग्य बनाया जाय।

4. बच्चों में घर और स्कूल को सजाने का सलीका पैदा किया जाय।

5. बच्चों को अभ्यास कराया जाय कि वे दस्तकारी में बनाई जानेवाली चीज़ों का नक्शा सोचें और फिर उसके अनुसार उस चीज़ को बनायें। जैसे कपड़ा या दरी बुनने या मेज़ बनाने से पहले इसका डिज़ायन कागज़ पर बना लें।

6. बच्चों को कुछ अच्छे गाने याद हो जायें और उन्हें अच्छे गाने की पहचान हो जाय। बच्चों में स्वर और ताल का जो शौक होता है, उसे उन्नत करने के लिये उन को दोनों हाथों के साथ गीत के साथ-साथ ताली बजाना सिखाया जाय। इकट्ठे मिलकर गाने पर विशेष ज़ोर दिया जाय और कदम मिला कर एक विशेष ताल से चलने का अभ्यास कराया जाय। बच्चों के लिये कवितायें और गीत बड़े ध्यान से चुने जायें और उनमें कौमी गीत, लोक-गीत और मौसमी गीत शामिल हों। कुछ गीत ऐसे भी होने चाहियें जो

दस्तकारी और शारीरिक शिक्षा के साथ-साथ गाये जा सकें।

कला की महत्ता:—प्रायः लोग अपने विचारों और भावनाओं को प्रकट करने के लिये बोली या कलम का सहारा लेते हैं, मुद्रा से काम लेनेवाले बहुत कम लोग हैं, इस लिये कि अधिकतर लोग मुद्रा का प्रयोग नहीं जानते। परन्तु मनुष्य को कला की भी उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि भाषा की। कभी कभी भाषा मन की बात को उतनी अच्छी तरह प्रकट नहीं कर सकती जिस खूबी और सफलता से उसे कला द्वारा प्रकट किया जा सकता है। इसलिये बच्चे की शिक्षा में कला को अपनी आत्म-अभिव्यक्ति का एक साधन समझ कर स्थान देना चाहिये। स्पष्ट है कि यह उद्देश्य दूसरों की नकल करके प्राप्त नहीं हो सकता, जो प्रायः कला की शिक्षामें विधि के रूप में प्रचलित है।

कला की शिक्षा कब आरम्भ की जाए ?—सौन्दर्य का भाव पैदा करने के लिये किसी विशेष समय का इंतजार करना व्यर्थ है। बच्चा जब किसी साथी को अच्छे वस्त्र पहने देखता है और चाहता है कि वह भी वैसे ही कपड़े पहने, जब वह सुन्दर और रंग-बिरंगे फूलों की क्यारियों को देखता है और प्रसन्नता से नाचने लगता है, जब रंगीन और सुन्दर चित्र या खिलौने को देख कर उसका चेहरा खिल जाता है, जब वह घर या स्कूल में कोई चीज बेढंगी तरह पड़ी देखता है और उसको ठीक तरह रखने की कोशिश करता है, तो समझना चाहिए कि उस में सौन्दर्य का भाव पैदा हो रहा है। यदि बच्चे को उस चीज से प्रसन्नता प्राप्त हो जो साफ सुथरी और सुन्दर है और उस चीज से तकलीफ हो जो गंदी-मन्दी और बुरी है तो हम कहेंगे कि उस में सौन्दर्य को परखने की योग्यता पैदा हो गई है।

यह योग्यता केवल कला और संगीत की शिक्षा से पैदा नहीं की जा सकती; इस के लिए बच्चे के सारे जीवन को संवारने की आवश्यकता है।

कला के काम की मंजिलें:—यह नहीं समझना चाहिये कि बच्चा आरम्भ से ही अपने विचारों को साफ़ तौर पर रेखा और रंग द्वारा प्रकट कर सकता है या यह कि आर्ट की नियमानुसार शिक्षा स्कूल में प्रवेश करने के दिन से ही आरम्भ की जा सकती है। बच्चे को इस काम में तीन मंजिलों से गुज़रना पड़ता है। पहली मंजिल पर बच्चा कला की सामग्री को केवल प्रयोग करके देखना चाहता है कि यह क्या चीज़ है और उस से वह क्या कुछ कर सकता है उस का उद्देश्य किसी विचार को प्रकट करना नहीं होता। बच्चे को रंग और कागज़ देकर देखिये कि वह क्या करता है। वह कागज पर सीधी-टेढ़ी रेखायें खींचेगा। इस से उसका उद्देश्य विचार प्रकट करना नहीं, अपितु वह ऐसा केवल इस लिए करता है कि वह इस तरह पता लगाना चाहता है कि यह क्या चीज़ है और इस से इस को ख़ुशी प्राप्त होती है। जब वह इस क्रिया को कुछ समय करता रहता है तो उसका मन भर जाता है और उसको सीधी-टेढ़ी रेखायें खींचने से संतोष नहीं होता। अब वह अपने किसी विचार को रेखा और रंग द्वारा प्रकट करने की कोशिश करता है। परन्तु यहाँ भी उस का उद्देश्य यह नहीं होता कि दूसरे उसके विचार को समझें, वह दूसरों तक अपना विचार पहुँचाये। उसको केवल इतनी-सी बात से संतोष हो जाता है कि उसने अपने विचार को प्रकट कर दिया है। उसके लिये यह ज़रूरी नहीं कि दूसरे भी समझ सकें कि उस ने अपनी तस्वीर में क्या दिखाने का यत्न किया है। यह कला

के काम की दूसरी मंजिल है, जिसमें बच्चा चिन्हों और संकेतों द्वारा किसी विचार को प्रकट करना चाहता है। अपनी बनाई हुई तस्वीर का अर्थ वह आप तो समझता है, परन्तु दूसरे उसे मुश्किल से ही समझ सकते हैं।

यदि किसी को बच्चे से दिलचस्पी हो और वह पूछे तो बच्चा बताने का यत्न करता है कि उसने अपनी तस्वीर में क्या चीज़ बनाई है। संकेत की मंज़िल की तस्वीरें प्राय बड़ों को हास्यास्पद ही लगती हैं। न उनमें समानुपात होता है और न शुद्धि। हो सकता है कि तस्वीर में मनुष्य को केवल पांच-छः रेखाओं से दिखाया गया हो और उसके हाथ उसके कद के बराबर हों, उसकी आंखें कानों से मिली हुई हों, उसका सिर उसके डील-डौल से बहुत बड़ा दिखाया गया हो। देखने में यह तस्वीर भोंडी और व्यर्थ लगती है। परन्तु हो सकता है कि इन दोषों के होते हुये भी बच्चा अपने विचार प्रकट करने में सफल हो गया हो। बच्चे को इस मंज़िल पर इस बात की चिंता नहीं होती कि दूसरे उस की बनाई हुई तस्वीर में वह ही चीज़ पायेंगे या नहीं, जिस को उसने प्रकट किया है। यदि वह अपनी इस भद्दी और भोंडी तस्वीर से संतुष्ट है तो इसे काफी समझना चाहिये। संकेत की मंज़िल से बच्चा धीरे-धीरे उस मंज़िल में पांव रखता है, जहां वह अपने विचारों को उनके वास्तविक रंग-रूप में दिखाना चाहता है और उनको संकेत के रूप में प्रकट कर के उसे संतोष नहीं होता। वह अपने विचारों को तस्वीर द्वारा दूसरों तक पहुँचाना चाहता है। अब उसकी इच्छा होती है कि लोग उसकी तस्वीर को समझें। इस मंज़िल पर वह ठीक तस्वीर बनाने में अध्यापक की मदद खुशी से लेना चाहता है। इसलिये यहां अध्यापक को चाहिये कि वह बच्चे को उसकी बनाई हुई तस्वीर

की त्रुटियों से परिचित कराये और ठीक ढंग बताये, उसको धीरे धीरे संकेत की मंज़िल से वास्तविकता की ओर ले जाये और नमूने की नकल कराने की जगह उसको अपने आप उन चीज़ों की तस्वीर बनाने दे जो उसके अनुभव और निरीक्षण में प्रायः आती रहती हैं।

दैनिक उद्योग, बागबानी और दूसरी सामाजिक और मनोरञ्जक क्रियाओं में बच्चा रोज़ाना नई चीज़ें देखता और तजरबे करता है। कला की शिक्षा में इनसे पूरा-पूरा लाभ प्राप्त करना चाहिये। बच्चा जो कुछ बनाये, उस को सहानुभूति से देखना चाहिये। आरम्भ में उसकी कुछ भूलों की उपेक्षा की जा सकती है। उदाहरण के लिये, बच्चा यह बात मुश्किल से समझता है कि मकान की तस्वीर में उस का एक पक्ष, जिस पर सूर्य का प्रकाश पड़ता है, प्रकाशमय और दूसरा पक्ष, जो छाया में रहता है, प्रकाशहीन दिखाना चाहिये। इस प्रकार की बारीकियों पर शुरू से ही ज़ोर देने से डर है कि कहीं बच्चे में झिझक पैदा न हो जाय और फिर वह आज़ादी और खुशी से तस्वीर न बनाये। इसलिये इस मंज़िल पर बच्चे को केवल उन मोटी-मोटी बातों का ध्यान दिलाइये जिनको वह सुगमता से समझ सकता है और जिन पर वह अमल कर सकता है।

शिक्षण-विधि:——सीखने और सिखाने की पहली शर्त तैयारी है। यदि आप स्कूल और बस्ती में आर्ट के लिये उचित वातावरण पैदा कर सकें, उन अवसरों से काम ले सकें जो बच्चों के दैनिक जीवन में पेश आते हैं तो न केवल बच्चों को आर्ट सीखने के लिये तैयार करने में मदद मिलेगी, बल्कि वे उसको आसानी से सीख

लेंगे। कक्षा में अच्छी-अच्छी तस्वीरें इकट्ठी करके, पत्थर की खुदाई और बुतकारी, पच्चीकारी के नमूने दिखाकर, मिट्टी की सुन्दर चीज़ें और उद्योग के अच्छे-अच्छे नमूने पेश करके, सुन्दर और देखने योग्य स्थानों की सैर कराके आप बच्चों के दिल में कला का शौक पैदा कर सकते हैं। परन्तु यह तब ही हो सकता है जब आप को खुद भी कला की रसिकता हो और कला की चीजों से सच्चा आनंद प्राप्त हो। कक्षा में जानवरों, पक्षियों, बच्चों, प्राकृतिक दृश्यों और भिन्न-भिन्न मानवीय कार्य-कलापों की बड़ी-बड़ी रंगीन तस्वीरें लगाइये, कभी कभी उन तस्वीरों या कला के दूसरे नमूनों के बारे में, जो कक्षा में मौजूद हों, बच्चों से बातचीत कीजिये और उनको बताइये कि इन में क्या सुन्दरता है। इस प्रकार की अनौपचारिक बातचीत से धीरे-धीरे बच्चों में सौन्दर्य का अनुभव पैदा होगा और वे आप भी सुन्दर चीजें बनाने का शौक प्रकट करेंगे।

बच्चों में इस प्रकार जो रुचि पैदा की जाय, उसे प्रयोग करने के लिये अवसर तलाश करने चाहियें। पढ़ाई-लिखाई में, शिल्प और प्राकृतिक अध्ययन के काम में, खेल-कूद और नाच-संगीत में, ड्रामा करने और त्यौहार मनाने में और इसी तरह स्कूल से बाहर घर, बाजार और दुकान आदि के दृश्यों और घटनाओं में कला-शिक्षा की बड़ी संभावनायें हैं।

कला-शिक्षा में नियमों और सिद्धांतों का स्थान :— लेख-रचना की तरह आर्ट में भी शुरू में इस बात पर ज़ोर देना चाहिये कि किस चीज़ को प्रकट किया गया है, न कि कैसे प्रकट किया गया है। परन्तु धीरे-धीरे बच्चे को कला के नियम और ढंग भी सिखाने चाहियें। एक मंज़िल पर पहुँच कर बच्चा आप अपनी बनाई हुई चीज़ से संतुष्ट नहीं होता, इसलिये कि ठीक ढंग न

जानने के कारण यह भद्दी और बुरी लगती है। जैसे बच्चे के आवश्यकता अनुभव कराये बिना कला के नियम बताना बच्चे के विकास में रुकावट डालता है, उसी प्रकार उस समय नियम सिखाना हानिकार है जबकि बच्चा सीखने के लिये तैयार हो आरम्भ में बच्चे को रंग देकर इस प्रकार का उपदेश करना कि नीले रंग से आकाश बनाओ और हरे से घास और दूसरे रंगों को हाथ न लगाओ, उसकी उपज को रोकना है। इसलिये शुरू में उसे आज़ादी से रंगों का प्रयोग करने देना चाहिये। परन्तु कुछ समय तक अपनी इच्छानुसार रंगों के प्रयोग के बाद यदि बच्चा इस नियम को अपने आप समझे कि किसी तस्वीर को बनाने में उसके प्राकृतिक रंग का ध्यान रखना चाहिये, तो फिर उसे उस नियम से परिचित कराना आवश्यक होगा।

जब आर्ट के नियम और सिद्धांत सिखाने का समय आ जाय तो इस का तरीका यह होना चाहिये कि अध्यापक किसी तस्वीर को स्वयं बोर्ड पर बना कर बच्चों का ध्यान नियम की ओर दिलाये और फिर उसको दूसरी ओर पलट कर बच्चों से वही तस्वीर बनवाये और अन्त में अपनी बनाई हुई तस्वीर से उनकी तस्वीर की तुलना कराये। यहां इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बच्चे अपनी कल्पना और स्मरण-शक्ति से काम लेकर तस्वीर बनायें, अध्यापक की तस्वीर की नकल न करें।

कला और ड्राइंग के काम में उस चीज़ को ध्यान से देखने पर ज़ोर देना चाहिये जिस की तस्वीर बच्चा बनाना चाहता है। जैसे, यदि बच्चे तकली, चर्खे, बैंगन, टमाटर आदि की तस्वीर बनाते हैं तो पहले उनका निरीक्षण करना चाहिये कि उन के कौन-कौन से भाग हैं और उनका आपस में क्या संबंध है, भिन्न-भिन्न भागों

के साइज़ में क्या अनुपात है अर्थात् एक भाग दूसरे से कितन
बड़ा या छोटा है। इस चीज़ को मापने के बिना केवल देख क
अटकल से मालूम करना चाहिये।

कई अध्यापक इस बात पर ज़ोर देते हैं कि बच्चा तस्वी
बनाने से पहले निश्चय करले कि वह तस्वीर में क्या-क्या दिखान
चाहता है और फिर उसको बनाना आरम्भ करे। परन्तु यह ठी
नहीं है। कभी-कभी बच्चा एक विचार को सामने रख कर तस्वी
बनाना शुरू करता है, पर जैसे-जैसे वह इस विचार को तस्वीर द्वा
प्रकट करता जाता है, उसके विचार में परिवर्तन और विस्तार पै
होता जाता है, कुछ और चीज़ें उसके मन में आजाती हैं जि
वह अपनी तस्वीर में स्थान देना चाहता है। इस तरह उसकी तस्वी
अन्त में उस तस्वीर से बहुत भिन्न होती है जिसे वह शुरू में बना
चाहता था। इसलिये यदि इस बात पर ज़ोर दिया जाय कि तस्वी
खैंचने से पहले उस के सांगोपांग स्वरूप का निश्चय कर लिया जा
तो भय है कि बच्चे की कल्पना सीमित हो कर रह जायगी।

शुरू में बच्चों की अंगुलियों के पट्ठे इतने कोमल होते हैं
उनके लिये पैन्सिल से काम करना हानिकारक है। बच्चा खड़ि
मिट्टी, चाक या कोयले का टुकड़ा सुगमता से पकड़ सकता है औ
उस से आज़ादी के साथ मोटा-मोटा ड्राइंग का काम कर सकता
और जैसे-जैसे उसको हाथ और बाज़ू के पट्ठों पर काबू होता जा
है, वह ड्राइंग का बारीक काम करने के योग्य होता जाता है औ
किसी चीज़ के प्रत्येक अंग और उपाङ्ग उस तस्वीर में दिखाने
यत्न करता है, जैसे पंखों के सुन्दर विचित्र चिह्न, पत्तों का रंग, रस्
की गांठ के बल आदि।

विचारों की सफ़ाई और हाथ पर काबू प्राप्त होने के सा

साथ बच्चा ठोस चीज़ों की पेचीदगियों को समझने और उनकी ठीक तस्वीर बनाने की ओर झुकता है। यहां केवल किसी चीज़ का आकार-प्रकार ही महत्वशाली नहीं होता अपितु उसको हर पक्ष से समझने और देखने की आवश्यकता होती है। इस तरह ड्राइंग का संबंध पाठ्‌क्रम के अन्य विषयों से भी हो जाता है। उदाहरण के लिये, किसी जीव-जंतु की तस्वीर बनाने के लिये बच्चे को यह जानना चाहिये कि यह किस प्रकार का जानवर है, कहां रहता है और कैसे उसके रंग-रूप पर उसके वातावरण का क्या प्रभाव पड़ा है। जैसे, गर्दन लम्बी क्यों है ? उसके खुर, अंगूठे या पंजे क्यों हैं ? आदि। यदि कोई चीज़ मनुष्य की बनाई हुई है तो प्रश्न होता है कि यह किस काम के लिये है ? यह कैसे बनी और किसने बनाई है ? उसकी ऐसी शक्ल क्यों है ? उसका मुंह, पाये या दस्ते इस प्रकार क्यों बनाये गये हैं ? आदि। इस तरह ड्राइंग के पाठ को शिल्प, साधारण विज्ञान, सामाजिक शिक्षा या मातृभाषा के पाठों से संबंधित किया जा सकता है।

काम के समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बच्चों में कोई बुरी या हानिकारक आदत पैदा न हो। उन्हें ठीक तरह बैठने का विशेष रूप से उपदेश देना चाहिये कि वे शरीर को सीधा रखें ताकि पीठ में झुकाव और कमर में तिरछापन पैदा न हो और ड्राइंग करते समय पूरी भुजाओं से काम लें ताकि अंगुलियों के कोमल पट्ठों पर अधिक दबाव न पड़े। ब्रुश या खड़िया अंगूठे और पहली अंगुली के बीच हल्के से पकड़ें, अंगुलियों के पट्ठों को अधिक ज़ोर से न दबाएँ। ड्राइंग बोर्ड की ऊंचाई बच्चे की आंख के समतल होनी चाहिये और रोशनी बाईं ओर से आनी चाहिये। तस्वीर बनाते समय लिबास और फर्श की सफाई का ध्यान रखना

भी जरूरी है। खयाल रखिये कि बच्चा रंग से कपड़ों और फर्श को बचाकर रखे।

काम के समय यदि फर्श पर रद्दी कागज बिछा दिया जाय तो फर्श सुरक्षित रहता है। तस्वीर में रंग भरते हुये इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बच्चे ब्रुश को रंगदान के किनारों पर निचोड़ लें ताकि तस्वीर पर रंग बिना आवश्यकता के इधर-उधर बहता न रहे।

कला का काम:—कला के काम के अलग-अलग रूप हैं। इन में से कुछ का वर्णन नीचे किया जा रहा है जिन्हें बेसिक स्कूल में अपनाया जा सकता है।

उतारा लेना, काटना और चिपकाना:—रंगीन कागज पर भिन्न-भिन्न चीजों, जैसे वृक्ष के पत्तों, फलों और फूलों की आकृतियों को नकल किया जाय। यह नकल हाथ की बनाई हुई या छपी हुई तस्वीरों की मदद से की जा सकती है। इस के उपरांत उन्हें कैंची से काट कर किसी सफ़ेद कागज पर चिपकाना चाहिये।

केवल रेखाओं द्वारा विचारों को प्रकट करना (Stick *figures*):—मनुष्य की तस्वीर केवल कुछ रेखाओं द्वारा बनाई जा सकती है और उसकी भिन्न-भिन्न गतियों को प्रभावशाली ढंग से प्रकट किया जा सकता है। इसी तरह अण्डाकार और गोल शक्लें चिड़ियों और जानवरों की ड्राइंग करने में नींव का काम देती हैं। विशेष करके छोटी कहानियों को इस ढंग से प्रकट करना मनोरंजक होता है। अध्यापक कुछ चीजें तख्ते पर बना कर दिखाये और बच्चों को कहे कि वे अपनी मन-भाती कोई कहानी या क्रिया रेखाओं के द्वारा प्रकट करें।

तस्वीरें बनाना:—कई बच्चे अपने दैनिक प्रयोग की चीजों

या प्राकृतिक दृश्यों की बड़ी रुचि से तस्वीरों में प्रकट करते हैं। बच्चों की बनाई हुई तस्वीर में यदि कोई कमी रह जाय तो अध्यापक को चाहिये कि वह उसी किस्म की कोई अच्छी-सी तस्वीर पेश करे और बच्चों की तस्वीर की उस से तुलना कराये। इस तरह बच्चों को अपनी गलती का पता लग जायगा और वे इसको ठीक करने की कोशिश करेंगे।

पोस्टर तैयार करना:—बच्चे पोस्टर के लिये कोई विषय अगर चुनें, तो अच्छा है। जैसे स्वास्थ्य और सफ़ाई-संबंधी पोस्टर बनायें या अपने ड्रामे का विज्ञापन तैयार करें। एक बड़े तख्ते पर कागज़ चिपका दिया जाय और पूरा होने पर उसको श्रेणी या स्कूल को सजाने के काम में लाया जाय।

डिज़ाईन बनाना:—यह बच्चों के लिये मनोरंजक कार्य है। डिज़ाइन में सफलता की निर्भरता इस बात पर है कि बनानेवाले को आकृति, रूप और रंग का कितना अनुभव है और इनको व्यक्त करने में वह कहां तक उपज और मौलिकता से काम ले सकता है। डिज़ाइन में जो बात सब से अधिक अपील करती है वह है उसका "अछूतापन"। इस में किसी शक्ल को एक विशेष क्रम में बार-बार दुहराया जाता है डिजाइन बनाने के अभ्यास का मौका यह है कि बच्चों से कहानियां, मजमून, चुटकले, पहेलियां आदि अलग-अलग किताबों के रूपमें लिखवाइये और उनके टाईटल पेज पर डिजाइन बनवाइये या स्कूल या श्रेणी की हस्तलिखित पत्रिका का कवर तैयार करवाइये जिस पर कोई सुन्दर डिजाइन हो। शुरू में बिन्दु, रेखा, वर्ग, त्रिभुज वृत्त अण्डाकार शक्लों में दो तीन को भिन्न भिन्न क्रम से दुहरा कर नये डिजाइन बनाये जा सकते हैं। बाद में किसी फूल, पत्ती पक्षी, जानवर आदि की शक्लें डिज़ाइन बनाने में प्रयोग की ज

सकती हैं। डिज़ाइन का काम पोस्टर बनाने में भी कराया जा सकता है।

कला के लिये सामानः—प्रायः यह प्रसिद्ध है कि कला के काम में बहुत खर्च होता है इसलिए वह गांव के स्कूल के बस से बाहर है। परन्तु यह ठीक नहीं। जहां तक हो सके, हमें अपनी कला में ऐसी चीजों का प्रयोग करना चाहिये जो हमारे चारों ओर प्राकृतिक ढंग से मौजूद हैं, और जो आसानी से प्राप्त की जा सकती है। यदि कीमती मसाले और सामान की मदद से सुन्दर चीजें बना ली भी जायें तो कोई प्रशंसा योग्य बात नहीं। परन्तु सादे मसाले से कला के सुन्दर नमूने तैयार करना निस्सन्देह बड़ी बात है। इस में कल्पना, उपज, समझ-बूझ और विशेष ज्ञान की आवश्यकता है। परन्तु इस का भाव यह नहीं कि यदि अच्छा मसाला मिल सकता हो तो भी उसे प्रयोग में नहीं लाना चाहिये। कीमती चीजों का प्रयोग भी होना चाहिये परन्तु विशेष अवसरों पर और आवश्यकता के समय। चूंकि गांव के स्कूल में ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं और वहां आर्थिक कठिनाइयों के कारण कीमती चीजें नहीं मिल सकतीं, इसलिये वहां केवल ऐसे मसालों का वर्णन किया जायगा जो आसानी से ही थोड़े पैसे खर्च करने से तैयार हो सकते हैं।

शुरू में ड्राइंग के काम के लिये यदि कक्षा में काफ़ी संख्या में तख्ते हों और उन्हें इतना ऊंचा लगाया जा सके कि बच्चे आसानी से उन पर काम कर सकें, तो बहुत ही अच्छा है। परन्तु प्रायः गांव के स्कूलों में यह सहूलतें भी प्राप्त नहीं हैं, ऐसी हालत में कमरे के फ़र्श से काम लेना चाहिये। यदि फ़र्श कच्चा हो तो उसे समतल करके उस पर खड़िया मिट्टी या कोयले से तस्वीर बनाई जा सकती है या रेत की मोटी-सी तह जमा कर उस पर लकड़ी की नोक से शक्लें

बनाई जा सकती हैं। रेत पर यदि थोड़ा-सा पानी छिड़क लिया जाये तो उससे खिलौने और नमूने भी बनाये जा सकते हैं। दीवार का कुछ भाग भी बोर्ड का काम दे सकता है। भूमि या फ़र्श पर तस्वीर बनाने के लिये निम्नलिखित रंगीन मसाले काम में लाये जा सकते हैं:—

सफेद—चावल का आटा।

पीला—पिसी हुई हल्दी में थोड़ा-सा चावल का आटा मिला दिया जाय।

काला—कोयले को पीस लिया जाय।

लाल—गेरू के चूर्ण में थोड़ा-सा चावल का आटा मिला दिया जाय।

इसी प्रकार से अन्य चीज़ों से और तरह के रंग तैयार किये जा सकते हैं। जिन इलाक़ों में पत्थर के रंग आसानी से मिल जाते हैं, उन्हें बारीक पीस कर या घिस कर और छान कर प्रयोग किया जा सकता है। कई स्थानों पर कई रंगों की मिट्टी मिलती है, जैसे पाण्डु और पीला आदि। उसे भी फ़र्श या तख्तों पर मामूली तस्वीर बनाने के काम में लाया जा सकता है। यह बात याद रखनी चाहिये कि रंगों को बहुत पतला न किया जाय; ये इतने गाढ़े रखे जायें कि आसानी से प्रयोग किये जा सकें।

बच्चों से काले तख्ते पर अभ्यास कराना बहुत लाभदायक है। यदि कक्षा में एक काला तख्ता हो तो उसे बच्चे बारी-बारी प्रयोग में लायें। काले तख्ते पर काम खड़े हो कर करना चाहिये। शक्ल बनाते समय पूरी भुजा बिलकुल सीधी, शरीर और बोर्ड के साथ समकोण बनाती हुई रखनी चाहिये, हाथ को कंधे से घुमाना चाहिये, कुहनी

से नहीं। गांव में स्त्रियां त्यौहारों के अवसर पर जो रंगीन शक्लें रंगोली, अलपना आदि बनाती हैं, वे भी बच्चों को सिखानी चाहियें।

ड्राइंग सिखाने का एक सरल ढंग यह है कि एक बांस के एक सिरे को कुछ लम्बा चीर लीजिये। यह सिरा छोटी-मोटी चीज को पकड़ने के लिये चिमटे का काम देगा। निचला सिरा गीली मिट्टी में गाड़ दीजिये और बांस को एक लैम्प (अथवा कोई अन्य रोशनी) और एक कागज के बीचमें ऐसे रखिये कि चीज की छाया कागज पर पड़े। लैम्प को आगे या पीछे करने से छाया का आकार छोटा-बड़ा किया जा सकता है। माडल ड्राइंग (नमूने के अनुसार शक्ल बनाना) सिखाने के लिये आप बांस की खपचियों या कागज या गत्ते से कुछ नमूने बना लीजिये; जैसे वृक्ष, एक दूसरे को छूते हुये दो वृक्ष, पिरामिड या गाजर के आकार की आकृति या खेलने की शक्ल आदि। इन सब शक्लों से छाया ऊपर बताये हुये ढंगों से कागज पर डालिये और बच्चों से उनकी तस्वीर बनवाइये। कला के काम में बच्चों से कुछ मिट्टी के नमूने भी बनवाइये। इसके लिये नर्म और चिकनी मिट्टी अच्छी रहेगी। मिट्टी को गीला रखने के लिये उसको एक गढ़े में ढक कर रखना चाहिये।

लकड़ी की तख्ती को चिकना करके उस पर भी खड़िया मिट्टी या ब्रुश से तस्वीर बनाई जा सकती है। यदि ब्रुश न मिल सके या ब्रुश के योग्य बारीक काम न हो, तो लकड़ी के एक सिरे पर रूई लपेट कर काम लिया जा सकता है। शुरू में ऊँट के बालों वाला चौड़ा ब्रुश प्रयोग कराना चाहिये, ताकि बच्चों को तस्वीर बनाने में बहुत समय न लगे। कागज की जगह अखबारी कागज का

में लाना चाहिये। इस को दीवार या काले तख्ते पर चिपका कर ब्रुश और रंग से इस पर तस्वीर बनानी चाहिए। यह कागज़ सस्ता होता है यद्यपि बढ़िया नहीं होता। परन्तु इसमें कोई हर्ज नहीं है, क्योंकि नौसिखिये को अधिक बढ़िया कागज नहीं चाहिये, उसे तो बहुत-सा कागज़ चाहिए। किसी प्रकार का ब्रुश न मिलने की दशा में आप खजूर या नीम का ब्रुश तैयार करवा सकते हैं और उससे तख्ती पर तस्वीर बनवा सकते हैं। खजूर या नीम का ब्रुश बनाने के लिए यह करना चाहिए कि वृक्ष से छोटी और बारीक हरी टहनी को काट लीजिए और उसके एक सिरे को इस प्रकार कूटिये कि उसके बारीक रेशे अलग-अलग हो जायें। मामूली काम के लिए इस तरह का ब्रुश चालू है। काम समाप्त करने के बाद ब्रुश को भली प्रकार धोकर सुखा लेना चाहिए।

जहाँ तक हो सके, बच्चों को कला के काम में रबड़ का प्रयोग नहीं करने देना चाहिए। ड्राइंग में रबड़ का बार-बार प्रयोग सीखने वाले के अन्दर कमजोरी और मोहताजी-सी पैदा कर देता है। वह न तो ठीक तरह सोच सकता है और न ही ठीक काम कर सकता है। यदि शुरू में बच्चे से काले तख्ते या स्लेट पर ड्राइंग कराई जाय तो रबड़ का प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं रहेगी। कागज पर ड्राइंग बनाने के लिए सदैव नर्म पैन्सिल प्रयोग करनी चाहिए। पैन्सिल को बीच से हलके हाथ से पकड़ना चाहिए। जब तक शक्ल ठीक न बन जाए, उस समय तक रेखायें हलकी रखनी चाहिए, और शक्ल ठीक बन जाने के बाद उन्हें गहरा कर देना चाहिएं। ऐसा करने से रबड़ की कम आवश्यकता पड़ेगी। स्लेट भी बड़े काम की चीज़ है, परन्तु इस पर सफेद पैन्सिल या खड़िया

मिट्टी से काम नहीं करना चाहिए क्योंकि इस से आंखों पर बड़ा ज़ोर पड़ता है। स्लेट पर रंगीन पैन्सिल का प्रयोग करना चाहिए। बैठ कर काम करने के लिए ढालवां डैस्क से सुविधा होती है। जहां तक हो सके, बैठ कर काम करते समय पीठ बिलकुल सीधी रखनी चाहिए।

पैस्टल रंग (रंगीन पैन्सिल) का भी आर्ट के काम में प्रयोग किया जाता है। इस से प्रायः गत्ते, या काले या खाकी मोटे कागज़ पर तस्वीर बनाई जाती है। ड्राईंग के विशेष विशेष भागों को पहले हलके हाथ से रंग देना चाहिए। फिर इन रंगे हुए भागों पर दूसरे रंगों से बारीक काम करना चाहिये। यदि गहरे रंग तस्वीर में दिखाने हों तो पहले सफ़ेद रंग से सतह तैयार कर लेनी चाहिए और फिर दूसरे रंग लगाने चाहिएँ। कुछ लोग रंग लगा कर उसे अंगुली या कपड़े से घिस देते हैं। परन्तु इस तरह रंग भद्दा हो जाता है। जब तक अधिक आवश्यकता न हो, रंग को इस तरह घिसना नहीं चाहिए।

आरम्भ में बच्चों को आर्ट सिखाने के लिए और भी कुछ सामान की आवश्यकता होती है, जैसे—कागज़ (सादा और रंगीन) और कागज़ काटने की कैंची। बच्चों को अपनी पसंद से कागज़ की विभिन्न शक्लें, जैसे फूल पत्तियां मेज़ आदि काटने दीजिए। बच्चों को भिन्न भिन्न प्रकार की शक्लों से परिचित कराने के लिए रंगीन बीज (जैसे :— इमली, शरीफ़ा आदि के बीज), दालें, पत्थर के टुकड़े आदि एक विशेष क्रम से रख कर कई प्रकार की शक्लें बनाई जा सकती हैं। पहले आप अपने हाथ से शक्लों के खाके खींच दीजिए और फिर बच्चों से इन खाकों में बीज या दूसरी चीज़ें रखवाए।

(4) सौन्दर्य पैदा करने का अभ्यास करना।

(5) समानता के सिद्धान्त का प्रयोग करना।

(6) रंग-मेल करना।

1. शक्लें पहचानना और बनाना :—चित्रकारी में शक्ल या तो छाया की तरह चपटी होती है या ठोस अर्थात् तीन दिशाओं वाली होती है। यदि कागज़ पर (जो कि समतल होता है) घन की शक्ल अलग-अलग दिशाओं से खींची जा सकती है तो घन जैसी अन्य शक्लें या घन से बननेवाली शक्लें भी खींची जा सकती हैं।

ठोस शक्लों के नमूनों में घन, गोला, अण्डा, बेलन, संतरा और बादाम की शक्लें और समतल शक्लों में वर्ग, त्रिभुज, वृत्त आदि की शक्लें शामिल की जा सकती हैं। दूसरी शक्लें पहली प्रकार की शक्लों की छाया से बनती हैं।

अध्यापक को चाहिये कि इनमें से किसी शक्ल को मन में रख कर बच्चों को कहे कि वे इस से मिलती-जुलती किसी प्राकृतिक या बनावटी चीज़ की शक्ल बनायें। उदाहरण के लिये, यदि अध्यापक ने किसी छः कोनोंवाली चीज़ की कल्पना की है तो उसे मकान की शक्ल बनानी चाहिये। यदि बच्चों से दो अलग-अलग शक्लों की चीज़ें बनवाई जायें, तो अच्छा है। क्योंकि इस प्रकार वे दोनों की तुलना करके उनका अन्तर ज्ञात कर सकेंगे। परन्तु ऐसी तस्वीरें केवल बड़ी कक्षाओं के बच्चों से बनवानी चाहियें। छोटे बच्चों को इन निर्जीव चीज़ों में कोई दिलचस्पी नहीं होती। इन चीज़ों के नमूने गीली मिट्टी से भी बनाने चाहियें।

चपटी शक्ल की ड्राइंग के लिये पेंसिल, चाक, क्रेयन, मोम, रंग, स्याही आदि के रंग उपयुक्त हैं। बच्चों से इस प्रकार के रंग

इकट्ठे कराने चाहिये और उनकी तस्वीरें बनवानी चाहियें।

किसी चीज़ की तस्वीर बनाने से पहले उसका निरीक्षण और अध्ययन कर लेना बहुत आवश्यक है। किसी वस्तु को देखते समय न केवल उसके रंग-रूप की ओर ध्यान देना चाहिये अपितु उसकी अन्य विशेषताओं का भी अनुभव करना चाहिये, जैसे, कठोरता, हमवारी, रंग आदि। इन विशेषताओं का ध्यान रख कर जो तस्वीरें बनाई जायंगी, वे जोरदार और प्रभावशाली होंगी।

जहां तक हो सके, बच्चों से आरंभ से ही रंगीन चित्र बनवाने चाहिये। यह विचार गलत है कि नये सीखे हुओं को रंग का प्रयोग और शेडिंग नहीं करना चाहिये और उनको केवल काली पेन्सिल से शक्लें बनानी चाहियें। छोटे बच्चे विशेष कर रंग पसन्द करते हैं और वे इनसे काम करना चाहते हैं।

2. समानुपातः—चित्रकारी में समानुपात उस सिद्धान्त को कहते हैं जिसके द्वारा हमें माप, अंतर, सुडौलपन और पृष्ठभूमि का ठीक अनुमान होता है। ये चीजें आवश्यकता के समय निरीक्षण करवा कर सिखलानी चाहियें। उदाहरण के लिये, यदि किसी तस्वीर में बच्चे ने मकान के दरवाजे पर मनुष्य दिखाया है या वृक्ष के पास लड़का बनाया है और उसमें समानुपात का ध्यान नहीं रखा तो उसे इस गलती का अनुभव कराना चाहिये। यह इस तरह किया जा सकता है कि आप बच्चों से पूछें—"क्या इस मकान में मनुष्य घुस सकता है? क्या लड़का इस वृक्ष के नीचे खड़ा हो सकता है?" ऐसे प्रश्नों से बच्चों को अपनी तस्वीर में समानुपात की आवश्यकता का अनुभव कराया जा सकता।

अंतर सिखाने के लिये शक्लों की तुलना करवानी चाहिये।

ो अलग-अलग शक्लों रंगों और किस्मों की चीज़ों के चित्र बनवाने चाहियें, जैसे, खजूर के पास मनुष्य, घड़े के पास गिलास आदि।

आरंभ में दूर और समीप की चीज़ों को चित्र में दिखाते समय बच्चे गलती करते हैं। जैसे जब बच्चे तस्वीर में आकाश और धरती को दो अलग अलग रंगों से प्रकट करते हैं तो उनको बीच की दूरी एक सिरे से दूसरे तक बराबर रखते हैं। इस भूल का अनुभव निरीक्षण द्वारा कराना चाहिये कि दूर दृष्टि दौड़ाने से आकाश और धरती मिले हुए दिखाई देते हैं और एक ही चीज़ निकट से देखने से बड़ी और दूर से देखने से छोटी मालूम होती है। बच्चों को सिखाना चाहिये कि तस्वीर में यह बात कैसे दिखाई जा सकती है। एक ही चीज़ की दो बराबर आकार की और एक-सी तस्वीरें बनानी चाहियें जिन में से एक निकट और दूसरी दूर रखी हो ताकि निकट की चीज़ दूर की चीज़ की तुलना में बड़ी और साफ दिखाई दे। बच्चों को बताया जाय कि चित्र में दूरी दिखाने के लिये दूर की चीज़ को पास की चीज़ से छोटा और अधिक ऊँचाई पर दिखाया जाता है। दूरी प्रकट करने का एक और ढंग है। पास के मुकाबले में दूर की चीज़ें अधिक भूरी या काली-सी दिखाई देती हैं। तस्वीर में रंग भरते समय इसका ध्यान रखना चाहिये। परन्तु रंग की यह समस्या बच्चों की समझ में देर से आती है। इसलिये शुरू में दूरी प्रकट करने के लिये केवल इतना काफी समझना चाहिये कि दूरी की चीज़ों को छोटा और तस्वीर में अधिक ऊंचाई पर दिखाया जाय। बेसिक स्कूल के पहले साल में तो शायद यह चीज़ भी न हो सकेगी क्योंकि छः-सात वर्ष के बच्चों में मुश्किल से इन सिद्धांतों को समझने और प्रयोग करने की योग्यता होती

है। इसलिये अध्यापक को इस के संबंध में जल्दी नहीं करनी चाहिये।

3. मनोभावों का चित्रण:—निर्जीव चीजें भी मनोभाव पैदा करती हैं, जैसे आग से डर, गंदे स्थान से घृणा, फूलों से प्रसन्नता पैदा होती है। मनोभावों को ठीक चित्रकारी सच्ची कला है। किसी चीज़ को तस्वीर बनाते समय उस भाव को अपनाने की आवश्यकता होती है जो इस चीज़ द्वारा प्रकट होता है, जैसे—बसन्त ऋतु खुशी और उमंग का मौसम है। इसकी तस्वीर बनाते समय कलाकार के मन में खुशी और उमंग होनी चाहिये। यदि उसके मन में वेदना और निराशा होगी तो उसकी तस्वीर बेजान होगी।

4. सौन्दर्य पैदा करने का अभ्यास:—इस के द्वारा चित्रकार मनोभावों को काबू में रख कर तस्वीर में सौन्दर्य और रौनी पैदा कर सकता है, इस लिए कि मनोभावों की अधिकता भी उतनी ही बुरी है जितनी कि उसकी कमी। मनोभावों का चित्रण करना और सौन्दर्य को पैदा करना कला में दो कठिन घड़ियाँ हैं जिन्हें निभाना केवल अनुभवी चित्रकारों का ही काम है।

5. समानता:—प्रकृति के कारखाने में बहुत-सी ऐसी चीजें हैं, जिनके रूप-रंग और चाल-ढाल में बहुत कुछ समानता होती है। जैसे, बिल्ली की शक्ल शेर से मिलती है, हिरण की चाल बिजली की तरह है, किसी मनुष्य के पाँव का रंग कमल के रंग जैसा हो सकता बताइये कि इस प्रकार की एक-सी चीज़ों की तलाश इनका ज्ञान पक्का होगा और तस्वीर बनाने और पैदा करने में सहायता मिलेगी।

6. रंग-मेल:—चित्रकारी का यह पक्ष रंग, ब्रुश और कला की अन्य चीज़ों का होशियारी से प्रयोग करना सिखाता है। इससे तस्वीर में संपूर्णता पैदा होती है, जो किसी अच्छे चित्रकार की सर्वोत्तम रचनाओं में पाई जाती है। बच्चों को रंग के प्रयोग के संबंध में बता देना चाहिए कि रंगों के 'हलकेपन' और 'गहरेपन' का ध्यान कैसे रक्खा जाता है। बाल, कोयला और काजल तीनों काले होते हैं परन्तु इन के कालेपन में बहुत अन्तर है।

रचना (Composition):—कला में रचना की बहुत महत्ता है। एक तस्वीर में विशेष चीज़ एक ही होनी चाहिये। दूसरी चीज़ें यदि हों भी तो, उस वास्तविक चीज़ के सहारे के लिए। थोड़े से स्थान में बहुत-सी चीज़ों का जमघट नहीं होना चाहिए। तस्वीर में जो विशेष चीज़ दिखानी हो, वह तस्वीर के बिल्कुल मध्य में नहीं होनी चाहिए अपितु केन्द्र से ज़रा हट कर होनी चाहिए। केन्द्र का अर्थ वह स्थान है, जहाँ आयताकार के आमने सामने के कोनों को मिलाने वाली रेखायें एक दूसरे को काटती हैं। तस्वीर में तीन या तीन से अधिक चीज़ें इस तरह नहीं दिखानी चाहियें कि वे एक सीध में दिखाई दें या तस्वीर को काटती हुई नज़र आयें या एक दूसरे के सामने या आपस में गुथी हुई मालूम हों। तस्वीर में उस के विभिन्न भागों के समतोल और रंगों की उपयुक्तता का ध्यान रखना भी आवश्यक है।

समतोल:—समतोल का सिद्धांत बच्चे आसानी से समझ सकते हैं. बच्चे चीज़ों के समतोल से बड़ी जल्दी परिचित हो जाते हैं। आपने छोटे-छोटे बच्चों को कहते सुना होगा—"यह पुस्तक गिरा-सा रहा है" या "यह मकान एक ओर झुका हुआ-सा है।" इन वाक्यों

से प्रकट होता है कि इन बच्चों में समतोल का अनुभव पैदा हो गया है। समतोल की दो किस्में हैं। एक तो वह, जिस में चीजें केन्द्र से बराबर दूरी पर होती हैं, जैसे मनुष्य का शरीर, वे इमारतें जिनमें दोनों ओर एक-जैसे कमरे और बरामदे होते हैं। समतोल की दूसरी किस्म वह है, जिस में चीजें केन्द्र से एक जैसी दूरी पर नहीं होतीं, जैसे प्राकृतिक दृश्य, वृक्ष आदि। इस प्रकार के समतोल को समझाने के लिए बच्चों का ध्यान उनके मनभाते खेल "झूला झूली" या "राजा और वजीर" की ओर मोड़ना चाहिए। अर्थात् यहाँ हलकी चीज केन्द्र से दूर और भारी चीज़ केन्द्र के समीप होती है। तस्वीर में इस नियम के प्रयोग का ढंग यह है कि अधिक आकर्षक और महत्वपूर्ण चीज़ को कम महत्व की चीज के मुकाबले में केन्द्र के समीप और उल्टी दिशा में रखना चाहिए। महत्ता और आकर्षण का आधार चीज़ की शक्ल-सूरत, आकार, रंग और मूल्य पर होता है। जो चीजें रंग-रूप में एक-सी होती हैं, वे दृष्टि को कम आकर्षित करती हैं। आयताकार कमरे में आयताकार मेज़ की अपेक्षा गोल मेज़ अधिक आकर्षक होती है। इस लिए तस्वीर में किसी चीज़ को अधिक महत्वशाली और आकर्षक बनाने के लिए उस को रंग-रूप या आकार द्वारा दूसरों से स्पष्ट कर देते हैं। परन्तु तस्वीर की विशेष चीज़ को स्पष्ट करने के लिए यह अच्छा नहीं समझा जाता कि इसके लिए जो रंग प्रयोग किया गया है, वह तस्वीर में और किसी स्थान पर न हो। यदि विशेष चीज़ को दिखाने के लिए देखे किसी रंग का प्रयोग आवश्यक ही हो तो इसके साथ मिलता-जुलता रंग तस्वीर में किसी दूसरी जगह भी लगाना चाहिए।

रवानी:—रवानी किसी चीज़ को बार-बार एक विशेष क्रम में दुहराने से प्राप्त होती है। फूल में रवानी है इस लिए इस की पंखड़ियाँ

में एक विशेष क्रम पाया जाता है। रवानी का अनुभव बच्चों में धीरे-धीरे उन्नति करता है इस लिए छोटे बच्चे प्रायः सूक्ष्म प्रकार की रवानी को समझ और सराह नहीं सकते। आरम्भ में इस के अभ्यास के लिए किताबों के टाइटिल या प्यालों के हाशिये या किनारे बनवाने चाहियें।

रंगों की उपयुक्तता:—लाल, पीला और नीला बुनियादी रंग हैं। इनसे दूसरे रंग बनाए जा सकते हैं। लाल और नीले रंग के मेल से बैंगनी रंग बनता है। पीला और नीला मिलने से हरा और लाल और पीला मिलने से नारंगी रंग बनता है। हरा रंग लाल रंग के मुकाबले का है, बैंगनी रंग पीले का और नारंगी नीले का। तसवीर को प्रभावशाली बनाने के लिए रंगों का प्रयोग किया जाता है। नीले रंग के नज़दीक लाल रंग बैंगनी रंग-सा लगता है। परन्तु बैंगनी और नारंगी रंग से लाल रंग मेल खाता है, इसी तरह दूसरे मेल खाने वाले रंग एक दूसरे को हल्का और प्यारा बना देते हैं। हर रंग के अनगिनत दर्जे होते हैं। गुलाबी, सिंदूरी, खून और कोयल की आँख का रंग आदि लाल रंग के अलग-अलग दर्जे हैं। इसी तरह बर्फ, दूध, चूना, मोती, सफ़ेद रंग के दर्जे हैं। हरा कहने से यह पता नहीं चलता कि किस प्रकार का हरा रंग है। परन्तु यदि हम मुश्क बेरिया तोता परी कहें, तो हमारे दिमाग में ठीक रंग का विचार आ जाता है कि यह वह रंग है जो तोते के पंखों का होता है। नीचे रंगों की एक सूची दी जाती है जिसके द्वारा अलग रंगों और उनके भिन्न भिन्न दर्जों को समझने में आसानी होगी :—

रंग	खनिज पदार्थ	पशु-पंछी और उनसे संबन्धित चीज़ें	वनस्पति और उनसे संबन्धित चीज़ें	अन्य चीज़ें
लाल	गर्म किया हुआ सुर्ख लोहा, सेन्दूर, मूँगा, गेरू, लाल मिट्टी, बजरी,	कोयल की आँख, मुर्गी की चोटी, तोते की चोंच, कबूतर के पैंजे	घोंगची, सेब, अनार के फूल, गुलाब, कुसुम के फूल, मरबेरी के बेर	चढ़ता हुआ सूर्य, अंगारा
नीला	तूतिया, नीलम, लाजवर्द	नीलकंठ, मोर, कौए का अण्डा	नील, नीला कमल	आकाश
पीला	सखिया, गंधक, पीली मिट्टी	मैना की चोंच और आँख	जूही के फूल, गेंदे के फूल, पक्का आम, हल्दी, केला	आग, क्लोरीन गैस
हरा	हरा कसीस, फिरोज़ा	तोता, हरा सांप, हरे रंग के टिड्डे	विभिन्न पत्ते, साग पात, तरबूज़, मूँग की दाल	
नारंगी			संगतरा, बड़ का गूलर	आग

बैंगनी या काशनी	पोटासियम परमैंगनेट (लाल दवाई)		बैंगन, कटेली के फूल, काशनी के फूल, सोसन के फूल	आयोडीन का धुंआ
भूरा		कुत्ता, गाय, घोड़ा	लकड़ी, तम्बाकू, इमली अलसी, गुड़, बादाम	ब्रोमीन का धुंआं
मटियाला	जस्त, सीसा, एलम्युनियम, स्लेट	जंगली कबूतर		
काला	लोहा, काजल, कोयला, ग्रेफ़ाइट	कोयला, कौआ, रीछ, बाल, सांप	तरबूज के बीज, शरीफे के बीज, आबनूस की लकड़ी	अन्धेरा, काले बादल
सफेद	चूना, संग-मरमर, खड़िया, चीनी मिट्टी, चांदी	बतख, मुर्गी का अण्डा, हंस, दूध, मोती, हाथी का दांत	सफेद कमल, मोतिया, कपास, चंबेली के फूल, चावल, कापूर	बर्फ

खाकी, चम्पई, सुआ-पँखी, किशमिशी, बादामी, उन्नाबी, स्लेटी, प्याज़ी, बैंगनी, आसमानी रंग ऐसे हैं जो अपने वास्तविक रंग के हवाले से ठीक तरह पहचाने जा सकते हैं। रंगों के ये नाम हमारे देश में बहुत प्राचीन समय से चले आते हैं।

ऊपर दी हुई सूची की चीज़ों में से जितनी चीज़ें सम्भव हों या इस प्रकार की और चीज़ें जो आपको मिल सकें, अपनी कक्षा में इकट्ठी कीजिये और बच्चों से भी इस काम में मदद लीजिये। जो चीज़ें आसानी से न मिल सकती हों या बहुत समय तक रखी न जा सकती हों, उनकी अच्छी-अच्छी तस्वीरें बना कर कमरे में लगानी चाहियें। इससे बच्चों को रंगों की किस्में समझने और उन्हें याद रखने में मदद मिलेगी। बच्चों से कहिये कि एक ही रंग की अलग-अलग चीज़ों के नाम बतायें और उन रंगों को कागज़ पर प्रकट करें। रंग के सम्बन्ध में यह करना लाभदायक होगा कि आप एक तीन पहलुवाले शीशे में से सूर्य की रोशनी को गुज़ार कर दिखायें कि वह रोशनी सात रंगों में बंट जाती है—लाल, नारङ्गी, पीला, हरा, नीला, आसमानी और बेगंनी।

प्रकृति की चीज़ों के रंगों का निरीक्षण कराने से रंगों के सम्बन्ध में सुरुचि पैदा की जा सकती है। आजकल कपड़ों और दैनिक प्रयोग की चीज़ों में जो भद्दे रंग दिखाई देते हैं, उसका एक कारण यह है कि प्राकृतिक निरीक्षण की कमी से लोगों की रसिकता का स्तर गिर गया है। उनके मन इतने भावहीन और कठोर हो गये हैं कि हलके रंग उन को भाते ही नहीं। बहुत-से लोग तेज़ भड़कीले रंग पसन्द करते हैं। बच्चों से कीड़े-मकौड़ों, फूलों और तितलियों के रंगों का निरीक्षण कराइये तो उनमें रंगों के मेल का [illegible] होगा।

सजावट के काम में और कक्षा में बहुत सारे रंगों का प्रयोग अच्छा नहीं समझा जाता। एक तस्वीर में एक ही रंग का महत्व होना चाहिये और अधिक से अधिक दो-तीन रंगों का प्रयोग होना चाहिये। परन्तु ये रंग उस महत्वपूर्ण रंग से मेल खाते हों। रंग को गहरा करने के लिये इस में काला रंग मिलाना ठीक नहीं। इस तरह रंग भद्दा और मैला हो जाता है। इस के लिये किसी और गहरे रंग का प्रयोग करना चाहिये, जैसे लाल रंग को गहरा करने के लिये थोड़ा-सा नीला रंग मिलाया जा सकता है और सफेद रंग को गहरा करने के लिये थोड़ा-सा बैंगनी रंग मिलाया जा सकता है।

ऊपर जिन नियमों के बारे में चर्चा की गई है, उन से बच्चों को परिचित कराने का ढंग यह है कि बच्चों में निरीक्षण और प्रयोग की आदत डाली जाय और किसी सिद्धांत को खुद बताने की जगह उसको सामूहिक चर्चा द्वारा स्पष्ट करना चाहिये। इससे न केवल समय की बचत होगी, अपितु बच्चों की अलग-अलग रायों से लाभ प्राप्त किया जा सकेगा। जब बच्चे किसी सिद्धांत को समझ जाएँ तो उसके अनुसार अपनी और पराई तस्वीरों को परखें कि उनमें कहां तक वह सिद्धांत पूरा होता है और वे यह भी पता करें कि वे उन्हें कैसे ठीक कर सकते हैं। बच्चे जैसे जैसे इन सिद्धान्तों को अपने काम में प्रयोग करने के योग्य हो जाएँगे, उनकी सौन्दर्य-अनुभूति उन्नति करती जाएगी और वे न केवल अपनी और दूसरों की तस्वीरों के मूल्य का अनुमान लगा सकेंगे अपितु उन में हर चीज की सुन्दरता को परखने और उसकी प्रशंसा करने की योग्यता पैदा हो जायगी।

संगीत

संगीत की आवश्यकता—बच्चे को सौन्दर्य-अनुभूति की शिक्षा में संगीत का स्थान ऊंचा है। इस से बच्चे को बड़ी प्रसन्नता होती है। बहुत छोटी आयु से ही बच्चा लय, स्वर और ताल से प्रभावित होने लगता है। जब माँ लोरी देती है तो बच्चे के चेहरे और हरकत से प्रकट होता है कि उसपर लोरी का प्रभाव हो रहा है। जब बच्चा कुछ बड़ा होता है तो दूसरों से सुनकर गीतों के बोल सीख लेता है और उन्हें अपने आप दुहराता है। बच्चे में संगीत द्वारा अपने मनोभावों को प्रकट करने की जो इच्छा होती है, उस को बच्चे की शिक्षा में व्यवहार में लाना स्कूल का काम है। यदि स्कूल में संगीत का प्रबन्ध न हो, तो डर है कि यही मनोभाव स्कूल से बाहर किसी बुरे ढंग से प्रकट किये जायेंगे। बच्चा इस योग्य नहीं होता कि वह स्कूल से बाहर जिन गीतों को सुनता है, उन में से अपने लिए अच्छे-अच्छे गीत चुन ले। इसलिए स्कूल में संगीत की शिक्षा का कुछ न कुछ प्रबन्ध होना चाहिए।

यदि बेसिक स्कूल में संगीत की शिक्षा का सुव्यवस्थित ढंग से प्रबन्ध न हो सके तो कम से कम इतना अवश्य होना चाहिए कि कुछ अच्छे गीत उचित लय और स्वर से गाने का अभ्यास बच्चों को करवाया जाय ताकि वे आवाज का ठीक प्रयोग सीखें, अलग अलग और मिल कर ऐसी स्वर में गा सकें जिस से वे खुद और सुनने वाले भी स्वाद प्राप्त कर सकें।

[illegible]—संगीत की शिक्षा में कई ऐसी कठिनाइयाँ हैं [illegible]

[illegible] आवश्यकता है।

1. किसी-किसी स्कूल में मुख्य अध्यापक को इस से दिलचस्पी नहीं होती।

2. कुछ सम्प्रदाय इसे अपनी परम्परा या धर्म के अनुसार बुरा समझते हैं।

3. स्कूल में संगीत के लिए काफी और उचित समय नहीं दिया जाता।

4. अधिकतर अध्यापक आप ही इस कला से परिचित नहीं होते।

इसमें सब से बड़ी कठिनाई यह है कि अध्यापक को खुद संगीत से कोई दिलचस्पी नहीं होती। यदि वह इस कला से थोड़ा बहुत परिचित हो और उसको संगीत से प्रेम हो तो दूसरी कठिनाइयों का मुकाबला किया जा सकता है। अध्यापक कम से कम यह कर सकता है कि बच्चों के गाने के लिए कुछ अच्छी कविताएँ, गाने आदि चुन दे और उनको अपने आप गाने का अभ्यास करने दे या इस काम में अपने किसी साथी की मदद ले जो संगीत से परिचित हो।

विषय-वस्तु :—जो कवितायें और गीत चुने जाएँ, वे मनोरंजक, सरल और सुगम होने चाहियें, क्योंकि बच्चों को बड़ों के मुकाबले में अधिक जल्दी जल्दी सांस लेना पड़ता है। इस लिए यह भी आवश्यक है कि इन गीतों के छंद (Metre) छोटे और लय-ध्वनि सुगम से सुगम याद रहने वाली हों। दिलचस्पी के विचार से कविताएँ ऐसी होनी चाहिएं जो बच्चों के दैनिक अनुभवों से सम्बन्धित हों, जिन्हें वे समझते हों। इसलिए शिशु, खेल मौसमों त्योहार, वृक्ष, पशु, और अन्य प्राकृतिक चीजों के बारे कविताएँ होनी

चाहिए। बड़ी कक्षाओं में कौमी गीत भी सिखाये जा सकते हैं।

विधिः—संगीत से बच्चों को अपनी सांस पर काबू रखना, साफ और ठीक उच्चारण करना, मीठी और सुरीली आवाज में कविता को भावसहित पेश करना सीखना चाहिए। बच्चों में गाने का शौक पैदा करने के लिए आवश्यक है कि पहले अध्यापक आप श्रेणी में उस कविता को उचित स्वर से गा कर सुनाएं।

गाना सिखाते समय जहां तक हो सके, बच्चों को अधिक आराम और सुगमता से खड़ा किया जाय। बाजू आसानी से ही लटकते रहें। बाजुओं को छाती पर बांधना या पीठ के पीछे बांध कर रखना उचित नहीं है क्योंकि इस तरह छाती की स्वतन्त्र गति में रुकावट पड़ती है। इसी तरह सिर झुकाए रखना भी ठीक नहीं, इसलिए कि इस तरह गले पर दबाव पड़ता है और वह बन्द होने लगता है, जिस से आवाज बुरी और भारी हो जाती है। ठोड़ी को भी आगे को रखने से गले के पट्ठे खिंच जाते हैं और आवाज में रुकावट होती है। इस लिए सिर को साधारण अवस्था में रखना चाहिये।

लय-ध्वनि सिखाने के लिए अध्यापक बच्चों को अपने साथ गाने के लिए कहे। अंत में बच्चे केवल उसी टीप के बन्द को अध्यापक के साथ, जो बार-बार दुहराया जाता है और गीत के दूसरे भाग भी अध्यापक के साथ गा कर याद कर लें। परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे अधिक ऊँची स्वर या आवाज से न गाएँ, क्योंकि इस तरह गला खराब होने का भय है। गले के पट्ठे, जिन से गाने का सम्बन्ध है, धीरे-धीरे पक्के होते हैं। बच्चों का इन पर आरम्भ में काबू नहीं होता।

जिन बच्चों को लय, स्वर और ताल का अनुभव नहीं होता, उन्हें छोटे छंद के लोक-गीत याद कराने चाहिएँ, जो आम लोगों में प्रचलित हैं। उनको अच्छे गीत सुनने का मौका दिया जाय, स्वर-ताल के खेल खिलाए जाएँ और देशी नाच में कदम मिलाने का अभ्यास कराया जाए।

शुरू में बच्चों के लिये लोक-गीत अधिक उपयुक्त हैं जो किसानों और चरवाहों के सीधे-सादे जीवन के काम और मनोभाव प्रकट करते हैं। इस प्रकार के गीत सारे संसार के बसनेवालों में प्रचलित हैं। गीत शताब्दियों में तैयार होते हैं और उन्हें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी अपनाती रहती है। इन में मनुष्यों के मनोभाव और कामनायें स्वाभाविक दशा में मिलते हैं और नाच के साथ इनका ताल-मेल होता है। ये अपनी जगह पर संगीत के अच्छे नमूने हैं। संगीत के बड़े-बड़े आचार्यों और विशेषज्ञों ने न केवल उन्हें पसन्द किया है, अपितु अपने सृजनात्मक काम में उनसे बड़ी मदद ली है। इसलिये उन्हें स्कूल की संगीत-शिक्षा में विशेष स्थान देना चाहिये। अध्यापक को चाहिये कि इर्द-गिर्द के आम गीतों में से ऐसे गीत चुन ले जो नैतिक और सांस्कृतिक दृष्टि से उपयुक्त हों और वे गीत बच्चों को सिखाए।

जिन बच्चों को संगीत से असाधारण लगाव हो, उनकी ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। इन्हें प्रोत्साहित करने के लिये कभी-कभी विशेष जलसे या अभिनय किये जा सकते हैं जिन में इन बच्चों को अपनी कला दिखाने का अवसर दिया जा सकता है। इनको गीत बनाने में प्रोत्साहन भी देना चाहिये।

अवसर और समय :—संगीत सिखाने के लिये प्रातः का

बहुत अच्छा है। दस-पन्द्रह मिनट के लिये यह काम कराना चाहिये। अभ्यास के लिये कुछ कौमी तराने और सामूहिक गीत याद कराने चाहियें जिन्हें स्कूल के शुरू होने से पहले सारे बच्चे मिल के गाएं। शिल्प-सम्बन्धी गीत काम करते समय धीमी आवाज़ में गाये जा सकते हैं। बहुधा गीत की लय और ताल से काम की थकावट मालूम नहीं होती। इसलिये मज़दूरों और किसानों में आम रिवाज है कि वे काम करते-करते अपना मनमाना राग अलापते रहते हैं। कुछ गीत शारीरिक व्यायाम करते समय गाये जा सकते हैं। इन के द्वारा व्यायाम में ताज़गी पैदा हो जाती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि मौसम विशेष-कर संगीत के लिये उपयुक्त हो जाता है। यदि किसी दिन पानी बरस रहा हो या बादल छाये हुए हों, तो बच्चों का दिल गाने को करता है। बाल सभा के साप्ताहिक और दूसरे जलसों में बच्चों को अपनी पसन्द के गीत सुनाने का अवसर देना चाहिये।

नाच :—संगीत से बच्चे में ताल का अनुभव होता है और वह स्वाभाविक ही उस के अनुसार अपने शरीर को हरकत देने लगता है। वह गीत के साथ-साथ पांव से भूमि पर या हाथ से किसी चीज़ पर ताल देता है, चुटकी बजाता है, ताली बजाता है, सिर हिलाता है आदि। इस लिये राग के उतार-चढ़ाव को शारीरिक हरकतों द्वारा प्रकट करने का ढंग सिखाना आवश्यक है।

बच्चों को प्रेरणा देनी चाहिये कि वे राग के साथ अपने शरीर की हरकत से मनोभावों को प्रकट करें। यह सत्य है कि बच्चों की हरकतें एक जैसी नहीं होंगी। परन्तु इसमें ... है। राग समाप्त होने पर हर बच्चे को, उसके

यत्न के लिये प्रशंसा करनी चाहिये। यदि बच्चे की गति गीत की लय और ध्वनि के अनुसार न हो तो उसका ठीक ढंग बताना चाहिये और उसका अभ्यास करना चाहिये।

इस के लिये काफी स्थान की आवश्यकता है। यदि कक्षा में कम स्थान हो, तो बाहर मैदान में यह अभ्यास कराना चाहिये। शुरू में बहुत आसान ताल चुनी जाय तो अच्छा है। बच्चों को इस ताल के साथ चलने, कदम मिलाने, दौड़ने, उछलने-कूदने आदि का अभ्यास कराना चाहिये। बच्चे गीत सुनें और उसकी ताल के साथ साथ अपने शरीर को हरकत दें। ठीक हरकत करनेवाला बच्चा पहले सब को दिखाये और फिर सारे बच्चे उसकी नकल करें। इस प्रकार का बहुत-सा काम शारीरिक शिक्षा के समय करवाया जा सकता है, जैसा कि पहले बताया जा चुका है। इस सम्बन्ध में चिड़ियों की गति और पशुओं की चाल की नकल कराना भी लाभदायक होगा।

लोक-गीत के साथ भी यह काम धीमी ताली, चुटकी, सिर हिलाने या अंगुलियों से किसी चीज़ पर थाप देने के द्वारा किया जा सकता है। कुछ गीत अभिनय के रूप में पेश किये जा सकते हैं और इन के साथ नृत्य भी सिखाया जा सकता है।

यह सारा काम स्वच्छन्द, आनन्दप्रद और स्वयंस्फूर्त होना चाहिये। बच्चों को हमेशा अपनी उपज और सूझ-बूझ से काम लेने का मौका देना चाहिये। सब बच्चों को किसी एक लकीर पर चलने के लिये मजबूर करना ठीक नहीं है।

बेसिक स्कूल का प्रबन्ध

स्कूल का प्रबन्ध ऐसा होना चाहिये कि इस में बच्चे की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिये अधिक से अधिक अवसर प्राप्त हों। इस में बच्चा निजी तौर भी बढ़ सके और सामूहिक तौर पर भी। इस बात को सामने रखते हुए स्कूल के प्रबन्ध की चर्चा नीचे दिये विषयों के अनुसार होगी:—

1. स्कूल की इमारत और आवश्यक सामान।
2. बच्चों के कार्य-कलाप।
3. अध्यापक और उसका काम।
4. टाइम-टेबल।
5. बच्चों के काम का रिकार्ड।
6. परीक्षा और जांच।
7. बच्चों के काम की प्रदर्शनी और जलसे।
8. स्कूल और गांव का सम्बन्ध।
9. हाज़री की समस्या।
10. स्कूल का अनुशासन।

1. स्कूल की इमारत और आवश्यक सामान.— बेसिक स्कूल

गांव के बाहर या ऐसी जगह होना चाहिये, जहां ताजा हवा और रोशनी काफी मात्रा में मिल सके। इमारत में दरवाजे और खिड़कियां इस तरह रखी जाएँ कि हवा और रोशनी के आने-जाने में किसी प्रकार रोक-टोक न हो। कक्षाओं की संख्या के अनुसार इमारत में काफी कमरे होने चाहियें।

श्रेणी का कमरा :—प्रत्येक विद्यार्थी के लिये इतना स्थान होना चाहिये कि वह आसानी से हिल-जुल सके और उसे काफी वायु और रोशनी प्राप्त हो सके। इंगलिस्तान के तालामी बोर्ड ने *सिफारिश की है कि 11 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिये* दस वर्ग फुट और इस से अधिक आयु के बच्चों के लिए 12 वर्ग फुट स्थान प्रति विद्यार्थी होना चाहिये, जब कि कमरा कम से कम 11 फुट ऊँचा हो और उस में बैठने के लिये मेज़ कुर्सी का प्रबन्ध हो। भारत सरकार के केन्द्रीय तालीमी सलाहकार बोर्ड की एक कमेटी ने सिफारिश की है कि प्राइमरी स्कूल में प्रति विद्यार्थी 10 वर्ग फुट और इस से बड़े स्कूलों में 12 वर्ग फुट प्रति विद्यार्थी स्थान होना चाहिये और कमरा कम से कम 12 फुट ऊँचा होना चाहिये। इस कमेटी की सिफारिश के अनुसार प्राइमरी स्कूल में श्रेणी का कमरा इतना बड़ा बनवाया जाय कि वह 40 बच्चों के लिये पर्याप्त हो। इससे ऊँचे स्कूल में कमरा अधिक से अधिक 35 बच्चों के लिये होना चाहिये। और कला या शिल्प के लिये कमरा दो-गुणा होना चाहिए।

हिन्दुस्तानी तालामी संघ, सेवाग्राम (वारधा) ने कताई की आवश्यकता को सामने रखते हुये बताया है कि बेसिक स्कूल में हर बच्चे के लिए कम से कम 16 वर्ग फुट जगह होनी चाहिये। इस तरह 20 बच्चों की कक्षा के लिए कमरे में $20 \times 16 = 320$

वर्ग फुट स्थान होना चाहिए और इस कमरे के अन्दर ऐसा प्रबन्ध होना चाहिये कि दस्तकारी का सारा सामान व्यवस्था और क्रम से रखा जा सके। दीवार में ऐसी अलमारियां बनाई जावें जिनमें तकलियां, तख्तियां और पूनियां आदि ढंग से रखी जा सकें।

सामान की व्यवस्था और बैठने का तरीका :—कमरे को इस ढंग से सजाना चाहिये कि इस में काम करने को जी चाहे। कमरे के सामान को काम के अनुसार अलग-अलग भागों में रखा जाय। बेसिक उद्योग, बागवानी, कला और पढ़ाई-लिखाई का सामान अलग-अलग स्थान पर ढंग से रखा जाय। बच्चों को कमरे में इस प्रकार बैठाया जाय कि वे कभी कम रोशनी में या ऐसी रोशनी में, जो सामने से आंखों पर पड़ रही हो या पीछे से आ रही हो, काम करने के लिए मजबूर न हों क्योंकि यह चीज उनकी आंखों के लिये हानिकारक है। रोशनी कमरे में सदैव बाईं ओर से आनी चाहिये।

दीवारों का रंग और सजावट :—सौन्दर्य और रोशनी दोनों का ध्यान रखते हुए कमरे की दीवारों पर उचित रंग करवाना चाहिये। कमरे की दीवारें हल्के बादामी या भूरे रंग से रंगी जाय तो उत्तम है। इस में आंख को हानि पहुँचने का कोई डर नहीं है। दीवारों पर सुन्दर तस्वीरें, चार्ट, डिजाइन आदि इतनी ऊँचे लगाए जावें कि बच्चे आसानी से उन से लाभ प्राप्त कर सकें। कुछ अध्यापक इस मामले में ठीक विचार से काम नहीं लेते। वे तस्वीरें इतनी ऊँची लगाते हैं कि बच्चे उनको भली प्रकार देख ही नहीं [illegible] ...बच्ची सारी दीवार को ही तस्वीरों से ढक देते हैं [illegible] भी ध्यान से नहीं देखा जा सकता। जो तस्वीरें

कमरे में लगाई जाएँ उनको सुचारु रूप से अच्छे कागज (Mount Papers) पर चिपकाना चाहिये। हाशिया ऊपर और दायें-बायें एक जैसा हो परन्तु नीचे अधिक चौड़ा हो। माऊंट का रंग फीका होना चाहिये ताकि तस्वीर के मुकाबले में अपनी ओर अधिक ध्यान न खींचे।

एक ऐसे स्कूल के लिये, जहां बेसिक उद्योग कताई हो, नीचे लिखे कमरों की आवश्यकता होगी।

पिंजाई का कमरा.—पिंजाई के लिये प्रति बच्चा 25 वर्ग फुट स्थान होना चाहिये। इस काम में बच्चों की कक्षा को दो भागों में बांटा जा सकता है। इस के लिए पिंजाई कमरा 10×25=250 वर्ग फुट क्षेत्रफल का होना चाहिये। पिंजाई के कमरों में तेज हवा नहीं आनी चाहिये। लेकिन इस में रोशनी आने का उचित प्रबन्ध होना चाहिये। इसलिये खिड़कियां शीशे की होनी चाहिये और ज्यादा ऊंचाई पर होनी चाहियें।

अन्य कामों का कमरा:—कपास ओटने, तकला सीधा करने, तकली, अटेरन आदि की मरम्मत करने के लिये एक और कमरे की आवश्यकता है। इन कामों के लिये प्रति बच्चा 16 वर्ग फुट स्थान चाहिये। यह काम भी कक्षा के दोनों भाग बारी-बारी कर सकते हैं। इसलिये यह कमरा क्षेत्रफल में 10×16=160 वर्ग फुट होना चाहिये।

सामान रखने का कमरा:—कपास, सूत, कपड़ा, औजार आदि रखने के लिए एक ऐसे कमरे की आवश्यकता है जिसमें चूहों और दीमक का डर न हो। इस काम के लिए 20 बच्चों की कक्षा के लिए 180 वर्ग फुट स्थान काफी होगा।

कताई की दस्तकारी के लिए जितने सामान की आवश्यकता होगी, उसकी सूची इस पुस्तक के अंत पर अन्तिका नं० 1 में दी गई है।

बागीचा और खेल का मैदान :—स्कूल के पास इतनी धरती अवश्य होनी चाहिये जिसमें स्कूल का बाग और खेल का मैदान बन सके। बेसिक तालीम में बागवानी का काम एक अनिवार्य क्रिया के रूप में रखा गया है। इसलिए बागीचे के नजदीक एक कुंआँ भी होना चाहिये। इससे बच्चे अपने कपड़ों की और शरीर की सफाई भी कर सकेंगे। कुएँ के पास नहाने-धोने का प्रबन्ध भी होना चाहिए जहां बच्चे आवश्यकता के समय स्नान कर सकें और कपड़े धो सकें।

2. बच्चों के कार्य-कलाप:—पढ़ाई-लिखाई, दस्तकारी और खेल के अतिरिक्त बेसिक स्कूल में कुछ ऐसे कार्य-कलापों का प्रबन्ध करना चाहिए, जिनमें बच्चे अपने शौक से भाग लें और जो उनकी मानसिक और सामाजिक शिक्षा में मदद दें। इन में से कुछ का वर्णन पहले भी किया जा चुका है।

बच्चों की पञ्चायत:—हमारे वर्तमान प्राइमरी स्कूलों के प्रबंध में बच्चों का बहुत कम भाग होता है। स्कूल के प्रबन्ध की सारी जिम्मेवारी मुख्य अध्यापक पर होती है, और वह अपनी आसानी के लिए, जिन अध्यापकों से उस जिम्मेवारी को पूरा करने के लिए मदद लेना चाहता है, लेता है। बच्चों के लिए जो नियम आदि बनाए जाते हैं, उनका उन्हें पालन करना पड़ता है। इसका नतीजा यह होता है कि बच्चे में आत्म-विश्वास, जिम्मेवारी, उपज, सूझ-बूझ, सहयोग आदि से काम करने की आदत नहीं पड़ती। यदि

न गुणों को पैदा करना है तो बच्चों को स्कूल के प्रबंध में शरीक
रना चाहिए। इसके लिए बच्चों की पंचायत होनी चाहिए जो
हूल में कई आवश्यक कामों, जैसे स्कूल की सफ़ाई, बच्चों के वस्त्र
गैर शरीर की सफ़ाई, पीने का पानी, व्यायाम और खेल, पुस्तका-
य आदि की देख-भाल कर सकती है। पंचायत के कार्यकर्ता प्रधान,
क्रेटरी और हर काम के लिए एक एक जिम्मेवार मेंबर को बच्चों के
ोट द्वारा चुना जाय। यदि यह चुनाव साल में दो बार हो तो अच्छा
। पंचायत की सभा मास में कम से कम दो बार अवश्य होनी
ाहिए जिसमें अलग अलग कामों के जिम्मेवार मेंबर अपनी अपनी
िपोर्ट पेश करें और बच्चे अपने अपने विचार प्रकट करें कि प्रबन्ध में
्याकमी रह गई है। यदि किसी मेंबर ने अपने कर्तव्य-पालन में सुस्ती
ी हो तो उसका ध्यान उस ओर कराया जाय। पंचायत का काम
ीक चलाने के लिए इसका पथ-प्रदर्शन और निगरानी एक अध्यापक
ो सौंप दी जाय। इस पंचायत के प्रबंध में कई काम जैसे बच्चों
ी अदालत, बच्चों का पत्र, बाल—सभा, ग्राम-सुधार आदि किये
ा सकते हैं।

बच्चों की अदालतः—बच्चे अपने मामलों को आप निप-
ाने के लिए अपनी अदालत स्थापित करें, जिस का एक जज और
ीन-चार सहायक चुने जाएँ। बच्चों के परस्पर झगड़ों का निर्णय
यह अदालत करे। इस अदालत की निगरानी भी एक अध्यापक के
जिम्मे होनी चाहिए क्यों कि कभी-कभी बच्चे जोश और क्रोध में
बहुत साधारण अपराध के लिए कठिन दंड दे देते हैं। ऐसी अवस्था
में अदालत का निगरान बच्चों के निर्णय को इच्छित सीमा के भीतर
रखने का यत्न करता है।

बच्चों का अखबार:—बच्चे अपने हस्तलिखित अखबार
निकालें। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, यदि हो सके तो
को महीने में दो बार नहीं तो एक बार अवश्य निकालना चाहि
इस अखबार में इस प्रकार की चीजें हो सकती हैं:—

बच्चों के लेख, बेसिक दस्तकारी की मासिक रिपोर्ट और गौम
खबरें, कक्षा, स्कूल, मुहल्ले और गाँव के स्वास्थ्य के बारे में सूचन
स्कूल के समाचार, जलसे, परीक्षण, अतिथियों का आगमन,
सपाटे का प्रोग्राम, गाँव का हाल, बच्चों की बनाई हुई तस
और कार्टून आदि।

इस समाचारपत्र को निकालने के लिए एक संपादक और
के दो-तीन सहायक चुने जाएँ। समाचारपत्र की तैयारी में सारे
बच्चे संपादक की मदद करें। उन्हें चाहिए कि वे अखबार के लि
मजमून लिखें और जो सुलेख कला में अच्छे हों वे इन लेख
को अखबार के लिए नकल करें। इसकी देख-भाल भी किसी अध्य
पक के जिम्मे होनी चाहिए ताकि अखबार समय पर निकल सके।

अखबार के दो अलग-अलग रूप हो सकते हैं। अखबार क
फाइल या किताब की शक्ल में बच्चों के पुस्तकालय में रखा जाय, ज
बच्चे उसे पढ़ सकें या इसके लेखों को काले तख्ते पर लिखा क
ऐसी जगह रखा जाय जहाँ उससे सारे बच्चे लाभ प्राप्त कर सकें।

बाल सभा:—स्कूल में बच्चों के सांस्कृतिक कार्य-कलापों के
लिए एक सभा स्थापित होनी चाहिए, जिसमें वे किसी विषय पर वाद-
विवाद कर सकें, अपने मन-माने किस्से-कहानियाँ सुनाएँ, कविताएँ
पढ़ें, गान गाएँ, ड्रामे करें आदि। इस सभा के कार्यकर्त्ताओं का
चुनाव भी बच्चे स्वयं ही करें। प्रति सप्ताह इसका जलसा होना

चाहिए और इस बात का यत्न करना चाहिए कि अधिक से अधिक बच्चे इस में भाग लें।

ग्राम-सुधार सभा:—स्कूल और गांव में गहरा सम्बन्ध पैदा करने के लिये आवश्यक है कि बच्चे गांव के जीवन को अच्छा बनाने के लिए क्रियात्मक भाग लें। यह काम भी एक सभा के अधीन हो तो अच्छा है। बच्चे आप इसका एक नेता चुनें। इसका मास में कम से कम एक प्रोग्राम अवश्य होना चाहिये। उदाहरण के लिए, गांव की गलियों और कुओं के इर्द-गिर्द की सफ़ाई, मलेरिया या किसी अन्य महामारी के समय बचने के उपाय, ग्राम-वासियों के ज्ञान और मनोरंजन के लिए जलसे आदि ऐसी चीज़ें हैं, जो इस सभा को करनी चाहिएं।

3. अध्यापक और उसका काम:—स्कूल का नया साल शुरू होने से पहले आवश्यक है कि अध्यापक उन सारी चीज़ों को अच्छी तरह देख ले जिनकी आवश्यकता तालीमी काम में पड़ेगी। स्कूल और कमरों की सफ़ाई, मरम्मत होने वाली चीज़ों को दुरुस्ती, सामान का प्रबन्ध आदि ऐसी चीज़ें हैं जिनकी ओर उसे ध्यान देना चाहिए। जहां तक हो सके वह स्कूल और कक्षा को आकर्षक और सुख-दायक बनाये। श्रेणी के कमरे को बच्चों की व्यक्तिगत और सामूहिक आवश्यकताओं के अनुसार व्यवस्थित करे, व्यवहार में आनेवाली चीज़ों को ठीक करवा ले, शिल्प के सामान को अच्छे ढंग से रखे, दीवारों को तसवीरों और चार्टों से सजाये, फूलदान में सुन्दर फूल लगाये।

पहली श्रेणी के अध्यापक के लिए ऊपर लिखी चीज़ों के अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि वह स्कूल खुलने से पहले गांव के लोगों से मिल-जुल कर उनके साथ सम्पर्क स्थापित करे और उनके

प्रेरणा दे कि वे अपने प्रवेश होने के योग्य बच्चों को स्कूल भेजें। स्कू खुलने पर जो बच्चे प्रवेश करें, उनके मनोरञ्जन के लिए खेल औ अन्य मनोरंजक क्रियाओं का प्रबन्ध करे। रेत का ढेर, रंगीन खड़िय मिट्टी, खिलौने, खेल का सामान, लकड़ी की चीजें, बागवानी क चीजें इकट्ठी करे। अध्यापक बच्चों के साथ स्वाभाविक व्यवहार कर और उनको नये वातावरण और काम करने के सामान से परिचि कराये। बच्चे अपने मन-भाते कामों में भाग लें। अध्यापक इस समय उनकी व्यक्तिगत रुचियों का निरीक्षण करे। इससे उसे आगे चल कर कक्षा के कामों में भी बड़ी मदद मिलेगी। पहले ही दिन से बच्चे स्कूल का अच्छा प्रभाव लेकर घर जायें और यह अनुभव करें कि स्कूल वास्तव में मिल-जुल कर रहने और काम करने का स्थान है।

काम भली प्रकार शुरू करना:—यदि अध्यापक कक्षा में पूरी तैयारी करके जाय कि उसको क्या कुछ करना है तो बच्चे पहले दिन से ही यह अनुभव करने लग जायेंगे कि वहां उन्हें अपना समय सार्थक क्रियाओं में व्यतीत करना है। बहुधा देखा गया है कि साल के शुरू में स्कूल खुलने पर लगभग एक दो सप्ताह तक कोई काम नहीं होता। यह बहुत बुरी प्रथा है। इस तरह अध्यापक और बच्चे में जो उच्छृंखलता और निष्क्रियता पैदा हो जाती है, उसे दूर करने में फिर बहुत समय लगता है। इस लिए अध्यापक को चाहिये कि वह पहले से ही काम का खाका तैयार कर ले कि वह शुरू में कौन-कौन से काम करायेगा और जहां तक हो सके, उस पर अमल करे। अच्छा हो यदि अध्यापक केवल साल के शुरू में ही नहीं, अपितु सदैव दैनिक या साप्ताहिक काम का प्रोग्राम पहले ही बना लिया करे और उसके समाप्त होने पर देख लिया करे कि उसमें कौन-कौन सी तब्दीलियाँ करनी पड़ी हैं और क्यों। इस तरह अध्यापक के

दूर से देखने और सुनने में कठिनाई होती हो। सब से लम्बे
के बच्चों को अंतिम कतार में बैठाना चाहिये। बच्चों के बैठने
जगह नियत करने से उठने-बैठने में गड़बड़ नहीं होती, हर
बच्चा दूसरे से टकरार बिना अपने स्थान पर आ बैठता है। श्या
पट को कक्षा में ऐसी जगह रखना चाहिये कि पूरी कक्षा पर लि
हुई चीजों को आसानी से पढ़ सके।

टाइम-टेबल:—बेसिक स्कूल में जिस प्रकार की शिक्षा दे
चाहिये, उसे सामने रखते हुए कोई ऐसा टाइम-टेबल नहीं बन
जा सकता है जिस पर सदैव अमल किया जा सके। बेसिक शि
में मजमून-वार शिक्षा नहीं होती कि हर मजमून के लिये अल
अलग घंटे नियत कर दिए जायें। यहां बच्चे किसी काम में ल
होते हैं और उस काम के बारे में जरूरी ज्ञान प्राप्त करते हैं जि
अध्यापक चाहे तो अलग अलग मजमूनों के रूप में बांट दे सक
है। यहां यह प्रश्न पैदा होता है कि क्या बेसिक स्कूल में किसी प्रक
के टाइम-टेबल की आवश्यकता नहीं? जब अध्यापक हाथ के का
और दूसरे कार्य-कलापों से लाभ उठा अनुबन्धित रूप में सभ
मजमूनों की शिक्षा देता है तो प्रत्येक विषय के लिये पहले से
प्रति दिन उतना ही समय निश्चित नहीं किया जा सकता। फिर भ
इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि किसी काम को लगातार बहु
समय तक करने के कारण बच्चे को शारीरिक हानि न पहुँचे औ
उनका दिल न उकताये। और दूसरे यह कि बच्चे दिये हुए समय
में कम से कम वे चीजें सीख लें जो उन्हें सीखनी चाहियें। इस
लिये आवश्यक है कि बच्चों के भिन्न-भिन्न कामों पर समय बां
मेंट ... बाद किया जाय कि प्रति दिन किस को कितना
दिया जाय। बेसिक स्कूल की आवश्यकताओं को देखते

हुए प्रति दिन समय की बांट कुछ इस प्रकार होनी चाहिये—

1. मूल उद्योग	2 घंटे
2. मातृभाषा	45 मिनट
3. गणित और दस्तकारी का रिकार्ड	45 ,,
4. सामाजिक शिक्षा और विज्ञान	30 ,,
5. बाग़बानी और कला	30 ,,
6. शारीरिक शिक्षा	1 घंटा

इस में कुछ हर्ज नहीं कि किसी दिन एक या अधिक मज़मूनों की शिक्षा न हो सके। परन्तु पूरी मुद्दत में हर मज़मून और काम को औसतन इतना समय मिल जाना चाहिये।

मूल उद्योग के लिये जितना समय बताया गया है, उसको अलग-अलग दो-तीन घंटों में बांटना चाहिये क्योंकि बच्चा एक ही काम इतने समय तक लगातार नहीं कर सकता।

शारीरिक शिक्षा के संबंध में स्वास्थ्य और सफ़ाई का काम सवेरे स्कूल खुलते ही होना चाहिए और व्यायाम और खेल दोपहर के बाद, स्कूल समाप्त होने पर।

काम करते हुए, जहां आवश्यकता हो, पांच दस मिनट की छुट्टी कर देनी चाहिए, ताकि काम करते जो सुस्ती और थकावट हो जाती है, वह दूर हो जाय और बच्चे फिर ताजा-दम हो कर दूसरा काम शुरू कर सकें। दूसरे इस समय में बच्चे पानी पी सकें या और आवश्यकतायें पूरी कर सकें। दोपहर को ज़रा अधिक समय के लिए छुट्टी होनी चाहिए (आधा घण्टा) ताकि उस समय बच्चे कुछ खा-पी और खेल सकें। यदि संभव हो, तो स्कूल में इस समय एक हल्के से भोजन (नाश्ता) का प्रबन्ध किया जाय।

बच्चों के काम का रिकार्ड:—बेसिक शिक्षा में बच्चों

के काम के रिकार्ड पर बड़ा ज़ोर दिया गया है। रिकार्ड से न केवल बच्चों के काम और उसकी गति का अनुमान लगाया जा सकता है अपितु इस से एक लाभ यह भी है कि यह बच्चों को उन्नति के लिए प्रोत्साहित करता है। जब बच्चा अपने पिछले रिकार्ड से रोज़ाना काम की तुलना करता है, तो उसमें आगे बढ़ने की इच्छा पैदा होती है। इस तरह वह प्रतिदिन अच्छे से अच्छा काम करने का यत्न करता है। दूसरों का मुकाबला करने से ईर्ष्या और जलन होती है परन्तु अपने कल के काम से आज के काम की तुलना करने से मनुष्य अच्छा बनता है। इसके अतिरिक्त रिकार्ड से एक लाभ यह भी है कि इसकी मदद से कक्षा के काम का एक स्तर नियत किया जा सकता है कि किसी काम में बच्चों की कितनी योग्यता होनी चाहिये। इस स्तर के अनुसार किसी बच्चे की योग्यता का अनुमान लगाना बहुत उचित है।

लिखाई, आर्ट और उद्योग के काम का रिकार्ड आसानी से रखा जा सकता है। लिखाई और आर्ट के लिये शुरू में बच्चों को अलग-अलग कागज़ देने चाहिएं। प्रत्येक कागज़ पर बच्चा अपना नाम और तिथि लिखे, काम समाप्त होने पर अध्यापक इन कागजों को अलग अलग फाइलों में रखदे या प्रत्येक बच्चे के काम को अलग गत्तों पर अलग ही इस प्रकार चिपका दे कि अलग-अलग कागजों को सुगमता से ही पलटाया जा सके।

उद्योग का रिकार्ड विशेष प्रकार के नक्शों में रखना चाहिए। कताई का रिकार्ड रखने के लिए कुछ नक्शों के नमूने किताब के अन्त में दिए गए हैं। देखिये परिशिष्ट नं० 2, 3, 4, 5।

3. परीक्षा और जाँचः—परीक्षा के वर्तमान ढंग में बड़े

दोष हैं, जैसा कि बुनियादी कौमी शिक्षा की प्रणाली में बताया ग
है। ये तरीके बच्चों के काम को अलग-अलग या स्कूल के काम
सामूहिक रूप में ठीक ठीक परखने में मदद नहीं देते। इस लिए इ
योजना में यह सुझाव दिया गया है कि पुराने ढंग की जगह परी
का ढंग यह हो कि बच्चों को एक कक्षा से दूसरी कक्षा में चढ़
समय उनके साल भर के काम का रिकार्ड देखा जाय और स
स्कूल के काम की परख इस प्रकार की जाय कि जिले का तालीं
बोर्ड साल में एक बार स्कूल की प्रत्येक कक्षा में कुछ बच्चों के
काम की नमूने के तौर पर पड़ताल करे। जहां तक हो सके, बच
से किसी कक्षा का पूरा काम या इसका बड़ा भाग दोबारा नहीं क
वाना चाहिए। यदि कक्षा में बहुत बच्चे स्तर से नीचे हों तो अध्याप
के काम की देखभाल करने की आवश्यकता है। यदि सारे स्कूल
बहुत सारे बच्चे कमजोर दिखाई दें, तो उसके प्रबन्ध की पड़त
करनी चाहिये और यदि जिले के सारे स्कूलों में काम का स्तर घटि
हो, तो यह समझना चाहिए पाठ्यक्रम में कोई दोष है और भिन्
भिन्न कक्षाओं के नियत किए हुए स्तर में कोई गलती है जिसे
करना चाहिए। यह किसी तरह भी उचित नहीं कि बच्चों से उ
कक्षा का काम दोहरवाया जाए। स्कूल के काम का अनुमान लगा
के लिए ऊपर बताये हुए नमूने को परखने के अतिरिक्त मूल उद्यो
में बच्चों की योग्यता देखनी चाहिए, और उन कामों की पड़त
करनी चाहिए, जो बच्चों और अध्यापकों ने गाँव या मुहल्ले के जी
को अच्छा बनाने के लिए किए हैं। यदि प्रति वर्ष एक जिले के
स्कूलों के काम की प्रदर्शनी की जाय, तो इस से काम का एक
निश्चय करने में बड़ी मदद मिलेगी।

ऊपर दी हुई बातों को सामने रखते हुए आपको चाहिए

के काम के रिकार्ड पर बड़ा ज़ोर दिया गया है। रिकार्ड से न केवल बच्चों के काम और उसकी गति का अनुमान लगाया जा सकता है अपितु इस से एक लाभ यह भी है कि यह बच्चों को उन्नति के लिए प्रोत्साहित करता है। जब बच्चा अपने पिछले रिकार्ड से रोज़ाना काम की तुलना करता है, तो उसमें आगे बढ़ने की इच्छा पैदा होती है। इस तरह वह प्रतिदिन अच्छे से अच्छा काम करने का यत्न करता है। दूसरों का मुकाबला करने से ईर्ष्या और जलन होती है परन्तु अपने कल के काम से आज के काम की तुलना करने से मनुष्य अच्छा बनता है। इसके अतिरिक्त रिकार्ड से एक लाभ यह भी है कि इसकी मदद से कक्षा के काम का एक स्तर नियत किया जा सकता है कि किसी काम में बच्चों की कितनी योग्यता होनी चाहिये। इस स्तर के अनुसार किसी बच्चे की योग्यता का अनुमान लगाना बहुत उचित है।

लिखाई, आर्ट और उद्योग के काम का रिकार्ड आसानी से रखा जा सकता है। लिखाई और आर्ट के लिये शुरू में बच्चों को अलग-अलग कागज़ देने चाहिए। प्रत्येक कागज़ पर बच्चा अपना नाम और तिथि लिखे, काम समाप्त होने पर अध्यापक इन कागज़ों को अलग अलग फाइलों में रखदे या प्रत्येक बच्चे के काम को अलग गत्तों पर अलग ही इस प्रकार चिपका दे कि अलग-अलग कागज़ों को सुगमता से ही उलटाया जा सके।

उद्योग का रिकार्ड विशेष प्रकार के नक्शों में रखना चाहिए। कताई का रिकार्ड रखने के लिए कुछ नक्शों के नमूने किताब के अन्त में दिए गए हैं। देखिये परिशिष्ट नं० 2, 3, 4, 5।

6. परीक्षा और जाँच:—परीक्षा के वर्तमान ढंग में बड़े

दोष है, जैसा कि बुनियादी कौमी शिक्षा की प्रणाली में बताया गया है। ये तरीके बच्चों के काम को अलग-अलग या स्कूल के काम को सामूहिक रूप में ठीक ठीक परखने में मदद नहीं देते। इस लिए इस योजना में यह सुझाव दिया गया है कि पुराने ढंग की जगह परीक्षा का ढंग यह हो कि बच्चों को एक कक्षा से दूसरी कक्षा में चढ़ाते समय उनके साल भर के काम का रिकार्ड देखा जाय और सारे स्कूल के काम की परख इस प्रकार की जाय कि जिले का तालीमी बोर्ड साल में एक बार स्कूल की प्रत्येक कक्षा में कुछ बच्चों के पूरे काम की नमूने के तौर पर पड़ताल करे। जहां तक हो सके, बच्चों से किसी कक्षा का पूरा काम या इसका बड़ा भाग दोबारा नहीं करवाना चाहिए। यदि कक्षा में बहुत बच्चे स्तर से नीचे हों तो अध्यापक के काम की देखभाल करने की आवश्यकता है। यदि सारे स्कूल में बहुत सारे बच्चे कमजोर दिखाई दें, तो उसके प्रबन्ध की पड़ताल करनी चाहिये और यदि जिले के सारे स्कूलों में काम का स्तर घटिया हो, तो यह समझना चाहिए पाठ्यक्रम में कोई दोष है और भिन्न-भिन्न कक्षाओं के नियत किए हुए स्तर में कोई गलती है जिसे दूर करना चाहिए। यह किसी तरह भी उचित नहीं कि बच्चों से उसी कक्षा का काम दोहरवाया जाए। स्कूल के काम का अनुमान लगाने के लिए ऊपर बताये हुए नमूने को परखने के अतिरिक्त मूल उद्योग में बच्चों की योग्यता देखनी चाहिए, और उन कामों की पड़ताल करनी चाहिए, जो बच्चों और अध्यापकों ने गाँव या मुहल्ले के जीवन को अच्छा बनाने के लिए किए हैं। यदि प्रति वर्ष एक जिले के सारे स्कूलों के काम की प्रदर्शनी की जाए, तो इस से काम का एक स्तर निश्चय करने में बड़ी मदद मिलेगी।

ऊपर दी हुई बातों को सामने रखते हुए मानना चाहिए कि

बच्चों को भली प्रकार समझा दें कि उनको किसी काम में किस स्तर तक पहुँचना है। यह जानने के लिए कि किसी बच्चे ने एक काम में किस सीमा तक उन्नति की है, उसकी बराबर जांच करते रहिये और उसे आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन देते रहिये और उसकी मदद करते रहिये। अपनी जांच के नतीजे को बच्चे के व्यक्तिगत रिकार्ड में दर्ज करते रहना चाहिए, ताकि उस के आधार पर बच्चे को वर्ष बीतने पर अगली कक्षा में चढ़ाया जा सके।

दस्तकारी के काम में यह भी हो सकता है कि श्रेणी का अध्यापक और बच्चे इस बात का हिसाब हर महीने के आरम्भ में लगा लिया करें कि उनको इस महीने में क्या-क्या करना है और कितनी योग्यता प्राप्त करनी है और इस बात की जांच मास के तीसरे सप्ताह के अन्त में कर लिया करें कि हर एक बच्चे को इस को पूरा करने में कितनी कमी रह गई है। यदि किसी बच्चे का काम इतना अधिक रह गया हो कि उसको शेष दिनों में पूरा करना कठिन लगे तो कुछ अधिक समय और दे कर इसको पूरा करने की कोशिश की जाए। आपको यह देख लेना चाहिए कि हर मास के अन्त में बच्चे वहां पहुँच गये है, जहां उन्हें पहुँचाना था।

7. बच्चों के काम की प्रदर्शनी और जलसेः— गाँव और पाठशाला में मेल-जोल पैदा करने के लिए पाठशाला में कभी कभी प्रदर्शनी और जलसों का प्रबंध करना लाभदायक सिद्ध होगा परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इन अवसरों पर जो चीजें पेश की जाएँ, वे बच्चों की अपनी कोशिश का फल हों, कोई भी चीज़ किसी दूसरे की लिखी या बनाई हुई न हो। प्रायः ऐसे अवसर[illegible] समय देकर बच्चों से तैयारी करवाई जाती है.

नको बिना समझे-बूझे भाषण और कवितायें रटाई जाती हैं और यह मझा जाता है कि इस से बच्चों के सरपरस्तों, माता-पिता और ग्राम ासियों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ेगा। परन्तु ऐसा करना ठीक हीं, क्योंकि इस अवस्था में बच्चे किसी चीज़ को सीखने के लिए हीं अपितु केवल दिखावे के लिए करते हैं, और इस तरह उनमें ठ और धोखे की आदत पड़ जाती हैं।

पाठशाला में कौमी और मौसमी त्यौहारों के मौके पर जलसे ौर प्रदर्शनियां करना अधिक उपयुक्त होगा। इन अवसरों पर च्चों द्वारा गांववालों को बुलावा देना चाहिये। कभी-कभी विनोद-भाएँ भी की जा सकती हैं, जिनमें यदि स्कूल के बच्चे और स्तीवाले मिलकर मनोरंजन का कार्यक्रम पेश करें तो अच्छा है।

8 **स्कूल और बस्ती का सम्बन्ध:**—आपके लिये यह बहुत ावश्यक है कि बस्तीवालों से बहुधा मिलते-जुलते रहें और नमें शिक्षा और स्कूल से लगाव पैदा करने की कोशिश करें। दि आप कभी-कभी बच्चों के माता-पिता से बच्चों की कठि-ाइयों और उनकी उन्नति के बारे में बातचीत करते रहें, तो इस देश्य में सफलता की आशा की जा सकती है। परन्तु इस बात ा ध्यान रखना चाहिये कि आप बस्तीवालों को अपने बराबर मझ कर मिलें। उनका विश्वास प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक कि आप उन्हें स्कूल के प्रोग्राम और काम से परिचित रखें और न्हें इस की महत्ता का अनुभव करायें, उनमें स्कूल के लिये दिलचस्पी दा करें कि वे पाठशाला के सम्बन्ध में जो कुछ और जब कभी छना चाहें, खुशी से पूछें। इस तरह बस्तीवालों का पाठशाला सम्बन्ध हो जायगा और स्कूल बस्ती के जीवन का एक महत्व-र्ण अंग बन जायगा।

अब तक स्कूल के काम को एक भेद की तरह रखने की जो कोशिश की गई है, वह पाठशाला, शिक्षा और बस्ती सब ही के लिये हानिकारक सिद्ध हुई है। अब आवश्यकता इस बात की है कि स्कूल के दरवाजे बस्तीवालों के लिये हर समय खुले रहें। बच्चों के माता-पिता को विशेष-कर स्कूल का काम-काज देखने के लिये कभी-कभी बुलाया जाय। परन्तु इसके लिये स्कूल के दैनिक काम में कम से कम परिवर्तन किया जाये, जिससे वे अपनी आँखों से देख सकें कि उनके बच्चों को क्या-क्या काम और कैसे-कैसे सिखाये जाते हैं। इस से माता-पिता को अध्यापक की कठिनाइयों का पता लगेगा और वे सहानुभूति-पूर्वक उस की मदद करने के लिये तैयार हो जायेंगे। याद रखिये कि ऐसे अवसरों पर स्कूल या कक्षा, जैसी वस्तुतः हो वैसी ही, दिखाई जाय। केवल तेज बच्चों के काम के अच्छे नमूनों को दिखाना उचित नहीं। क्यों कि इस से अध्यापक की चाल बच्चों को मालूम हो जाती है। माता-पिता को उनके बच्चों की योग्यता बढ़ा-चढ़ा कर बताना ठीक नहीं, क्योंकि इससे डर है कि माता-पिता अपने बच्चों से बड़ी-बड़ी आशायें करने लगेंगे, जो शायद अन्त में पूरी न हो सकें और उन्हें अध्यापक से इस कारण शिकायत हो जाय कि उसने उन्हें जान-बूझ कर धोखे में रखा।

अध्यापक को चाहिये कि वह बस्तीवालों के साथ सद्व्यवहार करे और उन्हें यह अनुभव न होने दे कि वह उन्हें मूर्ख और अपने आपको विद्वान् समझता है। वह उन की समझ-बूझ और अनुभव का आदर करे और जबरदस्ती अपनी बात मनवाने की कोशिश न करे।

स्कूल के अध्यापक बच्चों के घर जा कर उनके माता-पिता से

मिलने में अपना निरादर समझते हैं, क्योंकि उन के विचार में अध्यापक का काम स्कूल में समाप्त हो जाता है, और वे आशा करते हैं कि माता-पिता अपने आप उन की मदद करेंगे। परन्तु यह ठीक नहीं है। दुर्भाग्यवश हमारे देश में आज माता-पिता को अपने बच्चों की शिक्षा से इतनी दिलचस्पी नहीं है, जितनी होनी चाहिये। इसलिये वर्तमान अवस्था में अध्यापक का कर्तव्य है कि वह माता-पिता की ओर बढ़े और उनका सहयोग प्राप्त करने की कोशिश करे।

9. हाज़री की समस्या:—हाज़री का बाकायदा रिकार्ड रखना चाहिये। कुछ पाठशालाओं में, विशेष करके छोटे गांवों के स्कूलों में हाज़री की समस्या बड़ी उलझी हुई है। यदि स्कूल में बच्चों का दाखला कम हो तो इतना नुकसान नहीं होता जितना कि उस अवस्था में जब कि बच्चा दाखिल होकर रोज स्कूल न आए। यदि कुछ बच्चे हर सप्ताह में दो-चार दिन हाजिर रह कर बाकी दिनों में गैर-हाजिर रहें, तो सारी श्रेणी की शिक्षा पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है, विशेष करके इससे दस्तकारी का स्तर गिर जाता है।

गैर-हाजिरी के कई कारण हो सकते हैं—रोग, काम या घर की अवस्था, स्कूल की अवस्था, मौसम की विशेषतायें, इधर-उधर चक्कर लगाने की आदत, स्कूल से घर का दूर होना आदि। कभी बच्चा आप रोगी होता है, कभी उसके घर-वाले, जिस के कारण वह पाठशाला नहीं आ सकता। माता-पिता का धन्धा या काम बहुधा बच्चे को गैर-हाज़री के लिये विवश कर देता है। निर्धन किसान का बच्चा फसल बोने और काटने के समय स्कूल में हाजिर नहीं रह सकता, क्योंकि उस समय उसके माता-पिता अपने काम में उसकी मदद चाहते हैं। कुछ माता-पिताओं को शिक्षा के महत्व का अनुभव

लगभग एक ही आयु के बच्चे होंगे और इस कारण माता-पिता के मुकाबले में, जिन्हें अलग-अलग आयु के बच्चों से वास्ता पड़ता है, आपके यहाँ अनुशासन की समस्या आसान होनी चाहिये। परन्तु आपके सामने अनुशासन की भिन्न-भिन्न प्रकार की कठिनाइयां आयेंगी। आपके पास बहुत-से बच्चे हैं, और उनका संबंध समाज के अलग-अलग वर्गों से है इसलिये उनकी घरेलू शिक्षा में बड़ा अंतर होगा। कोई बच्चा, जिसका घर में आवश्यकता से अधिक लाड़-प्यार हुआ है, घमंडी और हठी होगा। जब कक्षा कोई काम करने का निर्णय करेगी तो वह उसको नहीं मानेगा और काम में रुकावट डालेगा। कुछ बच्चे ऐसे भी होंगे जिन्हें दूसरों को छेड़ने और सताने में मज़ा आता है और कुछ ऐसे होंगे जो वैसे तो चुपचाप रहते हैं, परन्तु मौका पाकर बड़ी-बड़ी शरारतें करते हैं। शायद कुछ बच्चे हर काम को जिम्मेवारी और तेजी से करने के आदी होंगे, और कुछ बच्चे ढीले-ढाले भी होंगे जिन पर हर चीज़ का प्रभाव देर से पड़ता है। वे सीखने में देर लगाते हैं, काम भी धीरे-धीरे करते हैं और यदि उनको कोई छेड़े या सताये तो उसको चुपचाप सहन कर लेते हैं। इस प्रकार अनुशासन की भिन्न-भिन्न समस्यायें आप के सामने प्रायः आती रहेंगी।

समाज की दशा के अतिरिक्त अनुशासन की खराबी का एक कारण यह भी हो सकता है कि बच्चे को अपने काम से संतोष प्राप्त न हो। जब अध्यापक बच्चे को प्रायः उस की योग्यता से ऊंचा काम देता है, और बच्चा बार-बार उसमें असफल रहता है, तो धीरे-धीरे उसको इस बात का अनुभव होने लगता कि वह कुछ नहीं कर ... इस अनुभव के कारण उसके व्यवहार में अनिश्चित ... सकते हैं अर्थात् या तो उसमें चुपके से औरों की नकल

करने की आदत पड़ जाती है या वह अपने और दूसरों के काम को बिगाड़ने का यत्न करता है, या काम-काज की चीजों को तोड़ने-फोड़ने लग जाता है ताकि किसी न किसी प्रकार औरों का ध्यान अपनी ओर खींच सके या वह अपने से कमजोर बच्चों को पीटने और सताने लगता है ताकि अपनी बड़ाई औरों पर प्रकट कर सके। ऐसी अवस्था में कई बार अध्यापक दण्ड, मार-पीट, व्यंग्य, डांट-फटकार से काम लेते हैं, परन्तु इस से बच्चे अपनी बुरी आदत नहीं छोड़ते अपितु बदनाम होने के बाद उनकी रही-सही लज्जा भी जाती रहती है और वे फिर खुल खेलते हैं। यदि आप अनुशासन स्थापित करना चाहते हैं तो बच्चों के अनुपयुक्त व्यवहार का वास्तविक कारण ढूंढने की कोशिश कीजिये और बच्चे को उचित काम दे कर उसको सफलता की प्रसन्नता प्राप्त करने दीजिये। यदि बच्चा यह अनुभव करने लग जाय कि कुछ ऐसे काम भी हैं जिनको वह सफलतापूर्वक पूरा कर सकता है और अपने साथियों और बड़ों की प्रशंसा का पात्र बन सकता है, तो वह बुरी बातों में अपनी शक्ति नष्ट करके दूसरों का ध्यान अपनी ओर खींचने की कोशिश नहीं करेगा। इस तरह यह भी संभव है कि बच्चे को उस क्षेत्र में थोड़ी सी सफलता प्राप्त हो जाय जिसमें निष्फल रहने के कारण उसने अनिश्चित व्यवहार शुरू कर दिया था। यदि उसे यह विश्वास हो जाये कि वह उस क्षेत्र में जितना अच्छा काम कर सकता है, कर रहा है तो उसको अपनी साधारण सफलता पर भी संतोष हो जायगा।

कभी-कभी अनुशासन इस कारण भी बिगड़ जाता है कि बच्चे को बहुधा उसकी योग्यता से घटिया या कम काम दिया जाता है। उससे वह संतुष्ट नहीं होता और वह अपनी शक्तियों के प्रयोग, व्यवहार और प्रकटन के लिये दूसरे मार्ग खोजता रहता है। इस

लिये आप को काम देते समय सदैव इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि वह काम बच्चे की शक्ति के लिये एक चैलेंज हो और वह उस में कोशिश करके सफलता प्राप्त कर सके।

बच्चों में मुकाबले की भावना कभी-कभी अनुशासन की समस्या पैदा करती है। जिस स्कूल में प्रसिद्धि प्राप्त करने का केवल एक-मात्र साधन परीक्षा में प्रथम दर्जे की सफलता है, उसमें मुकाबले की स्पिरिट से बहुत बुरे नतीजे निकलते हैं। वहां कक्षा में अव्वल आने से ही बच्चा संतुष्ट होता है। स्पष्ट है कि सारे बच्चे इस मान को प्राप्त नहीं कर सकते। केवल एक बच्चा ही इस मान का पात्र बन सकता है। ऐसी अवस्था में बच्चे के सामने चार मार्ग हैं— या तो वह कक्षा में अव्वल आए ताकि सारे लोग उसकी तारीफ़ करें या सब से कमजोर हो कि हर आदमी उस से सहानुभूति दिखाये या वह अध्यापकको अनुचित खुशामद करके उस का चहेता बनने की कोशिश करे या फिर वह 'विद्रोह' करके बुरे आचरणवालों की टोली में प्रसिद्धि प्राप्त करे। सौभाग्य से बेसिक स्कूल में इतने भिन्न-भिन्न कार्य-कलाप हैं कि उन में से किसी न किसी में प्रत्येक बच्चे को सफलता और नेकनामी करने का अवसर है। अब यह आपका काम है कि आप पता लगाएँ कि किस बच्चे में कौन-सी विशेषता और उसे उजागर करने के लिये क्या कुछ किया जा सकता है।

अनुशासन रखने के तरीके :—यदि स्कूल में बच्चे को काम में लगे रखने के लिये मनोरंजक क्रियायें हों और गैर-ज़रूरी पाबंदियां न हों तो अनुशासन रखना बड़ा सुगम होगा। ऐसी अवस्था में बच्चे अपने और अपने साथियों पर अनुशासन रखने की आवश्यकता आप ही अनुभव करने लगते हैं। जिस समय अध्यापक

या उनका कोई साथी कहानी सुनाता है या वे कताई का काम करते है या कोई बास-सभा में कविता पढ़ता या गीत गाता है तो वे समझते है कि चुप रहना सब के लिये लाभदायक है। ऐसे ही उनको खेलते समय खेल के नियमों के पालन की आवश्यकता प्रतीत होती है। या तो ऐसे नियमों का पालन हर बच्चा अपने आप ही करता है या सारे बच्चे मिल कर अपने में से ही किसी एक को चुन लेते हैं कि वह इस क्रिया को नियमानुसार कराने की ज़िम्मेवारी ले। इस तरह भिन्न-भिन्न कामों के लिये अलग-अलग मानीटर चुने जा सकते हैं और स्कूल के काम को भली प्रकार चलाया जकता है, जैसे—कक्षा की सफ़ाई और पीने के पानी की देख-रेख करना, दस्तकारी के सामान को सुव्यवस्थित ढंग से रखना आदि। थोड़े-थोड़े समय के पश्चात् अलग-अलग कामों के लिये नये मानीटरों का चुनाव कराके प्रत्येक बच्चे को कोई न कोई ज़िम्मेवारी दी जा सकती है। ज़िम्मेवारी लेने से आत्म-विश्वास और संयम के गुण पैदा होते हैं। सामूहिक कामों में भाग लेने से बच्चा अपने मनोभावों पर नियंत्रण रखना सीखता है।

अध्यापक को अपने अधिकार सोच-समझ कर व्यवहार में लाने चाहिये। वह ध्यान रखे कि सारी कक्षा और मानीटर अपने काम को भली भांति करें। बिना आवश्यकता के उनके काम में रोक-टोक न की जाए अपितु उन्हें अपना काम आप करने और अपने ऊपर काबू पाने के अवसर दिए जायें। जहां वे भटकें, उन्हें ठीक मार्ग बताया जाए। प्रायः किसी बुरी बात पर अध्यापक की अप्रसन्नता प्रकट होने से ही बच्चा ठीक मार्ग पर आ जाता है। परन्तु कुछ बच्चों पर ऐसे हल्के संकेत का प्रभाव नहीं होता। उन को ठीक मार्ग पर डालने के लिये अध्यापक को बड़े धैर्य से काम लेना पड़ता है,

उनका स्कूल में और बाहर निरीक्षण करके उनकी कठिनाइयों को समझने की कोशिश करनी पड़ती है और उनको ठीक रास्ते पर लाने में उनके माता-पिता की मदद लेनी पड़ती है।

अनुशासन और दंडः— ऊपर इस बात का इशारा किया जा चुका है कि दण्ड द्वारा ठीक अनुशासन पैदा नहीं किया जा सकता। जब दण्ड इसलिये दिया जाता है कि इस से बच्चा भविष्य में इस प्रकार का काम फिर नहीं करेगा, तो प्रायः इस में सफलता नहीं होती। इसी तरह कक्षा के सामने शर्मिन्दा करना या व्यंग से काम लेना यदि हानिकारक नहीं तो प्रभावहीन अवश्य है। छुट्टी हो जाने के बाद स्कूल में बच्चे को दण्ड के तौर पर रोकना या कुछ काम कराना भी लाभदायक नहीं है। इससे डर है कि कहीं बच्चे को स्कूल के काम से घृणा न हो जाय। बच्चे को कुछ देर के लिए कक्षा से बाहर निकाल देना भी उचित नहीं क्योंकि इस प्रकार बच्चे का नुकसान होता है, वह पाठ में पीछे रह जाता है और इसका भी डर है कि कुछ बच्चे काम से बचने के लिए अध्यापक को यह दण्ड देने के लिए विवश करें। कभी-कभी बच्चे को कुछ समय के लिए कक्षा से बाहर निकालने का प्रभाव अच्छा हो सकता है। यदि किसी बच्चे को बिना उचित कारण के क्रोध आ जाय और वह अपने किसी साथी से लड़ाई-झगड़ा करे, तो उसका यह इलाज हो सकता है कि उसे कक्षा से उस समय के लिए अलग कर दिया जाए, जब तक कि उस का क्रोध ठंडा न हो जाय। प्रायः देखा गया है कि बच्चे को अकेला छोड़ देने से उसका क्रोध जाता रहता है और इसके विपरीत यदि कोई उसके समीप रहे और उसे डांटे-फटकारे या उससे सहानुभूति दिखाये, तो उसका क्रोध भड़क उठता है। मतलब यह है कि

दण्ड देते समय बड़ी समझ-बूझ, सोच-विचार और धैर्य से काम लेना चाहिए।

यदि किसी मामले में दण्ड दिए बिना काम न चलता हो, तो यह बच्चे को दुःख देने के भाव से नहीं देना चाहिए। अपितु उद्देश्य यह होना चाहिए कि बच्चे का सुधार हो। वह अनुभव करे कि जो कुछ उसने किया है और जिस के लिए उसे दण्ड मिला है, वह बुरी बात है। यदि कोई जान-बूझ कर बुरी बात करे, तो उस पर नाराज़गी अवश्य प्रकट करनी चाहिए, परन्तु सब बच्चों के सामने नहीं, क्योंकि इस तरह उसे अपना अपराध मानने में झिझक होगी। इस लिए यह अच्छा है कि उसको भूल का अनुभव कराया जाय। यदि कोई बच्चा अपने अधिकार का उचित उपयोग न करे, तो उसका दण्ड यह है कि उसका अधिकार छीन लिया जाय। जो बच्चा छुट्टी की घंटी में दूसरों के मनोरञ्जन में रोक डाले या किसी अन्य ढंग से पाठशाला की शांति भंग करे, तो उसे छुट्टी न दी जाय। जो बच्चा अपने चाकू से स्कूल के सामान को खराब करे, उसका चाकू छीन लिया जाय। जो बच्चा कक्षा के काम में विघ्न डाले और दूसरों को काम न करने दे, उसे कक्षा के मनोरंजनों में शरीक न किया जाय। यह ज़रूरी है कि बच्चे के दिमाग में काम और उसके परिणाम, अपराध और उस के दण्ड का सबंध पक्का हो जाय और वह अनुभव कर ले कि उसे किस सिद्धान्त के अधीन दण्ड दिया गया है। केवल इस प्रकार ही सज़ा का अच्छा प्रभाव हो सकता है, नहीं तो नहीं। यह भी ज़रूरी है कि हर अवस्था में अध्यापक का व्यवहार सहानुभूतिमय, समान और न्यायपूर्ण हो। ऐसा न हो कि कभी एक बात पर अध्यापक बड़ी अप्रसन्नता प्रकट करे परन्तु किसी दूसरे मौके पर इसी प्रकार की बात पर ध्यान न दे

या एक बच्चे का कोई अपराध क्षमा कर दे परन्तु जब कोई दूसरा बच्चा वही अपराध करे तो उसे दण्ड दे दे।

अध्यापक को दण्ड क्रोधवश नहीं देना चाहिये। जब अध्यापक क्रोध से कांपता है, उस के चेहरे का रंग लाल हो जाता है और वह बच्चे को दण्ड दे देता है, तो चाहे यह दण्ड कितना ही उपयुक्त क्यों न हो, बच्चा उसे न्यायपूर्ण नहीं समझता। इस लिये उसका प्रभाव बुरा होता है।

शारीरिक दण्ड केवल उसी समय देना चाहिये जब सुधार का अन्य कोई साधन सम्भव न हो और इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि आवश्यकता से अधिक दण्ड न दिया जाय। प्रत्येक छोटी-मोटी भूल पर बच्चे को मारना-पीटना ठीक नहीं। डण्डे को आखिरी हथियार समझना चाहिये।

अनुशासन और इनाम – जैसे अनुशासन कायम करने में दण्ड का प्रयोग लाभकारी नहीं, उसी तरह इनाम का प्रभाव भी अच्छा नहीं होता। आजकल पाठशालाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार के इनाम देने का रिवाज है जिस से बच्चों में मुकाबले की बुरी भावना पैदा होती है और उनको काम से अधिक इनाम से दिलचस्पी हो जाती है और धीरे-धीरे वे इनाम प्राप्त करना ही अपनी शिक्षा का उद्देश्य समझने लग जाते हैं। दण्ड का डर और इनाम का लोभ दोनों अनुशासन के लिये हानिकारक सिद्ध होते हैं।

परन्तु कुछ इनाम ऐसे हैं जिनके देने में कोई हानि नहीं। इन से बच्चों में अपने आप को अच्छा बनाने की इच्छा पैदा होती । यदि कोई बच्चा अच्छी कहानी सुनाता है तो सारे बच्चे उसे , करते हैं और वे आप भी उसे दुहराते हैं। यदि यह

अच्छी कताई करता है तो सभी उसकी प्रशंसा करते हैं, यदि वह कोई काम तेजी से कर सकता है और उसे अपने साथियों से पहले समाप्त कर लेता है, तो शेष समय में उस को अपनी दिलचस्पी का और कोई काम करने का मौका मिल जाता है। यदि वह अपने साथियों की मदद करता है, उन से अच्छा व्यवहार करता है, उन के लिये अपने सुख की परवाह नहीं करता तो सारी कक्षा उस को आदर की दृष्टि से देखती है और वह कक्षा का नेता समझा जाता है। यह सब अपने काम का उचित इनाम है। अध्यापक को इस प्रकार के इनाम में कंजूसी नहीं करनी चाहिये। यदि किसी बच्चे ने कोई अच्छा काम किया है, उस का व्यवहार सराहनीय है, तो अध्यापक को चाहिये कि उसकी प्रशंसा करे और ठीक ढंग से उसका साहस बढ़ाये। परन्तु इस में यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि अध्यापक केवल उसी बच्चे की प्रशंसा न करे, जिसने कोई काम सब से अच्छा किया है अपितु उस बच्चे का भी साहस बढ़ाये जिस ने पहले से थोड़ी सी भी उन्नति की है।

अच्छा यह है कि बच्चों में अपने काम से इतनी दिलचस्पी हो जाय कि वे बिना किसी प्रकार के लोभ या रिश्वत के खुशी से अपना काम ठीक तरह करते रहें। जब बच्चा बचपन से निकल कर युवावस्था में पग रखे, तो उस में आत्मसम्मान की भावना पैदा हो जानी चाहिये, ताकि न उस को शारीरक दण्ड देने की आवश्यकता हो और न भौतिक इनाम की। उस समय अध्यापक को चाहिये कि वह विद्यार्थियों पर अपने आत्म-बल का प्रभाव डाले और उन के साथ मित्रता और पारस्परिक विश्वास का संबंध स्थापित करके उनको नैतिकता के ऊँचे मूल्यों से परिचित कराये।

परिशिष्ट नं० 1.

20 बच्चों की श्रेणी के लिये कताई का सामान

नम्बर नं०	सामान	संख्या
1.	ओटने की चर्खी	5
2.	सफाई ओटनी का सैट	10
3.	धनुष धुनकी	20
4.	धुनने और पूनी बनाने का सैट	10
5.	नलों भरने का सैट	5
6.	तकली	40
7.	अटेरन	20
8.	धनुष तकवा	20
9.	बढ़ई के औजारों का सैट	1
10.	छोटा तराजू बाटों सहित	1
11.	बड़ा तराजू बाटों सहित	2
12.	सूत की मजबूती निकालने का कांटा	1
13.	तकली का बक्स	20
14.	टीन का डब्बा	20
15.	अलमारी या संदूक	1
16.	धुनकी	10
17.	यरवदा चर्खा	10
18.	स्थानीय चर्खा	10
19.	तकवा ठीक करने का सैट	5

नोट :—कताई के सामान की यह सूची दस्तकारी के विशेषज्ञों की उस कमेटी की सिफारिशों के अनुसार है, जो हिन्दुस्तानी तालीमी संघ ने दस्तकारी के कार्यक्रम पर विचार करने के लिये नियुक्त की थी। इस कमेटी की राय है कि जिस पाठशाला में बुनियादी दस्तकारी कताई है, वहां कम से कम इतना सामान होना आवश्यक है।

परिशिष्ट न०. 2

कपास की सफाई

नाम विद्यार्थी ....श्रेणी..................मास......

तिथि	कपास खरीदी		कपास बेची		साफ कपास		घट (कमी)		कपास साफ करने का समय	
	तोला	आना	तोला	आना	तोला	आना	तोला	आना	घंटा	मिनट
जोड़:—										

महीने भर का काम..........................

कपास साफ करने का औसत प्रति घंटा...

परिशिष्ट नं० 3

कपास की ओटाई

नाम विद्यार्थी..................श्रेणी..................मास..................

तिथि	कपास सुखाई		सूखने पर रही		घट		ओटने में बची		ओटी		साफ रूई निकली		बिनौले		घट		समय	
	तो०	आ०	तो०	आ०	तो०	आ०	तो०	आ०	तो०	आ०	तो०	आ०	तो०	आ०	तो०	आ०	घं०	मि०
जोड़																		

महीने भर का काम..................
औसत प्रति घंटा..................

परिशिष्ट नं०. 4

धुनाई और पूनी बनाना

नाम विद्यार्थी....................श्रेणी............ मास.........

तिथि	रूई धुनी		पूनी बनी		घट		पूनियों की संख्या	काम का समय				साधन
								धुनाई		पूनी बनाना		
	तोला	आना	तोला	आना	तोला	आना		घंटा	मिनट	घंटा	मिनट	
जोड़:—												

नोट:—'साधन' के खाने में धुन की किसम लिखनी चाहिये।

महीने भर का काम.............................

औसत प्रति घंटा.............................

परिशिष्ट नं०, 3

कताई

नाम विद्यार्थी.................. श्रेणी.............. मास...........

तिथि	ली हुई पूनियां	शेष पूनियां	काती हुई पूनियां	कताई का तरीका	अटेरन पर पहले के तार	कुल तार	आज के कते हुए तार	कताई का समय		अटेरने का समय	औसत रफ्तार (अटेरने सहित) प्रति घन्टा
								घंटा	मिनट		
जोड़											

सूत का औसत नम्बर.......... काती हुई पूनियों की तोल........... मास का कुल काम........

,, की मजबूती .... घट (तोल में) .... तैयार सूत की तोल........

,, की समानता .... घट प्रतिशत ....

औसत गति प्रति घंटा........